

भोट-भारतीय ग्रन्थमाला - ५०

आचार्यनागार्जुनविरचितः

चतुःस्तवः

(संस्कृत पाठ, भोटीय संस्करण एवं हिन्दी अनुवाद)

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय नमो भगवते वासुदेवाय

नमो भगवते वासुदेवाय

नमो भगवते वासुदेवाय



भारत विद्या मंत्रालय

अनुवादक एवं सम्पादक  
जलछेन नमडोल (आचार्य)

पर्यवेक्षक  
प्रो० रामशङ्कर त्रिपाठी

केन्द्रीय उच्च तिव्वती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी

मुद्राब्द : २५४५

ख्रीस्ताब्द : २००९



## घोषणा-पत्र

**ग्रन्थ का नाम- आचार्य नागार्जुन प्रणीत चतुःस्तवः ।**

**ग्रन्थ का विषय-** इन चारों स्तोत्रों का प्रमुख विषय प्रतीत्यसमुत्पाद और शून्यता जैसे गम्भीर विषयों का स्तोत्र के माध्यम से निरूपण है। प्रतीत्यसमुत्पाद और शून्यता की देशना करने वाले भगवान् बुद्ध की इन स्तोत्रों द्वारा आचार्य नागार्जुन ने स्तुति की है।

बौद्ध जगत् में आचार्य नागार्जुन की सर्वाधिक प्रतिष्ठा एवं सम्मान है। बुद्धशासन की चिरस्थिति के लिए उन्होंने न केवल सूत्र, तन्त्र एवं शास्त्रीय विषयों पर महनीय रचनाएं की हैं, अपितु तान्त्रिक साधना विधि के द्वारा अद्भुत एवं असाधारण सिद्धियाँ भी प्राप्त की हैं। अतः उनकी द्वितीय शास्ता के रूप में ख्याति है।

आचार्य नागार्जुन के नाम से १४० से अधिक ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं। उन्हें हम सूत्र और तन्त्र इन दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। सूत्र में भी षड्युक्तिगण, स्तोत्रगण, परिकथागण आदि अनेक वर्ग संनिविष्ट हैं, उनमें प्रस्तुत ग्रन्थ 'चतुःस्तवः' स्तोत्रगण के अन्तर्गत परिगणित है। आचार्य ने लगभग १९ स्तोत्रों की रचना की है, उनमें से लोकातीतस्तव, निरौपम्यस्तव, अचिन्त्यस्तव तथा परमार्थस्तव- इन चार स्तोत्रों का संग्रह 'चतुःस्तवः' नाम से प्रसिद्ध है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में स्तोत्रों के मूल संस्कृत पाठ का चार विभिन्न पाण्डुलिपियों से तथा तिब्बती में अनूदित पाठ से मिलान करके यथासम्भव शुद्ध संस्करण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। साथ ही, प्रामाणिक तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन भी प्रस्तुत किया गया है। अपि च, जिज्ञासुओं की सुविधा के लिए हिन्दी-अनुवाद के साथ ग्रन्थ का सम्पादन किया है।

विस्तृत भूमिका में ग्रन्थगत स्तोत्रों के साथ स्तोत्रविषयक प्रचुर सामग्री भोटभाषा एवं हिन्दी भाषा में दी गई है। ग्रन्थ-सारांश में महत्त्वपूर्ण तथ्य एवं उनकी पृष्ठभूमि पर पर्याप्त विचार-विमर्श प्रस्तुत किया गया है। ग्रन्थ के अन्त में बुद्धवचन एवं उनकी टीकाग्रन्थों में उपलब्ध तथा अन्य शास्त्रीय ग्रन्थों में उपलब्ध लगभग ९०० से अधिक बौद्ध स्तोत्रों की विशाल सूची संस्कृत और भोटभाषा में दी गई है। इस तरह सौभाग्य से यह ग्रन्थ स्तोत्रविषयक जानकारी के लिए अद्वितीय एवं महत्त्वपूर्ण बन गया है।

**लेखक का नाम और पता :**

ज्ञलछेन नमडोल, आचार्य

३/१६, स्टाफ कालोनी, तिब्बती संस्थान,

सारनाथ, वाराणसी-२२१००७, उ.प्र.

**संस्थान का नाम (जिसमें लेखक कार्यरत है) :**

केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय \*\*\*\*\*)

**लेखक का प्रमाण-पत्र :**

- (क) मैं प्रमाणित करता हूँ कि मेरी उपर्युक्त रचना मौलिक/अनूदित/नवीन व्याख्या/प्रामाणिक अनुवाद के साथ प्रथम बार वर्ष २००१ में प्रकाशित हुई है।
- (ख) यह रचना शोध ग्रन्थ है/नहीं है।
- (ग) मैं जन्म से उत्तर प्रदेश का निवासी हूँ/गत दस वर्षों से उत्तर प्रदेश में रह रहा हूँ।



चतुःस्तवः  
བསྟོད་པ་རྣམ་པ་བཞི།







BIBLIOTHECA INDO-TIBETICA SERIES - L

CATUḤSTAVAḤ  
of

Ācārya Nāgārjuna

(Sanskrit text with Tibetan version and Hindi translation)



Translated and critically edited by  
*Gyaltzen Namdol, Ācārya*

Supervisor  
*Prof. Ram Shankar Tripathi*

CENTRAL INSTITUTE OF HIGHER TIBETAN STUDIES  
SARNATH, VARANASI

B.E. 2545

C.E. 2001



BIBLIOTHECA INDO-TIBETICA SERIES - L

**Chief Editor:** *Prof. Geshe Ngawang Samten*

**Publication Incharge:** *Samten Chhosphel*

**First Edition:** 550 copies, 2001

**Price:** Hardback: Rs. 190.00  
Paperback: Rs. 130.00

© Central Institute of Higher Tibetan Studies, Sarnath -221007  
Varanasi (U.P.) India 2001. All rights reserved.

**Publisher:**

Central Institute of Higher Tibetan Studies,  
Sarnath, Varanasi-221007, India.

---

**Printed** at Surabhi Printers, Maldiya, Varanasi



आचार्यनागार्जुनविरचितः

चतुःस्तवः

(संस्कृत पाठ, भोटीय संस्करण एवं हिन्दी अनुवाद)

ॐ । वदनां नन्देन सौम्यं शुभं गृह्यते मन्दं चरि  
वदनां सौम्यं चरि  
वदनां सौम्यं ॥



अनुवादक एवं सम्पादक  
ज्ञलछेन नमडोल ( आचार्य )

पर्यवेक्षक  
प्रो० रामशङ्कर त्रिपाठी

केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी

प्रधान सम्पादक : प्रो० गेशे नवङ समतेन

प्रकाशन प्रभारी : श्री समतेन छोस्फेल

प्रथम संस्करण : ५५० प्रतियाँ, २००१

मूल्य : सजिल्द : १९०.००  
अजिल्द : १३०.००

© केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान,  
सारनाथ, वाराणसी - २२१००७, २००१  
प्रकाशक सम्बन्धी सभी अधिकार सुरक्षित ।

प्रकाशक :  
केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान,  
सारनाथ, वाराणसी-२२१००७

---

मुद्रक : सुरभि प्रिन्टर्स, मलदहिया, वाराणसी ।



## དབར་སྐྱོན་པའི་ཆེད་བཟློག།

༡༡། །སངས་རྒྱུས་བྱང་མེས་དང་དབྱ་བཙམ་པ་སོགས་མངོན་པར་བསྟོན་ཡུལ་དུ་  
གྱུར་པའི་སྐྱེས་མཆོག་རྣམས་ཀྱི་སྤྱོད་མེད་པའི་ཡོན་ཏན་རྣམས་ལ་ཤེས་ནས་དད་པ་ཐོབ་  
པའི་རྒྱན་བྱས་ནས་ཞིང་བྱད་པར་ཅན་དེ་དག་ལ་སྤྱོད་ཐག་ཉེ་བའི་མོས་གུས་དང་། རེ་ལྟོས་  
བཅའ་བའི་བསམ་པས་ཀྱན་ནས་སྤངས་ཏེ། དད་གུས་ཆེན་པོས་བསྐྱགས་པ་རབ་དུ་  
བཟློག་པ་ནི་བསྟོན་པ་ཡིན་ལ། དེ་ལ་ཡང་དད་པ་གཙོ་བོར་བྱས་པའི་བསྟོན་ཚུལ་དང་།  
རིགས་པ་ཡང་དག་གི་ལམ་ནས་ཆད་མས་ངེས་པ་བྱངས་པའི་སྟོན་ནས་བསྟོན་པའི་བསྟོན་  
ཚུལ་གཉིས་ལས། རང་པ་སངས་རྒྱུས་པའི་གསུང་རབ་དགོངས་འབྲེལ་རྣམས་སུ་  
གསལ་བའི་རྒྱ་ཆེ་ཞིང་རྣམ་གྲངས་མང་བའི་བསྟོན་པ་པལ་ཆེ་བ་བསྟོན་ཚུལ་གཉིས་ལས་  
ཕྱི་མའི་དབང་དུ་བྱས་པ་གཙོ་ཆེ་བ་ཡོད། སྐབས་འབྲེལ་སྟོབ་དཔོན་གྱི་གཞུང་འདི་དག་  
ཀྱང་སྡེ་ཆཅ་དེར་གཏོགས་པ་གསུག་ཡིན། དེ་དག་གི་བསྟོན་ཚུལ་ལ་ཡང་ཆོག་སྟོར་ཕུན་  
སུམ་ཆོགས་པའི་རྒྱན་གྱི་ཉམས་དང་སྟོར་བ་མད་དུ་བྱང་བས་རབ་དུ་བརྒྱན་ཅིང་སྟུང་མ་  
སྟུང་ཅི་རིགས་ཀྱི་ཐོག་བཅད་ལྷག་སྟེལ་མ་གང་རུང་གི་ཚུལ་དུ་འཕགས་བོད་ཀྱི་མཁས་  
པ་མང་པོས་བསྟོན་པའི་རྣམ་གྲངས་རྒྱ་ཆེ་བརྩམས་པར་མཛད་ཡོད། སྟོན་བསྟོན་ཡུལ་གྱི་  
ཞིང་དང་བསྟོན་པ་མཛད་པ་པོ་གཉིས་ཀའི་ཆ་ནས་བརྟག་ན་མཐོས་སངས་རྒྱུས་ནས་  
དམའ་ས་སོ་སྟེ་ཐ་མལ་པའི་བར་གྱི་གང་ཟག་དག་ཀྱང་འདུས་ཡོད།

སྟོབ་དཔོན་ཁྱུ་སྟུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་སྐབས་འབྲེལ་གྱི་གཞུང་“བསྟོན་པ་བཞི་པ་”  
ཞེས་པའི་ཐ་སྟོན་དེ་རང་རེ་གངས་ཅན་པའི་མཁས་པ་རྣམས་ལ་གྲགས་ཆེ་བ་ཞིག་ཡིན་

བར་མི་མངོན་ལ། ཐ་སྐད་དེ་ཇི་ལྟར་བྱུང་ཚུལ་གྱི་ཐད་ལ་སྤྱིར་སློབ་དཔོན་གྱིས་མཛད་  
 པའི་བསྟོད་པའི་གཞུང་ཇི་སྟེན་ཅིག་ཡོད་པ་ལས། འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པར་བསྟོད་པ་  
 སོགས་གཞུང་བཞི་པོ་ཁོ་ན་ཟུར་འདོན་གྱིས་དེ་དག་ལ་ཐ་སྐད་དེ་ལྟར་བཏགས་དགོས་  
 པའི་རྒྱ་མཚན་དང་རྒྱབ་ལྗོངས་ཀྱི་བྱུང་རིམ་ལོ་རྒྱུས་སོགས་ལ་ངས་གཏན་ཆེ་བ་མངོན་  
 དཀའ་ན་ཡང་། སློབ་དཔོན་གྱིས་མཛད་པའི་གཞུང་བཞི་ལྟར་ཅིག་ཏུ་ལེགས་སྒྱུར་རང་  
 སྐད་ཀྱི་ཐོག་ཉམ་མེད་ཀྱི་ཚུལ་དུ་རྟེན་སོན་བྱུང་བ་ནི་གལ་འགངས་ཆེ་བའི་གནས་སུ་  
 མངོན་ཏེ། ཇི་ལྟར་དེང་གི་དུས་སུ་སངས་རྒྱས་ཀྱི་གསུང་རབ་དགོངས་འབྲེལ་དང་  
 བཅས་པའི་ཕྱག་དཔེ་རྣམས་ཐོག་མའི་ལེགས་སྒྱུར་རང་སྐད་ཐོག་ཆ་ལག་ཚང་ཞིང་  
 ཉམས་མེད་ཀྱི་ཚུལ་དུ་བཞུགས་པ་ཆེས་དཀོན་ཞིང་མཁོ་གལ་ཆེ་བ་ལྟར་སློབ་དཔོན་གྱིས་  
 མཛད་པའི་གཞུང་དག་ཀྱང་དེ་བཞིན་ཡིན་ལ། བསྟོད་པའི་གཞུང་བཞི་པོ་འདི་དག་ཏུ་  
 སངས་རྒྱས་བཙུག་ལྟར་འདས་ཀྱིས་ཟབ་མོ་སྟོང་དང་རྟེན་འབྱུང་གི་ལྟ་བུ་ཇི་ལྟར་བསྟན་  
 པའི་ཚུལ་ལ་ཐུགས་རབ་ཏུ་འཕྲོག་པའི་སློ་ནས་སློབ་དཔོན་གྱིས་གནད་དོན་དེ་ཉིད་གཞུང་  
 གི་བཅོད་བྱའི་གཙོ་བོར་བཟུང་བའི་སློ་ནས་བསྟོད་པ་མཛད་ཡོད།

གཞུང་འདི་དག་གི་ཐོག་ལ་འདི་གའི་གཙུག་ལག་སློབ་ཁང་གི་ཉམས་ཞིབ་སྡེ་  
 ཚན་གྱི་ཙོམ་སྤྱིག་ལས་རོགས་ཅན་པ་རྒྱལ་མཚན་རྣམ་གྲོལ་ལགས་ཀྱིས་ལེགས་སྒྱུར་གྱི་  
 ཙོ་གཞུང་རྣམས་བོད་དཔེ་དང་མཚུངས་བསྒྱུར་དང་། དེ་བཞིན་བོད་དཔེ་རྣམས་དཔར་མ་  
 ཁག་དང་འདྲ་བསྒྱུར་བསྒྱུར་ཞིབ་དང་འབྲེལ་ཉིན་སྐད་ཐོག་ཕབ་བསྒྱུར་དང་། རྗེང་བཅོད་  
 ཞིབ་རྒྱས་བཙུགས་པ་དང་སྤྱུགས། སྤྱིར་བོད་སྐད་དང་ལེགས་སྒྱུར་སྐད་ཐོག་བཞུགས་  
 པའི་ནང་པའི་བསྟོད་པའི་སློར་ལ་ཞིབ་ཆགས་པོའི་ཉམས་ཞིབ་དང་འབྲེལ་བསྟོད་ཆོགས་



ཁག་གི་དཔེ་ཐོ་གང་གྱུས་བཞེད་གྱི་འབད་ཚུ་ལ་གནང་ཡོད་པར་ལེགས་སེའི་བསྐྱབས་བཞེད་ཡོད།

ཕབ་བསྐྱར་དག་ཞུས་སོགས་ཀྱི་ལས་དོན་གྱི་ཐོག་ལ་ནང་ཚོས་རིག་གཞུང་གི་སྐོར་ལ་དོན་གྱི་མཁས་པ་བཞི་ཏེ་རྒྱལ་མཁུར་ཏིལ་ཏིལ་མཆོག་གིས་ཐུགས་འཁུར་ཆེ་བཞེས་ཀྱི་སྐོན་ས་རོགས་མགོན་དང་ལམ་སྟོན་གྱི་ཆེ་གནང་བར་ཐུགས་རྗེ་ཆེ་ཞུ་གྱུ་ཡིན། དེ་བཞིན་དཔར་སྐྱུན་སྡེ་ཆོན་གྱི་འགན་འཛིན་ལས་རོགས་ཀྱིས་དཔེ་དཔར་འདི་ཉིད་དུས་ཚོད་ངེས་ཅན་ནང་དཔར་བསྐྱུན་ཐུབ་པར་རྗེས་སུ་ཡི་རང་ས་ཡོད།

ད་རེས་གཙུག་ལག་སློབ་ཁང་ནས་དོན་གཉེར་ཅན་ནམས་ཀྱི་དགོས་འདུན་བསྐྱར་བའི་ཆེད་བསྟོད་པ་ཐུགས་བསྐྱུས་བགྱིས་བའི་གཞུང་འདི་དཔར་བསྐྱུན་གྱི་ལམ་ནས་འབྲེལ་སྤེལ་བགྱིས་པར་སློབ་དཔོན་ལྷ་སྐྱབ་ཀྱི་ལྷ་གྲུབ་དང་ནང་བའི་བསྟོད་པའི་སྐོར་ལ་གྱི་ཆེའི་མཁུན་རྟོགས་ཡོང་བའི་རེ་སྟོན་བཅས་གཙུག་ལག་སློབ་ཁང་གི་ངེས་སྟོན་པ་དགེ་བཤེས་ངག་དབང་བསམ་གཏན་གྱིས། གྱི་ལོ་ ༢༠༠༡ ཟླ་ ༡༢ ཚེས་ ༡༠ དགའ་ལྷན་ལྷ་མཆོད་ཆེན་མོའི་དུས་ཚོས་བཟང་པོར་གྱིས་པ་དགོའོ།

## प्रकाशकीय

बुद्ध, बोधिसत्त्व, अर्हत् आदि स्तुतिक्षेत्रों अर्थात् स्तुत्य जनों के महनीय गुणों के प्रति अवेत्यप्रसाद से युक्त होकर उनसे निकटतम भावना और अनुग्रह की इच्छा से समुत्थित श्रद्धा एवं सम्मान के साथ प्रशंसान्वित वचनात्मक उद्गार ही 'स्तोत्र' कहलाते हैं। वे भी श्रद्धाप्रधान और प्रज्ञाप्रधान के भेद से दो प्रकार के होते हैं। इनमें से बौद्ध धर्म एवं दर्शन से सम्बद्ध आगम और शास्त्रों में विद्यमान अधिकांश स्तुतियाँ युक्ति और प्रमाण से समन्वित होने के कारण द्वितीय वर्ग अर्थात् 'प्रज्ञाप्रधान' वर्ग में परिगणित होती हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ इसी वर्ग में सम्मिलित है। इन स्तोत्रों में भी मधुर एवं मनोरम शब्दालङ्कारों और अर्थालङ्कारों से युक्त होना अथवा नहीं होना आदि अनेक प्रकार हैं। उनमें भी गद्यात्मक, पद्यात्मक और मिश्रित आदि अनेक भेद हैं। स्तुतिकर्ताओं में भी परम श्रेष्ठ बुद्ध से लेकर सामान्य पृथग्जन पर्यन्त अनेकविध पुद्गल दृष्टिगोचर होते हैं।

आचार्य नागार्जुन द्वारा प्रणीत प्रस्तुत ग्रन्थ का 'चतुःस्तव' यह नामकरण तिब्बती विद्वत्परम्परा में अधिक प्रसिद्ध नहीं प्रतीत होता। यद्यपि आचार्य ने अनेक स्तोत्रों की रचना की है, उनमें से लोकातीतस्तव आदि इन चार स्तोत्रों को ही क्यों एक साथ रख कर उनका 'चतुःस्तव' यह नामकरण किया गया है? इसका कोई ठोस आधार दृष्टिगोचर नहीं होता, फिर भी उनका अपनी मूल भाषा संस्कृत में उपलब्ध होना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। जैसे बुद्धवचनों और शास्त्रों का मूल संस्कृत में उपलब्ध होना महत्त्वपूर्ण होता है, वैसे ही इन स्तोत्रों का उपलब्ध होना भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।

इन स्तोत्रों में आचार्य द्वारा परम गम्भीर शून्यता एवं प्रतीत्यसमुत्पाद के उपदेष्टा होने के कारण भगवान् तथागत के प्रति अवेत्यप्रसाद से युक्त होकर (उनकी) सत्कारपूर्वक स्तुति की गई है।

संस्थान द्वारा प्रकाशित प्रस्तुत 'चतुःस्तव' ग्रन्थ को श्रद्धालु जिज्ञासुओं के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। संस्थान के वरिष्ठ सहायक सम्पादक श्री जलछेन नमडोल ने भोटपाठ से मिलान करके न केवल मूलपाठ का समीक्षात्मक सम्पादन किया है, अपितु साथ में विस्तृत भूमिका, मूल-भोटपाठ एवं हिन्दी-अनुवाद भी प्रस्तुत किया है। इसके अलावा अनेक

स्तोत्रगणों की सूची प्रस्तुत करते हुए गहराई से शोधपूर्ण सूचनाएं भी दी हैं। उनके इस कार्य में संस्थान के शोध-आचार्य एवं बौद्ध विद्याओं के मर्मज्ञ विद्वान् प्रो० रामशंकर त्रिपाठी ने न केवल पूरा सहयोग प्रदान किया है, अपितु सम्यक् पर्यवेक्षण भी किया है। हम इन दोनों विद्वानों को इस पुण्य कार्य के लिए साधुवाद देते हैं।

प्रकाशन-अनुभाग के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को भी हम साधुवाद देते हैं, जिनके मनोयोगपूर्वक सहयोग से यह ग्रन्थ सुचारु रूप से शीघ्रता के साथ प्रकाश में आ सका है।

आशा है इस ग्रन्थ के प्रकाशन से सुधी जनों को स्तोत्रविषयक विपुल जानकारी प्राप्त होगी और वे नागार्जुन के महान् दर्शन से अवगत होंगे।

भवतु सर्वमङ्गलम्।

दि० १० दिसम्बर, २००१

प्रो० ड वङ्ग समतेन  
निदेशक



अहो बुद्धनयं दिव्यमहो बोधिनयोत्तमम् ।

अहो धर्मनयं शान्तमहो मन्त्रनयं दृढम् ॥

( गुह्यसमाजतन्त्रम्, पटल-१३, पृ० ४८ )

ཨི་མའོ་སངས་རྒྱལ་ལྟ་ཅི་བཟང་། །

ཨི་མའོ་བྱང་ཆུབ་ལྟ་གྱི་མཆོག། །

ཨི་མའོ་ཆོས་ཀྱི་ལྟ་ཅི་ཞི། །

ཨི་མའོ་ཐུགས་ཀྱི་ལྟ་ཅི་བདུན། །

གསང་འདུས་ཙ་རྒྱུ། (རྒྱུ། 'ཅ' ११३)

शास्तारं प्रणिपत्य गौतममहं तद्धर्मतावस्थितान्

सम्बुद्धान् सकलं जिनात्मजगणं धर्मं च तैर्भाषितम् ।

चक्षुर्भूतमनन्तबुद्धवचनस्यालोचने देहिनाम्

योऽमुं मध्यमकं चकार कृपया नागार्जुनस्तं नमे ॥

( चन्द्रकीर्तिकृतायाः प्रसन्नपदाया अन्तिमांशभूता  
मध्यमकशास्त्रस्तुतिः, पृ० १५५ )

སྟོན་པ་གྱི་དམ་དང་ནི་དེའི་ཆོས་ལ་ཞུགས་པ་

་་་ཐོགས་པའི་སངས་རྒྱལ་མཐའ་དག་དང་།

རྒྱལ་པའི་ཐུགས་པོའི་ཆོགས་དང་དེ་དག་གིས་གསུངས་པ་

་་་ཆོས་ལ་ཕྱག་འཆལ་ནས།

སངས་རྒྱལ་གསུང་མཐའ་ལས་ལ་བཟུ་སྟེར་

་་་ལུས་ཅན་རྣམས་ཀྱི་མིག་གྱུར་དུ་མ་ནི།

གང་གི་ཐུགས་ཐེའི་སྟོན་མཛད་པའི་

་་་ཁྱེད་དེ་ལ་བདག་ནི་ཕྱག་འཆལ་ལོ།

(དབུ་མ་ཆོག་གསལ་གྱི་མཛད་བྱང་གི་ཆ་གསལ། དབུ་མ། 'འ' ३००)

५१२०८५ विषयानुक्रमणी

- |   |   |           |         |
|---|---|-----------|---------|
| ༡ | དཔར་སྐྱོན་པའི་ཆེད་བཟོད།   | प्रकाशकीय |         |
| ༡ | བོད་སྐད།  | तिब्बती   | ༡-༩     |
| ༢ | ཉིན་དྲི།  | हिन्दी    | ༩༠-༩༩   |
| ཁ | སྡོན་སྤེང་།   | प्राक्कथन | ༩༩-༥༡   |
| ༡ | བོད་སྐད།  | तिब्बती   | ༩༩-༨༥   |
| ༢ | ཉིན་དྲི།  | हिन्दी    | ༨༡-༥༡   |
| ག | སྤེང་བཟོད།  | भूमिका    | (༩-༩༢༠) |
| ༡ | བོད་སྐད།  | तिब्बती   | (༩-༡༧)  |
| ༡ | སྤེང་བསྤང་བ། (༩-༩༠)   |           |         |
| ༢ | འཕགས་བོད་ཀྱི་མཁས་པས་བསྟོད་པ་ཇི་ལྟར་མཛད་ཚུལ་ལ་<br>དཔྱད་པ། (༩༠-༩༨)                |           |         |
| ༣ | སྤྱིར་བསྟོད་པ་མཛད་དགོས་པའི་རྒྱ་མཚན་དང་དགོས་པ།<br>(༩༨-༩༥)                        |           |         |
| ༤ | སྟོབ་དཔོན་གྱི་སྐུ་བ་ཀྱིས་བསྟོད་པའི་སྟོར་ལ་ཕྱག་རྗེས་གང་འཛིག་<br>གི་སྟོར། (༩༩-༩༧) |           |         |
| ༥ | “བསྟོད་པ་བཞི་པ་” ཞེས་པའི་ཐ་སྟོན་ཇི་ལྟར་བྱང་ཚུལ་ལ་དཔྱད་                          |           |         |





- (८) ग्रन्थ सारांश (पृष्ठभूमि) (९६-९८)  
 क- लोकातीतस्तव का सारांश। (९८-१०४)  
 ख- निरौपम्यस्तव का सारांश। (१०४-१०८)  
 ग- अचिन्त्यस्तव का सारांश। (१०८-११५)  
 घ- परमार्थस्तव का सारांश। (११५-११७)  
 (९) ग्रन्थस्थ-संकेत विवरण (Abbreviations) (११८)  
 ११८

༨ གཞུང་དངོས་གཞི། མུ་ལྷན་མཐུན་ ( ༡-༧༠ )

- (१) लोकातीतस्तवः ( संस्कृत मूल, भोट पाठ  
एवं हिन्दी अनुवाद ) ( १-१८ )  
འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པར་བསྐྱོད་པ། (ལེགས་པོད་རྟེན་  
གསུམ་མཚན་གྱིས་)
- (२) निरौपम्यस्तवः " " ( १९-३६ )  
དཔེ་མེད་པར་བསྐྱོད་པ། " "
- (३) अचिन्त्यस्तवः " " ( ३७-७२ )  
བསམ་གྱིས་མི་ཁྱབ་པར་བསྐྱོད་པ། " "
- (४) परमार्थस्तवः " " ( ७३-८० )  
དོན་དམ་པར་བསྐྱོད་པ། " "

ॐ བ་སྒྲོང་ལྷན་ཐབས།      परिशिष्ट      ( ८१-२१४ )

१. वगलः वल्लभः कदः वल्लभासः वल्लभः कर्णः  
 कृष्णः पदः दः श्रुतः। (८३-८६)  
 (विस्तृत स्तोत्रगण का परिचय।)



३ མདོ་ཕྱོགས་དང་འབྲེལ་པའི་བསྟོན་པའི་སྒྲིང་།

(१३१-१४९)

सूत्रसम्बद्धः स्तुतिवर्गः

ག བསྟོན་པའི་ཕྱོགས་དང་འབྲེལ་པའི་བསྟོན་པའི་སྒྲིང་།

སྒྲིང་། (१४९-१६२)

तनयुर सम्पूरकान्तर्गतः स्तोत्रगणः

(२) संस्कृत में प्राप्त बौद्ध स्तोत्रों की सूची। (१६३-१८६)

ལེ་ཤར་སྒྲིང་སྒྲིང་ཕྱོགས་དང་འབྲེལ་པའི་བསྟོན་པའི་སྒྲིང་།

१. पाण्डुलिपियों में प्राप्त अप्रकाशित स्तोत्रों की सूची। (१६३-१७८)

སྒྲིང་ཕྱོགས་དང་འབྲེལ་པའི་བསྟོན་པའི་སྒྲིང་།

བསྟོན་པའི་མཆན་སྒྲིང་།

२. प्रकाशितग्रन्थों में प्राप्त स्तोत्रों की सूची। (१७८-१८६)

སྒྲིང་ཕྱོགས་དང་འབྲེལ་པའི་བསྟོན་པའི་སྒྲིང་།

[१. बौद्ध स्तोत्र संग्रह (वाराणसी से प्रकाशित) (१७८-१८३)

२. बौद्ध स्तोत्र संग्रह (नेपाल से प्रकाशित) (१८३-१८४)

३. धीः पत्रिकाओं में प्रकाशित स्तोत्रों की सूची (अंक १-३१) (१८४-१८६)

४. प्रकीर्ण स्तोत्रों की सूची] (१८६)

(३) १- སྒྲིང་ཕྱོགས་དང་འབྲེལ་པའི་བསྟོན་པའི་སྒྲིང་།

འདས་པའི་བསྟོན་པའི་སྒྲིང་། (१८७-१८९)

आचार्य नागार्जुनकृत स्तुत्यतीतस्तव (भोट पाठ)

२- श्री प्रभुभाई पटेल द्वारा पुनरुद्धारित 'स्तुत्यतीतस्तव' का

संस्कृत पाठ (१८९-१९०)



ཐུང་པ། (१८९-१९२)

(८) སྟོན་པ་ལྟ་བུ་སྟོན་པ་ལྟ་བུ་སྟོན་པ་

ལག་གཉིས། (१९३-१९९)

(आचार्य के प्रति निर्मित भोट भाषा में दो स्तोत्र)

(५) (क) श्लोकार्थानुक्रमणी (संस्कृत) (२०१-२०५)

(ख) རྟོན་པ་ལྟ་བུ་སྟོན་པ་ལྟ་བུ་

བཞུགས། (२०७-२१४)

श्लोकसूची (भोट पाठ)

མཛུགས།

## ཕྱིན་སྒྲིང་།

༡༡། །དེ་ཡང་མཚོག་དུ་དང་བ་ཆེན་པོས་མཚོད་བསྟོད་གས་བསྐྱར་  
ཉུ་ཡུལ་གྱི་ཞིང་དམ་པ་སྒྲ་ན་མ་མཆིས་པ། ཆེ་བའི་ཆེས་མཚོག་སྟོབས་བཅུ་མི་  
འཇིགས་བཞིའི་ཅུལ་མཐའ་དག་ཡོངས་སུ་ཧྲོགས་ཤིང་། ཟུང་འབྲུག་ཁ་སྐྱོར་  
ཡན་ལག་བདུན་ལྟ་གྱི་གོ་འཕང་མངོན་དུ་མཛད་པ་རྒྱལ་བ་དྲོ་ཆེ་འཆང་དང་འོ་བོ་  
དབྱེར་མ་མཆིས་པའི་སྒྲ་མ་ཡིད་དམ་དང་། སངས་རྒྱས་བྱང་སེམས་སྟོགས་ཀྱི་  
བསྟོད་ཡུལ་ཁྱད་པར་ཅན་དེ་དག་ལ། མཚོད་བསྟོད་མཛད་པ་པོ་ཡང་ཆད་མའི་  
ཉིན་འབྱེད་ཆེན་པོ་རྒྱལ་བ་རྒྱལ་སྐྱས་ཉན་ཐོས་དང་བཅས་པས་གཙོས་ཤིང་ཉ་  
ཆེན་པོ་གཉིས་སྟོགས་འཕགས་ཡུལ་གྱི་པཎ་བྱབ་གསེར་གྱི་རི་བོ་མཆར་དུ་མངར་  
བ་དག་དང་། བོད་གངས་ཅན་གྱི་སྐྱེས་ཆེན་ནམ་མཁའི་སྐར་ཚོགས་ལྟ་བུ་དག་  
བཅས་ཀྱིས་སྐྱབས་ཡུལ་སྒྲ་ན་མེད་པ་དེ་དག་གི་ཆད་མེད་པའི་ཡོན་ཏན་དང་།  
མཛད་པ་འཕྲིན་ལས་བསམ་གྱིས་མི་ཁྱབ་པ་དག་ལ་ཆད་མས་དྲངས་པའི་ངེས་  
ཤེས་ཀྱིས་དད་པ་ཐོབ་པའི་རྒྱུ་བྱས་ནས། མཚོག་དུ་གས་པ་ཆེན་པོས་བསྟོད་པ་  
ཙྴམ་རྒྱལ་སོ་རིག་བཞི་ལ་དབང་འབྱོར་ཞིང་། མཐར་ཐུག་པའི་ཙྴམ་རྒྱལ་གྱི་  
དཔལ་ཡོན་རབ་དུ་ཧྲོགས་ཤིང་། ཟབ་ཅིང་རྒྱ་ཆེ་ལ་མད་དུ་བྱུང་བའི་བཛྲོད་དོན་  
གྱི་འགངས་དང་། ཉན་ཞིང་འཇིགས་ལ་ཆེས་ལུན་སུམ་ཚོགས་པའི་ཆེག་རྒྱན་གྱི་  
ཉམས་དང་། རན་ཞིང་འཆམ་པའི་ཁྱད་པར་ཅན་གྱི་དཔེ་དོན་གྱི་འབྲེལ་གང་  
ཐད་ནས་ཆེག་སྐྱོར་རྒྱལ་ལ་མཁས་པའི་ངག་གི་དཔལ་ལུན་སུམ་ཚོགས་པ་དང་  
ལྟ་པའི་སྒྲོ་ནས་མཚོག་དུ་བསྟོད་ཅིང་བཟླགས་པའི་བསྟོད་ཚོགས་ཀྱི་འདབ་བརྒྱའི་

སྤྱིང་པ་མཆར་དུ་མངར་བ་མཐའ་ལས་པ་ཞིག་ཕྱོགས་བརྒྱར་སྤྱོད་པར་མཛད་ཡོད་  
པས། མཐའ་དག་པ་རྒྱུར་མཐོང་སོ་སྤྱི་བསམ་སྤྱོད་ཀྱི་ར་བའི་སྤྱོམ་གཞིར་  
གཞིར་ཡང་རྒྱུར་ཅི་བྱལ་བས་བྱིས་བཅོལ་གྱི་ཡལ་ལས་འདས་སོ། །

དེ་ལྟ་ན་ཡང་དེང་གི་དུས་སུ་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་འདིར་སྤྱིར་བསྟོད་པའི་  
སྒྲོར་ལ་ཕྱི་ནང་གི་མཁས་པ་དག་གིས་བྱིས་པའི་བརྩམས་ཆོས་མཐའ་ཡས་པ་ཞིག་  
ཡོད་པ་སྟོན་ཅི་དགོས། ལྷག་པར་དུ་ནང་པའི་སྤྱོད་སྤྱོད་ལ་ཡང་བཀའ་དགོངས་  
འབྲེལ་གསུང་འབུམ་དང་བཅས་པའི་ཁྲོད་དུ་བསྟོད་པའི་སྒྲོར་གྱི་གཞུང་ཆན་ཆེས་  
མང་པོ་ཡོད་པ་ལས། མཐའ་དག་པའི་སྤྱོད་སྤྱོད་བསྟོད་ཆོགས་དང་། བྱང་  
རིམ་འབྲེལ་བཅོད་དང་སྒྲགས་གསལ་འགོད་བྱ་རྒྱ་སྤྱི་བའི་གནས་ཁྱིམ་མིན་པས།  
འདིར་སྐབས་སུ་བབས་པ་རྒྱ་གར་འཕགས་ཡུལ་ནས་དར་ཞིང་། དེའི་མཁས་  
པས་བརྩམས་པའི་བསྟོད་པའི་སྒྲོར་རགས་ཅམ་སྤྱིང་བར་འདོད་པས། དེ་ལ་  
ཡང་སྐད་ཡིག་གི་ཆ་ནས་ཅ་བའི་མ་ཕྱི་ལེགས་སྤྱིར་དང་བོད་འབྱུར་གཉིས་ཀའི་  
ཐོག་ཡོད་པ་དང་། བོད་འབྱུར་ཐོག་ཡོད་ལ་ལེགས་སྤྱིར་གྱི་རྒྱ་དཔེ་ཉམས་བསྐྱེད་  
དུ་བྱིན་པ་དང་། ལེགས་སྤྱིར་སྐད་ཐོག་ཡོད་ལ་བོད་སྐད་ཐོག་མ་བསྐྱེད་བ་བཅས་  
སྟེ་ཆན་གསུམ་གྱི་ཚུལ་དུ་ཡོད། དེ་དག་ལ་གཞི་བྱས་ནས་བྱིས་སུ་རྟོན་སྤྱོད་དང་།  
དབྱིན་སྐད་སོགས་སྐད་ཡིག་གཞན་གྱི་ཐོག་བསྐྱེད་བ་ཡང་ཇི་སྟེད་ཅིག་ཡོད། །

(2) ལེགས་སྤྱད་སྐད་ཐོག་བཞུགས་པའི་བསྟོད་པའི་སྒྲུང་།

དེ་དག་ལས་དང་པོ་ལེགས་སྒྱུར་གྱི་སྒྲུབ་ཐོག་བཞུགས་པའི་ནང་པའི་བསྐྱོད་  
པའི་སྒྲོལ་ལ་ཆ་མཆོན་ན། སྒྱིར་དང་གི་དྲུས་སྒྱུ་ལེགས་སྒྱུར་གྱི་སྒྲུབ་པ་དངོས་སྒྱུ་





ལ་རྒྱས་པ་ཤོག་ལྷེ་བ་ ३०० གྲས་པ་ནས་བཟུས་པ་ཤོག་ལྷེ་བ་ १༩ ཙམ་ཡོད་པ་  
སོགས་རྒྱས་བཟུས་འདྲ་མིན་དང་། བསྟོད་པ་མང་ཉུང་ཅི་རིགས་ཡོད་པའི་  
གཞུང་ཆན་འདྲ་མིན་ཉི་ཤུ་ཙམ་ཡོད་སྟེར་དང་། དེ་དག་ལས་རྒྱས་པ་དེའི་ནང་  
བསྟོད་པ་འདྲ་མིན་ १༧༩ ཙམ་ཡོད་ཅིང་། དེ་དག་ལས་བསྟོད་པ་ ༤३ ལ་མ་  
གཏོགས་མཛད་པ་པོའི་མཆན་གསལ་མེད་ཅིང་། མ་དཔེ་པལ་ཆེ་བ་ཆང་ཡོད་  
སྟེར་སོགས་‘སྒྲི་’དུས་དེབ་དང་པོའི་ནང་གསལ་སྟོན་གནང་ཡོད།

(३) ཡང་དུས་དེབ་གཉིས་པའི་ནང་གོང་སྟོས་ཀྱི་དཔེ་མཛོད་དེ་ཉིད་ནས་  
ཉིད་སོན་བྱུང་བའི་ནང་པའི་བསྟོད་པ་ཕྱོགས་བཟུས་ (बौद्धस्तोत्रसंग्रहः) ཞེས་པ་  
ཞིག་ཡོད་པ་དེའི་ནང་བསྟོད་པ་ ३५ ཡོད་སྟེར་གསལ་ཡོད་ཅིང་། དེར་བསྟོད་  
པ་ ༩ ལ་མ་གཏོགས་མཛད་པ་པོའི་མཆན་གསལ་མེད།

(३) མཆན་ཡང་དག་པར་བཛོད་པ་སོགས་བསྟོད་པ་ཕྱོགས་བཟུས་  
(नामसङ्गतीतिस्तोत्रसंग्रहः) ཞེས་པ་དེའི་ནང་བསྟོད་པ་ ५५ ཡོད་ཅིང་། བསྟོད་  
པ་ १༩ ལ་མ་གཏོགས་མཛད་པ་པོའི་མཆན་གསལ་མེད།

(༤) གཟུངས་ལྷགས་སོགས་ཕྱོགས་བཟུས་ (धारण्यादिसंग्रहः) ཞེས་  
པ་དེར་སྤྱིར་ཆོས་ཆན་འདྲ་མིན་ ३༧१ གི་མཆན་བྱང་འཁོད་ཡོད་ཁོངས་ནས་  
གཟུངས་ལྷགས་ཀྱི་སྟེར་ ३༤३ དང་། བསྟོད་པའི་སྟེར་ ༩५ དང་། སྟོས་  
༤༠ གཞུང་གཞན་ཡིན་སྟེར་གསལ་ཡོད། དེར་ཡང་བསྟོད་པ་ ༩ ལ་མ་  
གཏོགས་མཛད་པ་པོའི་མཆན་གསལ་མེད།

(༥) ‘སྒྲི་’དུས་དེབ་ཨང་ १०, ११ གཉིས་དང་། ཟུར་དུ་སྤྱར་འདེབས་



འདྲེན་པས་བྱས་པའི་དེ་བུ་ཐུ་ཐེས་གཉིས་ཀྱི་ནང་ “གསུང་རབ་དགོན་རིགས་ཁག་གི་  
 ར་བའི་མ་དཔེ་” (दुर्लभ ग्रन्थों की आधार सामग्री) ཞེས་པའི་དཔེ་ཐོ་རྒྱས་པ་  
 ཞིག་ཕྱོགས་བསྒྲིགས་གནང་ཡོད་པ་དེ་དག་གི་ནང་ལེགས་སྦྱར་སྐད་ཐོག་བཞུགས་  
 པའི་བསྟོད་པ་དང་། དེ་དང་འབྲེལ་ཡོད་བཅས་ཀྱི་གཞུང་ཆན་འདྲ་མིན་ ༥༥༠  
 ཙམ་གྱི་གསལ་ཁ་བཏོད་ཡོད། དེ་དག་གི་ནང་བསྟོད་པ་བྱེ་བྲག་པ་རེ་རེ་བཞིན་གྱི་  
 མཆན་དང་། མཇེད་པ་པོའི་མཆན་གང་ཆེད་ཀྱི་གསལ་ཁ་དང་། དཔེ་ཐོ་  
 ཕྱོགས་བསྒྲིག་བྱ་ཡུལ་གྱི་གཞི་དོན་གང་ཡིན་གྱི་གསལ་ཁ་དང་། ཤོག་ལྗེ་བ་ཀྱི་གྲངས་  
 ཆད་དང་། ཆང་ཡོད་མེད་དང་། མ་དཔའི་གནས་བབས་དང་ཡིག་རིགས་  
 གང་གི་ཐོག་ཡོད་མེད། འདི་གའི་དཔེ་མཇེད་ཁང་དུ་འབྱོར་ཡོད་མེད་སོགས་ཀྱི་  
 གསལ་ཁ་བཏོད་ཡོད། དཔེ་ཐོ་དེ་དག་གི་ཁྲོད་དུ་བསྟོད་པ་དངོས་ཀྱི་དཔེ་ཐོ་དང་  
 ལྷན་དུ་ “བསྟོད་པ་མང་པོ་ཕྱོགས་བསྒྲིག་” བྱས་པའི་གཞུང་མཆན་ཡང་ཇི་སྟེད་  
 ཅིག་ཡོད་པ་དེ་དག་གི་ངོ་སྟོད་མཆོན་པ་ཙམ་བཏོད་ན།

(2) གིཏ་སྟོན་འདི་སྟེང་གི་མཛུགས་སྐྱོང་གི་ཁོ་རྒྱུ་ལྟར་གྲུབ་པ་དེ་  
བལ་ཡུལ་རྒྱལ་ཡོངས་མ་དཔེ་ཁག་གི་དཔེ་མཛོད་(RAK)ནས་ཆེད་སྒྲུབ་ཡོང་།  
དེར་ལག་བྱིས་ཤོག་ལྟེན་ ༤༥ ཡོད་སྟེ་རྒྱུ་གསལ་ཡོད།

(3) पञ्चशतस्तोत्रसंग्रह (བཟོད་པ་ལ་བརྒྱ་ཕྱེད་པ་སྟུགས་) ཞེས་པ་དེ་  
 ཨ་རི་(IASWR)དང་། ཉི་འོང་ས་(SMTUL)གཉིས་ནས་ཆེན་མོན་བྱང་ཡོད།  
 དེར་ལག་བྱིས་ཤོག་ལྡེབ་ ༡༠༠ ཡོད་སྟོར་གསལ་ཡོད། མ་དཔེ་དེ་ཡིག་  
 བརྒྱུགས་ཆེས་གསལ་ཁ་ཞན་པོ་དང་། མ་ཆང་བའི་གྲས་སུ་ངོས་འཛིན་བྱས་



ཡོད། གཞན་དུ་ན་དངོས་འབྱེལ་བསྟོན་པ་ ༥༠༠ རྩོགས་བསྟུ་བྱས་པ་ཞིག་ཡིན་  
ན་ཤོག་ལྷེ་བ་བརྒྱའི་ནང་ཚུད་ཆུ་ཤིན་དུ་དཀའ་བས་དེ་ལས་ཀྱང་གྲངས་མང་བ་ཞིག་  
ཅིས་ཀྱང་ཡོད་དགོས་པར་མངོན་ནོ། །

(३) पीठस्तव एवं अन्यस्तोत्र (གནས་གཞིའི་བསྟོན་པ་དང་བསྟོན་པ་  
གཞན་) ཞེས་པ་དེ་ཉི་འངས་(MLBMDLT)ནས་ཆེད་སོན་བྱུང་ཡོད། དེར་  
ཤོག་ལྷེ་བ་ ३༠३ ཡོད་སྟོར་གསལ་ཡོད་པས་བསྟོན་པའི་སྟོར་ཆོས་ཆན་མང་ཙམ་  
ཡོད་ཆོག་པར་མངོན།

(८) पूजास्तोत्रसंग्रह (མཆོད་བསྟོན་རྩོགས་བསྟུས་) ཞེས་པ་དང་། (༥)  
वसुन्धारास्तोत्रादिसंग्रह (དབྱིག་འཇིན་གྱི་བསྟོན་པ་སོགས་རྩོགས་བསྟུས་) ཞེས་པ་དེ་  
གཉིས་བལ་ཡུལ་ (RAK) ནས་ཆེད་སོན་བྱུང་ཡོད། དེ་གཉིས་ལ་རིམ་པ་  
བཞིན་ཤོག་ལྷེ་བ་ ༧ དང་ ༦ ལས་མེད་པ་ནི་མ་དཔེ་མ་ཆང་བ་དང་། ཆོས་  
ཆེད་སྟོན་ཆེ་བའི་དབང་གིས་ཡིན་སྟོར་གསལ་ཡོད།

(७) बौद्धस्तुतिसंग्रह (ནང་པའི་བསྟོན་པ་རྩོགས་བསྟུས་) ཞེས་པ་དེ་  
ཡང་བལ་ཡུལ་ (RAK) ནས་ཆེད་སོན་བྱུང་ཡོད། དེར་ལག་བྱིས་ཤོག་ལྷེ་བ་  
༧ ཡོད།

(༧) बौद्धस्तोत्रसंग्रह (ནང་པའི་བསྟོན་པ་རྩོགས་བསྟུས་) ཞེས་པ་དེའི་  
གསལ་ཁ་པ་རན་སི་ (CABATON) ནས་ཆེད་སོན་བྱུང་ཡོད། དེར་ཤོག་ལྷེ་བ་  
३५༧ ཡོད་སྟོར་གསལ་ཡོད་པས་བསྟོན་པའི་སྟོར་ཆོས་ཆན་མང་པོ་ཡོད་ཆོག་  
པར་མངོན།

གོང་གསལ་གྱི་བསྟོད་པ་བྱེད་པ་བཟུང་དེ་དག་ལས་ཁག་ཅིག་ ‘སྤྱི་ཤོག་’  
(M.Film)ཐོག་འདི་གའི་གཙུག་ལག་སློབ་ཁང་གི་དཔེ་མཛོད་དུ་འབྱུང་ཡོད།  
འོན་ཀྱང་དེ་དག་པལ་ཆེ་བ་སྤྱི་གྱི་ལག་བྱིས་ཡིག་རྙིང་ཐོག་ཡོད་པ་ལས་སྤར་དུ་  
སྤོན་མེད་པས། དེ་དག་གི་ནང་བསྟོད་པ་རྒྱས་བཟུང་འདྲ་མིན་རྒྱུ་ཅི་ཙམ་ཡོད་མེད་  
དང་། རེ་རེ་བཞིན་ཆང་མ་ཆང་དང་། དེ་དག་གི་བྲིད་བོད་འགྱུར་གྱི་རིགས་  
རྒྱུ་ཅི་ཙམ་ཡོད་མེད་སོགས་བརྟགས་དགོས་གཤམ་ཆེ་ཡང་སླ་བའི་གནས་སུ་མི་མངོན་  
ནི། །ལྷག་པར་དུ་གོང་སློབ་ལྷ་ར་ལེགས་སྤར་གྱི་རྒྱ་དཔེ་བལ་ལུལ་དང་། ཨ་རི་  
ཨིང་ལེན། ཉི་འོངས། ས་རན་སི་དང་། ཇར་མན་སོགས་སུ་ཡོད་ལ།  
འདི་གར་དེ་དག་གི་དཀར་ཆག་དང་དཔེ་ཐོ་ཅམ་གྱི་གསལ་ཁ་ལས་གཞུང་དངོས་ཀྱི་  
འདྲ་དཔེ་མ་ཐོབ་པ་དེ་དག་གི་ནང་བསྟོད་པ་འདྲ་མིན་རྒྱུ་ཅི་ཙམ་ཡོད་དང་། ཆང་མ་  
ཆང་དང་། བོད་འགྱུར་དུ་ཡོད་སོགས་ཀྱི་ཐང་ཆོད་དཔག་བྱེད་དཀའ་བ་ཞིག་  
ཡིན་པ་སློབ་ཅི་དགོས།

དེ་ལྟར་གོང་གསལ་བསྟོད་པའི་གུང་ས་ཚད་ཀྱི་གསལ་ཁ་དངོས་སུ་འཁོད་  
པའི་ “བསྟོད་པ་ཕྱོགས་བསྟུས་” ཡང་རིམ་དང་པོ་ནས་ལྔ་པའི་བར་དེ་དག་ནང་  
ཕན་ཚུན་ཞིབ་བསྟུར་བྱེད་སྐབས་བསྟོད་པ་མང་པོ་ཞིག་དེ་དག་ཚང་མའི་ནང་  
གཅིག་གྱུར་གྱི་ཚུལ་དུ་འཁོད་ཡོད། ཡང་མང་པོ་ཞིག་སྤེ་ཆན་རེ་བྱུང་ནང་ཡོད་  
ལ་གཞན་ལ་མི་གསལ་བ་དང་། ཡང་མང་པོ་ཞིག་མཆན་བྱང་གཅིག་པའི་ཚུལ་  
དུ་ཡོད་པ་གང་ཞིག་ལ་མཛད་པ་པོའི་ཞལ་གསལ་མ་འཁོད་པའི་དབང་གིས་དོན་  
ལ་གཅིག་པ་ཡིན་མིན་ཁ་ཚོན་བཅད་དཀའ་བའི་རིགས་ཀྱང་ཇི་སྟེད་ཅིག་ཡོད་ཡོད།





ཞིབ་བརྒྱུད་དང་། ཐལ་གཙོད་ངེས་ཅན་བྱེད་སྒྲུབ་པའི་གནས་སུ་གཏན་མི་མངོན་  
ལོ། །

གང་གསལ་བསྟོད་པ་ཕྱགས་བསྐྱས་ཁག་དུ་གསལ་བའི་བསྟོད་པ་དེ་དག་  
ལ་ཞིབ་དུ་བརྟགས་པའི་ཆེ། བསྟོད་པ་ཕལ་ཆེ་བ་གང་ཟག་དང་འབྲེལ་བ་གཙོ་ཆེ་  
ཞིང་། མདོ་སྐགས་གཉིས་ལས་སྐགས་ཕྱགས་དང་འབྲེལ་བ་གཙོ་ཆེ་བའི་ཚུལ་དུ་  
ཡོད། བོད་སྐད་ཐོག་བསྐྱར་མ་བསྐྱར་གང་མང་བརྟགས་པའི་ཆེ་མ་བསྐྱར་བའི་  
གས་ཤིན་དུ་མང་བའི་ཆོད་དུ་ཡོད། བསྟོད་པ་ཕལ་ཆེ་བ་ལག་གིས་ཡིག་རྟིང་  
ཐོག་བཞུགས་པ་ལས་སྐར་དུ་ཐོན་པ་ཉུང་ཤས་ལས་མེད། དེ་དག་གི་ཁོད་དུ་མ་  
དཔེ་མ་ཆང་བ་དང་མ་དག་པ་མང་པོ་ཡོད་གས་ཀྱང་ཇི་སྟེད་ཅིག་ཡོད། ལྷག་  
པར་དུ་མཇེད་པ་པོའི་མཆན་མ་གསལ་བ་ཤིན་དུ་མང་པོ་ཡོད། དེ་དག་དུ་  
འཁོད་པའི་བསྟོད་པ་ཉུང་ཤས་ཞིག་མཐའ་གཅིག་དུ་ནང་པ་དང་འབྲེལ་བའི་བསྟོད་  
པ་ཡིན་པའི་ངེས་པ་ཆེར་མེད་པ་དང་། འབྲེས་ལྷན་ཡོད་པའི་གས་ཀྱང་ཡོད་  
ཆོད་འདུག དེ་བཞིན་དུ་བསྟོད་པ་ཕལ་ཆེ་བ་ཆེས་གྲགས་ཅན་དང་། ཚུམ་པ་  
པོ་ཁྱད་པར་ཅན་དང་། ཚུམ་ཅུལ་མད་དུ་བྱུང་བ་དང་ལྷན་པ་གསྐྱག་ཡིན་པའི་  
ངེས་པ་ཡང་ཆེར་མེད་དོ། །

བརྟགས་པའི་རྣམ་པ་གཅིག་དུ་ན་བསྟོན་པ་ཕྱོགས་བསྐྱས་ཁག་གི་ནང་  
འཁོད་པའི་བསྟོན་པ་མང་པོ་ཞིག་བསྟན་བཅོས་མ་ཡིན་པར་སངས་རྒྱས་ཀྱི་གསུང་  
རབ་ནང་བཞུགས་ངན་སོང་སྟོང་རྒྱད་དང་།      མདོ་རྒྱ་ཆེར་འོལ་པ་དང་།  
གསེར་འོད་དམ་པའི་མདོ་སྟོགས་བཀའ་མདོ་རྒྱད་གཉིས་ལས་བྱུང་འདོན་བྱས་

ནས་བཞོད་ཡོད། དེ་བཞིན་དུ་སྒྲིམ་རབས་དང་། རྟོགས་བཞོད་དང་། བལ་  
 པོའི་རང་འབྱུང་ཕྱོད་རབས་སོགས་ནས་ཟུར་འདོན་གྱི་ཚུལ་དུ་བཞོད་པ་ཡང་ཇི་  
 སྟེང་ཅིག་ཡོད། ལེགས་སྒྱུར་སྐད་ཐོག་བཞོད་པའི་བསྟོད་པའི་མཆན་བྱང་དེ་དག་  
 གི་ཁྲོད་དུ་གཞུང་ཇི་སྟེང་ཅིག་བསྟོད་པ་སྤྱོད་པ་བསྒྲུས་སོགས་བསྟོད་པ་དང་འབྲེལ་  
 བའི་གཞུང་ཡིན་པ་ལས་བསྟོད་པ་དངོས་མིན་པ་ཡང་ཡོད། བལ་ཡུལ་སོགས་  
 ནས་ཐོན་པའི་བསྟོད་པའི་སྒྲོར་སོགས་ལག་གྱིས་ཡིག་རྩིང་གི་ལེགས་སྒྱུར་ཀྱང་པེ་  
 བྱིན་དུ་མང་པོ་ཞིག་ལ་མཛད་པ་པོའི་མཆན་གྱི་གསལ་ཁ་མ་འཁོད་པ་དེ་ནི་ཡ་  
 མཆན་པའི་གནས་སུ་སྤང་ཞིང་། དེ་ལྟར་འབྱུང་དགོས་པའི་རྒྱབ་ཐོངས་ཀྱི་རྒྱ་  
 མཆན་ལ་ཞིབ་དུ་དཔྱད་པར་བྱའོ། །

དེ་ལྟར་ལག་གྱིས་ཡིག་རྩིང་ཐོག་ཡོད་པའི་བསྟོད་པའི་སྒྲོར་རགས་ཅམ་  
 སྤྱིང་ནས་ད་ནི་དེང་དུས་ཀྱི་ཡིག་གཟུགས་ཐོག་སྤར་དུ་ཐོན་པའི་བསྟོད་པའི་སྒྲོར་ལ་  
 ཆ་མཚོན་ན།

(१) १८९८ ལོར་ ५० जनार्दन पाण्डेय རྒྱ་བས་སྤར་བསྐྱུན་ཞུས་  
 པའི་ནང་པའི་བསྟོད་པ་སྤྱོད་པ་བསྒྲུས་ (बौद्धस्तोत्रसंग्रहः) ཞེས་པའི་དེབ་དེའི་  
 ནང་བསྟོད་པ་འདྲ་མིན་ १०५ བཞོད་ཡོད། དེར་ཡོངས་གྲགས་ཅན་གྱི་བསྟོད་  
 པ་གལ་གནད་ཅན་མང་པོ་སྤྱོད་པ་བསྒྲུ་གནང་ཡོད། བསྟོད་པ་ ३१ ཅམ་ལ་  
 མཛད་པ་པོའི་མཆན་གསལ་ཡོད་ཀྱང་དེ་བྱིངས་ལ་གསལ་མེད། བསྟོད་པ་པལ་  
 ཆེ་བ་སྤྱགས་སྤྱོད་དང་འབྲེལ་ཆེ་ཞིང་བོད་སྐད་ཐོག་མ་བསྐྱུར་བའི་གྲས་ཀྱང་མང་  
 དག་ཅིག་ཡོད། བསྟོད་པ་དེ་དག་གི་ཁྲོད་སྟོན་པ་དུ་གྲ་སེཛེ་ལ་བྱི་རོལ་པའི་ལྷ་ཆེན་





དེ་ལྟར་སྤྱད་དུ་ཐོན་མ་ཐོན་དང་། ཐོན་པ་ནང་ཕན་ཚུན་བཅས་ཀྱི་  
དབར་ལ་བསྐྱོད་པའི་གྲངས་ཚད་ཇི་ཡོད་ཞིབ་བཟུར་བྱེད་སྐབས་འདྲ་བའི་ཆ་ཡོད་  
པར་ཚོད་དཔག་ཐུབ་གས་རྣམས་ལུང་། དེ་བྱིངས་ལྡེ་རིས་སུ་བཞོད་པ་རྣམས་  
ཁྱོན་བསྐྱོད་པ་བསྐྱོད་པ་འདྲ་མིན་ ༧༠༧ ཙམ་ཡོད་ཚོད་འདུག གྲངས་ཚད་  
འདི་ཆེས་རགས་ཅིས་ཀྱི་དབང་དུ་བྱས་པ་ཞིག་ལས་ངས་གདན་འཁེལ་བའི་ཚུལ་  
དུ་ཆ་འཛིན་བྱེད་དཀའ་བའི་རྒྱ་མཚན་གོང་དུ་ཞིབ་གསལ་སྒྲིམ་ཟིན་ནོ། །

འདིར་བཞོད་པའི་གྲངས་ཚད་དང་། དེབ་འདིའི་ཁ་སྐོང་ནང་བཞོད་  
པའི་གྲངས་ཚད་གཉིས་ལ་ཁྱད་པར་ཆེན་པོ་འབྱུང་དགོས་པའི་རྒྱ་མཚན་ནི། ཁ་  
སྐོང་ནང་བཞོད་པ་དེར་ལག་བྱིས་ཡིག་རྩིང་ནང་ཡོད་སྤྱད་དུ་ཐོན་ཟིན་པ་མང་པོ་  
ཞིག་ཕྱིར་འཐེན་བྱས་པ་དང་། འདྲ་ཆོས་ཆེ་ལ་ཚོད་དཔག་དཀའ་བའི་གས་  
དང་། བསྐྱོད་པ་ཕྱོགས་བཟུ་བྱས་པའི་གཞུང་ལ་མ་དཔེ་རྒྱས་བཟུས་འདྲ་མིན་  
མང་པོ་ཡོད་པ་ཚང་མ་དེར་ཅིས་མེད་པ་སོགས་ལ་བདེན་ནས་ཁ་སྐོང་ནང་བཞོད་  
པའི་གྲངས་ཚད་དེ་འདིར་བཞོད་པ་ལ་ལྟོས་ཏེ་ཉུང་བ་ཡོད། ཁ་སྐོང་ནང་སྤྱད་  
ཐོན་མ་ཐོན་ཆ་ཚང་བསྐྱོད་པ་བསྐྱོད་པ་འདྲ་མིན་དུག་བརྒྱལ་ཏེ་བ་ཞིག་ཡོད་  
སྐོར་བཞོད་ཡོད། དེ་དག་གི་ཁྱོད་དུ་ཡང་འདྲ་བའི་ཆ་ཡོད་པ་ཇི་སྟེད་ཅིག་ཡོད།

(3) བཀའ་བསྐྱེད་ཀྱི་གསུང་རབ་དགོངས་འབེལ་རྣམས་སུ་  
གསལ་བའི་བསྐྱོད་པའི་སྒྲིམ།

གཉིས་པ་བོད་འགྱུར་བཀའ་བསྐྱེད་ནང་བཞུགས་བསྐྱོད་པའི་སྒྲིམ་ལ་ཆ་  
མཚན་ནོ། སྤྱིར་བསྐྱོད་པ་འཚོལ་ཡུལ་ལ་བཀའ་བསྐྱེད་གཉིས་དང་། དེ་ཅེ་ཅེ་







གྲགས་གཉིས་ཀ་དང་འབྲེལ་བའི་བསྟོད་པ་གསལ་ཡོད། འོན་ཀྱང་གྲགས་སྤྱོད་  
 གྱི་སྒྲོར་ཉུང་གསལ་ལས་མེད། བསྟོད་ཚོགས་དེ་གཉིས་ནི་ཡོན་བདག་དང་ཅན་  
 ཁག་གིས་དང་བ་ལྷག་པར་སྒྲིམ་ནས་མཚོད་པར་བཟོད་པའི་ཚུལ་དུ་གསེར་ལས་  
 བཞེངས་པའི་སྒྲིག་བམ་བྱར་པ་ཞིག་ཡིན་པ་ལས། དེ་གཉིས་བསྟན་འགྱུར་སྤར་  
 མ་སྤྱི་བྱིངས་ཀྱི་དབྱར་ཡོད་པའི་བསྟོད་ཚོགས་དེ་མ་ཡིན་ནོ། །སྤར་མ་སྤྱི་བྱིངས་  
 ཀྱི་དབྱར་གསལ་བའི་དཀར་ཆག་ཕྲ་མ་སྤར་ཐང་སྤར་མའི་ནང་བསྟོད་པ་ ༥༧  
 དང་། བྱི་མའི་ནང་ ༦༡ ཡོད་སྒྲོར་གསལ་ཡོད། བྱ་སྟོན་ཚོས་འབྱུང་ནང་  
 གསལ་བསྟོད་པའི་སྒྲོར་དང་། འདི་དག་དུ་འཁོད་པ་རྣམས་ཀྱི་བར་ཁྱད་པར་རི་  
 ཡོད་ཞིབ་དུ་དཔྱད་དགོས་པར་མངོན་ནོ། །

(༤) དེ་གི་དབུ་མའི་ལྷ་མོ་མཆོད་པ་ ལྟ་ ཡོད་སྒྲིབ་  
གསལ་ཡོད་པས། མདོར་ན་བསྐྱོད་པ་ཇི་ཡོད་ཀྱི་གང་ས་བཙི་ཚུལ་དང་། གང་  
བགང་ས་སྒྲིབ་བསྐྱོད་པ་བཅས་ལ་གཅིག་མཐུན་མེད་པའི་ཁྱད་པར་ཅི་ཆེ་ཡོད།

དེས་ན་དཀར་ཆག་འདྲ་མིན་ནང་འཁོད་པ་ནང་ཕན་ཚུན་དང་།

ལེགས་སྐྱར་སྐྱད་ཐོག་ཡོད་པ་ནང་ཕན་ཚུན་དང་། ལྷག་པར་དུ་བོད་འབྲུར་དང་།  
ལེགས་སྐྱར་སྐྱད་ཐོག་ཡོད་པ་བཅས་ཀྱི་དབར་ལ་ནན་དན་ཆེན་པོས་འབྲུ་བསྐྱར་  
བསྐྱར་ཞིབ་བྱེད་དགོས་ངེས་ཀྱི་ལས་དོན་མང་པོ་ཡོད། །དེ་བཞིན་དུ་དགོས་གཤམ་  
ལ་བརྟགས་ན་བསྐྱོད་པ་ཡོད་ཆད་ལ་དེའི་ངོ་སྤྱོད་དང་། ལེགས་སྐྱར་སྐྱད་ཐོག་  
ཡོད་མེད་སོགས་ཀྱི་འབྲེལ་བ་མཛོད་བྱེད་མི་དགོས་པ་ཞིག་གཏན་ནས་མེད་པའི་ཚུལ་  
དུ་སྤང་ཡང་། དུས་འཁོམ་དང་། དགོས་ངེས་ཅན་གྱི་ཆ་ཚུན་ཆང་ཆེ་ཆུང་།



དང་། སློབ་དཔོན་དཔལ་བོ་དང་ཕྱགས་སྒྲང་གཉིས་ཀྱིས་མཛད་པའི་སྤྱུ་མར་  
 བསྟོད་པ་སོགས་དང་། ཅུ་འབྲེལ་གཉིས་ཀའི་ཐོག་ཡོད་པ་སློབ་དཔོན་གྱི་སྤྱུ་མར་  
 ཀྱི་སྤྱུ་གསུམ་ལ་བསྟོད་པ་རང་འབྲེལ་དང་བཅས་པ་དང་། དེ་བཞིན་དུ་ཁྱད་པར་  
 འཕགས་བསྟོད་ཅུ་འབྲེལ་དང་། ལྷ་ལས་ཕུལ་བྱུང་གི་བསྟོད་པ་ཅུ་འབྲེལ་སོགས་  
 རི་སྟོད་ཅིག་ཡོད། དེ་བཞིན་དུ་བསྟོད་པ་ཙཱ་མ་པ་པོའི་མཁས་པ་སྤྱུ་མར་བསྟོད་པ་  
 མང་ཤོས་བརྩམས་མིན་དང་། སངས་བྱུང་སེམས་སོགས་སྤྱུ་མར་བསྟོད་པ་  
 སྤྱི་སྒྲིལ་ལ་བསྟོད་པ་མང་ཤོས་ཡོད་མེད་སོགས་ཞིབ་ཅུད་བྱ་ཡུལ་དང་བརྟགས་  
 པའི་གཞི་གིན་དུ་མང་ངོ་། །

(3) བོད་གངས་ཅན་གྱི་མཁས་པ་རྣམས་ཀྱིས་མཛད་པའི་  
བསྟན་པའི་སྒྲུབ།

གྱིར་བསྟོད་པའི་སྒྲོར་ལ་འཕགས་ཡུལ་གྱི་མཁས་པས་མཛད་པ་ཙམ་དུ་  
 མ་ཟད་བོད་གངས་ཅན་གྱི་མཁས་པས་མཛད་པའི་བསྟོད་པའི་སྒྲོར་ལ་ཡང་མཐའ་  
 དག་པའི་བསྟོད་ཆོགས་ཀྱི་མཆན་བྱང་དག་བཞོད་དགོས་གལ་ཆེ་ཡང་མང་བས་  
 འཛིགས་ནས་མ་བྲིས་སོ། །འོན་ཀྱང་འདིར་དེ་དག་གི་སྒྲོར་མཆོན་པ་ཙམ་བཟོད་  
 ན། དེ་ཡང་ཇི་བདག་ཉིད་ཆེན་པོས་མཛད་པའི་སྒྲ་ན་མེད་པ་རིན་པོ་ཆེ་གསུམ་  
 གྱི་གདམ་གྱི་སྦྱོར་བར་ “རིགས་ལམ་སྤྲོ་མོ་བྱེད་པའི་རྣམ་དཔྱིད་དང་། །གཞུང་  
 ལུགས་གདམས་པར་བར་བའི་ཉམས་ལེན་དང་། །ཆོག་སྦྱོར་ཚུལ་ལ་མཁས་  
 པའི་ངག་གི་དཔལ། །ས་སྤྱང་འདི་ན་རིན་ཆེན་རྣམ་གསུམ་སྤྱང་།” (པོད། ‘ཁ’  
 ༡༣༦) ཞེས་ཇི་སྟོན་གསུངས་པ་ལྟར་གྱི་རིན་ཆེན་རྣམ་གསུམ་གྱི་ཡ་རྒྱལ་ཆོག་སྦྱོར་





མངོན་པར་བསྟོན་པའི་རབ་རྒྱ་བྱེད་པ་”སྟགས་བསྟོན་པ་རྒྱས་བརྒྱས་ཉི་གྲུལ་ཉི་བ་  
ཞིག་མཇད་ཡོད།

རྒྱལ་བ་སྐྱེ་སྤང་དང་པོ་ཆེ་དགེ་འདུན་གྱི་འདུལ་བའི་སྤྲིང་འབུམ་  
 དང་། འདུལ་ཁྱིམ་རིན་ཆེན་སྤང་བ་བཅས་སུ་ཆེག་བར་དུག་བརྒྱ་བཞུལ་བའི་  
 རྒྱན་ཆགས་ཆེགས་བཅད་ཀྱི་བསྟོད་སྟོན་ཁག་གཉིས་དང་། གཅིག་ལས་འབྲེས་  
 པའི་བསྟོད་པའི་བསྟོད་ཕྱག་ཆེགས་བཅད་དང་། དབྱངས་ངེས་པ་དང་། ཀྱུན་  
 བཟང་འཁོར་ལོ་སོགས་ཚུམ་ཚུལ་ཁྱད་པར་ཅན་གྱི་བསྟོད་པ་དང་། དེ་བཞིན་དུ་  
 “སྟོན་པ་ཐུབ་པའི་དབང་པོ་ལ་བསྟོད་པ་བདུད་དཔུང་སྤྱི་མར་འཐག་པ་”སོགས་  
 བསྟོད་པ་དང་བསྟོད་འགྲེལ་ ༣༥ ལྷག་བཅུ་མས་པར་མཛད་ཡོད། རྒྱལ་བ་སྐྱེ་  
 སྤང་གཉིས་པ་ཆེ་དགེ་འདུན་གྱི་མཆོས་ “སངས་རྒྱས་བྱང་སེམས་ཀྱི་བསྟོད་  
 ཆོགས་” ཞེས་པ་དཔེ་རིང་སོག་གྲངས་ ༣༧ ཡོད་པ་ཞིག་དང་། དེ་བཞིན་  
 རྒྱུ་ལས་ཀྱི་ཆེན་འདུལ་བསྟོད་པའི་འགྲེལ་པ་སོགས་བསྟོད་འགྲེལ་ཡང་ཆེ་སྟོད་ཅིག་  
 མཛད་ཡོད།

རྒྱལ་པ་རྒྱ་སྤང་ཁྲ་པ་ངག་དབང་སློ་བཟང་རྒྱ་མཚོས་ “སྟོགས་བཅུ་པ་  
 གཤེགས་བྱང་སེམས་སློབ་མི་སློབ་ཀྱི་དགེ་འདུན་དང་བཅས་པའི་བསྟོད་ཚོགས་  
 དངོས་བྱལ་རྒྱ་མཚོའི་གཏེར་མཛོད་” ཅས་པར་“རྣམ་འདྲིན་བྱལ་པའི་དབང་  
 པོའི་བསྟོད་པ་སྤྲ་ན་མེད་པ་བདུད་ཅིང་སྤྱིང་པོ་”སྟོགས་བསྟོད་པ་ ༡༥ བརྒྱམས་  
 པར་མཛོད་ཡོད། ཡང་དེ་ཉིད་ཀྱིས་མཛོད་པའི་ “མཁས་གིང་བྱལ་པའི་དབང་  
 ཡུག་དམ་པ་རྣམས་གཙོ་བོར་བྱུང་པའི་སྤྲ་མའི་བསྟོད་ཚོགས་ཀྱི་རིམ་པ་” ཞེས་པ་



















འཕྲུལ་འཕྲུལ་མཆོག་ནས་ཐུགས་ཁུར་ཆེ་བཞིས་ཀྱིས་གཟིགས་རྟོགས་ལམ་སྟོན་གྱི་  
ཆེ་བ་ནང་བར་སྟོང་ཐག་པ་ནས་ཐུགས་རྗེ་ཆེ་བྱ་གྱུ་ཡིན།

འདི་གའི་གཙུག་ལག་སློབ་ཁང་གི་རྒྱ་གཞུང་གི་སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་སྤུབ་  
བསྟན་མཆོག་སྤུབ་ལགས་ནས་འདྲ་བསྐྱར་བསྐྱར་ཞིབ་ཀྱི་ལས་དོན་ལ་སྒྲུབ་པའི་  
སྤྱད་བཟོད་པ་བཞིའི་ནང་ཆེན་ “དཔེ་མེད་པར་བཟོད་པ་”དང་། “དོན་དམ་  
པར་བཟོད་པ་” གཉིས་ཀྱི་རྒྱ་དཔེ་སྤྱར་མ་དབྱིན་སྐད་ཐོག་བསྐྱར་བ་ཞིག་རྒྱབ་སྤྱིང་  
ཨི་ཏ་ལི་ནས་རྙེད་སོན་གྱིང་ཡོད་པ་བཞིན་དེའི་མ་དཔེ་མཁོ་འདོན་གནང་བར་  
སྤུགས་རྩི་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་ཡིན།

དེ་བཞིན་དུ་ཆེས་དགོན་པའི་ནང་པའི་གསུང་རབ་ཉམས་ཞིབ་ཟེ་ཆན་གྱི་  
ལས་ཀྱིས་སྐྱེས་ལས་འོག་ར་ལྟ་ར་སེན་ཅེས་ལམས་ནས་གཞུང་འདི་དག་གི་ལེར་  
སྒྲུང་སྒྲུང་པེ་ལག་གིས་ཡིག་རྩིང་ཁག་གི་མ་དཔེ་འཆོལ་ཞིབ་མཁོ་འདོན་དང་།  
ལེགས་སྒྲུང་སྒྲུང་ཐོག་ཡོད་པའི་བརྩོད་པ་ཁག་གི་སྒྲུང་སྒྲུས་མངའ་ལམ་སྟོན་སོགས་  
གནད་བར་ཐུགས་རྗེ་ཆེ་བྱ་སྒྲུ་ཡིན།

མདོར་ན་ལས་དོན་འདི་དག་གི་ཆེད་སྤར་བསྐྱུན་ཤི་ཆོན་གྱི་མཛད་འགན་  
བཞེས་མི་དང་། སྤར་ཅ་འཕུལ་སྤར་ནང་འདེབས་འཇུགས་གནང་མཁན་དང་།  
དག་བྱས་གནང་མཁན་སོགས་འབྲེལ་ཐོགས་ཆང་མར་བྱགས་ཇི་ཆེ་བྱ་བ་དང་  
ཆབས་ཅིག ལས་དོན་འདི་དག་གི་ཐོག་ལ་རང་གི་གེས་འབྱོན་ལ་གཞིགས་པའི་  
དོ་ཁྲར་ཟབ་ནན་ཅི་ཆེ་བྱེད་སྤྱོད་ལགས་གྱང་། འགལ་འཇོལ་ནོང་ས་པའི་ཆོགས་





༥ ལྷ་སྐྱབ་ལྷ་ཡི་དབང་བའི་རྩལ་གནས་ལས།  
ཆ་བྲལ་ཆ་བའི་ལེགས་བཤད་བདུད་ཅིའི་ཆུས།  
གཉིས་མེད་གཉིས་སུ་སྒྲུང་བའི་བདེན་དོན་བྱང་།  
མ་ནོར་མ་འདྲེས་འབྲེད་བའི་སློབས་པ་བརྟེས།

སྒྲུང་བ་ཙམ་གྱི་ཐ་སྙད་མི་ཡོང་ལ།  
གཞི་ལམ་འབྲས་བུའི་བྱི་དོར་བྱ་བྱེད་ཀྱན།  
བསྟོན་མེད་འཆར་བའི་ངོ་མཚར་གཟིགས་མོ་ཡིས།  
སློ་ལྷན་སྒྲིག་མའི་དགོས་དོན་ཅི་ཡང་འགྲུབ།  
(ཇི་གུང་ཐང་གི་གསུང་འཇམ་མགོན་ཆུལ་བའི་བསྟོད་པ། བོད། 'ཇ' ༡༠༥)

རང་བཞིན་གྱིས་སྟོང་སྟོང་བཞིན་བརྟེན་ནས་འབྱུང་།  
ཀྱན་ཇོ་བ་འབྲུལ་སྒྲུང་སྒྲུང་བཞིན་གཞི་ཅས་དབེན།  
སྒྲུང་སྟོང་མི་འགལ་འགལ་མེད་གྲོགས་ཉིད་དུ།  
འཆར་བའི་ངང་ཆུལ་ཆུལ་འདྲིའི་སྟངས་གཞི་ཡིན།

དྲིན་ཞེས་ཆོས་ཉིད་མི་འདོར་ལ།  
འབྱུང་ཞེས་འཇིག་དྲིན་ཆུལ་ཡང་མཐུན།  
རིགས་ཆུལ་ཀྱན་ལས་ཆུལ་པོ་བཞིན།  
དྲིན་ཅིང་འབྲེལ་འབྱུང་ཆད་མའི་བཀའ།  
(ཆངས་སྐས་བཞད་པ་དོན་ཇིའི་གསུང་། དཔེ་རིང་། ༣, ལ)

## प्राक्कथन

कुशलोत्साह और श्रद्धा के साथ पूजा, स्तुति एवं आदर के अत्युत्तम और निरुत्तर क्षेत्र जिन वज्रधर हैं, जो दशबल, चतुर्वैशारद्य आदि परमाद्भुत गुणों से अन्वित हैं। उन जिन वज्रधर से अभिन्न गुरु, इष्टदेव एवं अन्य बुद्ध-बोधिसत्त्व आदि अतिविशिष्ट स्तुति-क्षेत्र हैं। इन सबकी स्तुति एवं सत्कार करने वालों में समस्त सत्त्वों के उन्नायक, प्रामाणिक शास्ता भगवान् बुद्ध भी हैं और उनसे लेकर अन्य बोधिसत्त्व, अर्हत्, आर्यश्रावक, दो महारथी (आचार्य नागार्जुन एवं असंग), आर्यदेश के महापण्डित एवं साधक जो इस आर्यदेश में सुवर्णपर्वतों के समान देदीप्यमान हैं, वे सब स्तुतिकर्ताओं में भी सम्मिलित हैं। साथ ही, हिमवत् भोट देश के गणनातीत महापुरुषों, सिद्धों और पण्डितों के द्वारा भी उपर्युक्त उत्तम शरणक्षेत्रों के अपरिमित गुणों और अचिन्त्य कार्यों के प्रति विपुल अवेत्यप्रसाद से युक्त होकर प्रामाणिक दृढ़ निश्चय के साथ अद्भुत स्तुतियाँ एवं सत्कार आदि किये गये हैं।

चार प्रतिसंविदों (धर्म, अर्थ, निरुक्ति एवं प्रतिभान) से युक्त उन स्तुतिकर्ताओं की रचना-शैली भी अत्युत्तम गुणों से परिपूर्ण है। उन स्तुतियों में परम गम्भीर एवं उदार अभिधेयों का मार्मिक निरूपण है तथा मधुर एवं मनोरम शब्दालंकारों और चमत्कारिक अर्थालंकारों, सटीक उपमाओं का सन्निवेश है। अर्थ के साथ उनका सम्बन्ध आदि भी हर प्रकार से सुनिश्चित एवं वाक्पाटव आदि गुणों की श्री से समन्वित है। इस विशिष्ट रचना-शैली के माध्यम से शतसहस्र पत्रों में निर्मित स्तोत्रगण की मालाओं का सम्पूर्ण दशदिक् लोक में फैलाव है। अतः इन समस्त स्तोत्रों पर प्रकाश डालना और उन्हें संगृहीत करना साधारण पृथग्जनों की बुद्धि के विषयक्षेत्र से अतीत (परे) है।

फिर भी वर्तमान लोकधातु में बौद्ध और बौद्धेतर विद्वानों द्वारा रचित गणनातीत स्तोत्रों की विशाल राशि के विद्यमान होने में तो कहना ही क्या है। विशेषतः बौद्धों में भी बुद्धवचनों, उनकी आभिप्रायिक टीकाओं एवं सुङ्बुम आदि शास्त्रों में अनगिनत स्तोत्र विद्यमान हैं। इन सबकी संकलित सूची बनाना और उनका विवरण सहित परिचय देना भी सरल कार्य नहीं है। अतः यहाँ सम्बद्ध कार्यक्षेत्र की दृष्टि से भारत में उद्गत और आर्यदेश के बौद्ध विद्वानों द्वारा रचित स्तोत्रों के बारे में स्थूल रूप से प्रकाश डालने का प्रयत्न किया जा रहा है।



इसमें भाषा की दृष्टि से मूल प्रति का संस्कृत और भोट दोनों भाषाओं में होना, भोट-अनुवाद उपलब्ध होने पर भी संस्कृत मूल का लुप्त हो जाना, संस्कृत में उपलब्ध होने पर भी भोटभाषा में उसका अनुवाद न होना—इस तरह तीन प्रकारों में स्तोत्रों का विभाजन किया जा सकता है। इन्हें आधार बनाकर बाद में हिन्दी, अंग्रेजी आदि अन्य भाषाओं में अनुवाद, सम्पादन आदि अनेकविध कार्य सम्पन्न हुए हैं।

सर्वप्रथम संस्कृत भाषा में विरचित बौद्ध स्तोत्रों के बारे में वे इस समय मूल संस्कृत में उपलब्ध है या नहीं? ऐसा परीक्षण करते समय या निर्णय लेते समय किसी देशविशेष या कालविशेष में उपलब्ध न होने या दिखाई नहीं पड़ने मात्र को आधार बनाकर निर्णय लेना उचित प्रतीत नहीं होता, क्योंकि हजारों वर्ष पूर्व में रचित संस्कृत के अनेक ग्रन्थ हस्तलिखित पाण्डुलिपि के रूप में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं, जो निरन्तर प्राप्त होते रहते हैं। विशेषतः अंग्रेजी राज्य के समय और बाद में भी बाहरी और भारतीय अनेक अनुसन्धान कर्ताओं ने इस तरह की अनेक हस्तलिखित पाण्डुलिपियों की भारत और नेपाल आदि स्थानों से खोज की। तदनन्तर उन्हें भारत, इंग्लैंड, फ्रांस, जापान, अमेरिका, जर्मन, रूस, इटली आदि देशों में स्थापित कर न केवल उनका संरक्षण किया, अपितु सम्पादन, अनुवाद आदि उन पर अनेकविध कार्य करके उनका प्रकाशन भी किया। साथ ही, इन हस्तलिखित प्रतिलिपियों की परिचयात्मक सूची (Catalogue) भी प्रकाशित की। कुल मिलाकर आर्यदेश की यह सारगर्भित संस्कृतमयी सांस्कृतिक निधि विश्व में सर्वत्र फैली हुई है। अनेक स्तोत्रों की संकलित संस्कृत पाण्डुलिपियों के विषय में निम्न विवरण ज्ञातव्य है।

(१) नेपाल राष्ट्रिय अभिलेखागार से प्राप्त 'बौद्ध स्तोत्र संग्रह' अत्यन्त प्राचीन हस्तलिखित प्रतिलिपि के रूप में उपलब्ध है, जिसकी २०० पृष्ठों की प्रतिलिपि से लेकर १६ पृष्ठों की प्रतिलिपि तक कुल विभिन्न प्रकार की २० प्रतिलिपियाँ उपलब्ध होती हैं। इनमें सबसे विस्तृत प्रतिलिपि में लगभग १७६ भिन्न-भिन्न स्तोत्र विद्यमान हैं। इन स्तोत्रों में ६२ को छोड़कर शेष में रचयिता के नाम का उल्लेख ही नहीं किया गया है। इसके अन्तर्गत अधिकांश स्तोत्र पूर्ण हैं—इसका स्पष्ट उल्लेख 'धीः' पत्रिका के प्रथम अङ्क में किया गया है।

(२) 'धीः' पत्रिका के द्वितीय अङ्क में प्रकाशित, पूर्वोक्त राष्ट्रिय अभिलेखागार से प्राप्त 'बौद्ध स्तोत्र संग्रह' में ३८ स्तोत्र संकलित हैं और इनमें से केवल ६ स्तोत्रों पर ही रचयिता के नाम का उल्लेख है।

(३) 'नामसंगीतिस्तोत्रसंग्रह' में ५८ स्तोत्र संकलित हैं तथा उनमें से केवल १४ स्तोत्रों पर ही रचयिता के नाम का उल्लेख है।

(४) 'धारण्यादिसंग्रह' में सामान्यतया ३७१ ग्रन्थों का नामोल्लेख है। इनमें केवल ४८ ही स्तोत्र हैं। इनमें केवल छह स्तोत्रों के रचयिताओं के नाम का उल्लेख है।

(५) 'धीः' पत्रिका के १०वें और ११वें इन दो अङ्कों में तथा अलग से दो भागों में प्रकाशित 'दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थों की आधार सामग्री' में दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थों की विस्तृत सूची दी गई है। इनके अन्तर्गत संस्कृत में प्राप्त बौद्ध स्तोत्र और तत्सम्बन्धित ४४० ग्रन्थों की सूची दी गई है। इस सूची में प्रत्येक स्तोत्र का नाम, आधार पाण्डुलिपि का स्पष्टीकरण, पृष्ठ संख्या, पूर्ण या अपूर्ण का विवरण, पाण्डुलिपि की स्थिति, लिपि का परिचय और संस्थान के ग्रन्थालय में प्राप्त है या अप्राप्त है—इन सबका विवरण दिया गया है।

इन स्तोत्रों की सूची के अन्तर्गत भी अनेक ग्रन्थ ऐसे हैं, जिनमें अनेक स्तोत्र संगृहीत हैं, यथा—(१) गीत-स्तोत्रादिसंग्रह, पत्र ६५, नेपाल से प्राप्त (RAK)<sup>1</sup> (२) पञ्चशतस्तोत्रसंग्रह, पत्र १००, अमेरिका से प्राप्त (IASWR)<sup>2</sup> और जापान से प्राप्त (SMTUL)<sup>3</sup> (३) पीठस्तव एवं अन्य स्तोत्र, पत्र २०२, जापान से प्राप्त (MCBMDLJ)<sup>4</sup> (४) पूजास्तोत्रसंग्रह, पत्र ७, नेपाल से प्राप्त (RAK)<sup>5</sup> (५) वसुन्धरास्तोत्रादिसंग्रह, पत्र ६ नेपाल से प्राप्त (RAK)<sup>6</sup> (६) बौद्धस्तोत्र संग्रह, पत्र ४१, नेपाल से प्राप्त (RAK)<sup>7</sup> (७) बौद्धस्तोत्रसंग्रह, पत्र ३८४, फ्रांस से प्राप्त (CABATON)<sup>8</sup>।

उक्त पाण्डुलिपियों के अनेक संग्रह माइक्रोफिल्म (Micro-film) के रूप में केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ में भी प्राप्त हो चुके हैं। फिर

1. Rāstriya Abhilekhālaya, Kathmandu, Nepal.
2. Buddhist Sanskrit Manuscripts, Microfilm Collection belonging to the Institute For Advance Studies of World Religion, USA.
3. A Catalogue of Sanskrit Manuscripts in the Tokyo University Library, Tokyo, Japan 1965.
4. Microfilm Catalogue of Buddhist Manuscripts in Nepal, Vol. I, 1981 by Hidenobu Takaoka belonging to the Buddhist Library, Japan.
5. Rāstriya Abhilekhālaya, Kathmandu, Nepal.
6. Ibid.
7. Ibid.
8. Catalogue Sommaire des Manuscrits Sanscrits et Palis de la Bibliotheque Nationale, Par A. Cabaton, Ier Facicule. Manuscripts Sanscrits, Paris 1907.



भी यहाँ प्राप्त वे अधिकांश पाण्डुलिपियाँ प्राचीन लिपि में हस्तलिखित रूप में हैं, इसलिए तदन्तर्गत स्तोत्रों की संख्या, भोटानुवादों की संख्या और परस्पर तुलनात्मक अध्ययन करना आदि यद्यपि आवश्यक कार्य हैं, किन्तु ऐसा करना पर्याप्त कठिन प्रतीत होता है। ऐसी स्थिति में इंग्लैण्ड, जापान, अमेरिका आदि में उपलब्ध और यहाँ सूची मात्र के रूप में उपलब्ध स्तोत्रों के तुलनात्मक अध्ययन के बारे में तो कहना ही क्या है। अर्थात् कथमपि सम्भव नहीं है।

पूर्वोक्त स्तोत्र-संग्रहों में विद्यमान स्तोत्रों की जो संख्या दी गई है, वह उन सभी स्तोत्रों की परस्पर तुलनात्मक समीक्षा करके एवं स्थूल रूप से पुनः पुनः आवृत्त स्तोत्रों को तथा (स्तोत्रों से) असम्बद्ध कुछ ग्रन्थों को हटाकर निर्धारित की गई है। वह भी यदि मोटे तौर पर गिना जाय तो 'धीः' पत्रिका के द्वितीय अङ्क में लगभग २८२ स्तोत्र हैं तथा उसी पत्रिका के १० और १२ इन दो अङ्कों में २९२ स्तोत्र विद्यमान हैं। इसके अतिरिक्त अन्य अङ्कों में भी ४१ स्तोत्र उपलब्ध हैं। इस तरह कुल मिलाकर आज तक हमें प्राप्त प्राचीन लिपियों में हस्तलिखित स्तोत्रों की संख्या ६१५ के करीब है।

यहाँ उल्लिखित संख्या अतिस्थूल रूप में कही गई है। एकदम निश्चित संख्या निर्धारित करना सम्भव नहीं है, क्योंकि उसके अनेक कारण हैं, यथा—अनेक स्तोत्र ऐसे हैं, जिनके स्तुत्य विषय, स्तोत्र नाम समान होने पर भी रचयिता के नाम का अनुपलब्ध होना, अनेक स्तोत्रों का सूची के अलावा मूलग्रन्थ उपलब्ध न होना, मूल ग्रन्थ उपलब्ध होने पर भी पाण्डुलिपि का अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण, अस्पष्ट एवं अपूर्ण होना आदि। इन सब कारणों की वजह से निश्चित संख्या निर्धारित करना अत्यन्त दुरूह कार्य है।

हस्तलिखित प्राचीन पाण्डुलिपियों का परिचय देने के पश्चात् अब हम प्रकाशित स्तोत्रों के बारे में अपने विचार प्रकट करना चाहते हैं।

(१) पं० श्री जनार्दन शास्त्री पाण्डेय द्वारा संकलित एवं १९९४ में प्रकाशित 'बौद्ध स्तोत्र संग्रह' में विभिन्न प्रकार के १०८ स्तोत्र विद्यमान हैं। इनमें केवल ३१ स्तोत्रों के रचयिताओं का ही नामोल्लेख है। अधिकतर स्तोत्र तन्त्र से सम्बद्ध हैं तथा अधिकांश भोट भाषा में अनूदित भी नहीं हैं। इन स्तोत्रों के अन्तर्गत पाँच स्तोत्र ऐसे भी हैं, जिनमें भगवान् शाक्य सिंह की ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि के द्वारा स्तुति की गई है। यह एक प्रशंसनीय और अनुकरणीय विधान है,



क्योंकि भगवान् बुद्ध को स्तुत्य क्षेत्र (स्तुतियोग्य व्यक्ति) मान कर स्तुति की गई है। पुनश्च, इस 'बौद्ध स्तोत्र संग्रह' में ऐसे ग्रन्थ भी सम्मिलित कर लिये गये हैं, जो वस्तुतः स्तोत्र नहीं हैं, यथा—'आर्यभद्रचरीप्रणिधान' आदि। इसके अतिरिक्त इसमें कुछ स्तोत्र ऐसे भी हैं, जिनमें अंशतः बौद्धेतर देवों की स्तुति भी मिश्रित है—ऐसा हमें प्रतीत होता है।

(२) नेपाल से एक 'बौद्ध स्तोत्र संग्रह' प्रकाशित है, जो मुख्यतः पूजा-पाठ आदि के लिए ही प्रकाशित है। इस ग्रन्थ में स्तोत्र, धारणी, प्रणिधान आदि अनेकविध विषय सम्मिलित हैं। उक्त ग्रन्थ की विषयसूची में जो ४४ प्रतिपाद्य विषय उल्लिखित हैं, उनमें स्तोत्र तो केवल २४ ही उपलब्ध होते हैं। उनमें भी ४ (चार) स्तोत्र तो बौद्धेतर देवों से सम्बन्धित प्रतीत होते हैं।

(३) इस संस्थान के 'दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध अनुभाग' द्वारा प्रकाशित 'धीः' पत्रिका के अङ्क १ से लेकर ३१ अङ्कों तक ५१ बौद्ध स्तोत्रों का प्रकाशन किया गया है। प्रत्येक अङ्क के प्रारम्भ में दो स्तोत्र प्रकाशित किये गये हैं। २० से २६ अङ्क तक महाकवि आचार्य मातृचेट निर्मित 'वर्णार्हवर्णभगवतो बुद्धस्य स्तोत्रम्' इस एक स्तोत्र के १२ परिच्छेदों को क्रमशः प्रकाशित किया गया है। इन 'धीः' पत्रिका के अङ्कों में भी १७ स्तोत्रों को छोड़कर शेष स्तोत्रों के रचयिताओं का उल्लेख नहीं है।

इस प्रकार प्रकाशित और अप्रकाशित तथा प्रकाशितों की भी परस्पर तुलनात्मक समीक्षा करके द्विरावृत्त, त्रिरावृत्त रूप में प्राप्त स्तोत्रों में से एक को संगृहीत कर और शेष को छोड़कर कुल मिलाकर अनुमानित (लगभग) ७०५ स्तोत्र विद्यमान हैं। यह संख्या भी स्थूल रूप में ही समझना चाहिए, न कि यह सुनिश्चित और सुनिर्धारित है।

यहाँ उपरिवर्णित स्तोत्रों की संख्या में और इस ग्रन्थ के परिशिष्टों में प्रदत्त स्तोत्रों की संख्या में जो अन्तर होता है, उसका कारण यह है कि प्रकाशित स्तोत्रों की तालिका अलग से दी गई है, इसलिए परिशिष्ट में उल्लिखित हस्तलिखित स्तोत्रों में से अनेक प्रकाशित स्तोत्रों को हटा दिया गया है। इसी प्रकार जो अनेक 'स्तोत्रसंग्रह' ग्रन्थ हैं, वे सब परिशिष्ट में नहीं दिये गये हैं। इन सब कारणों से संख्या में अन्तर हुआ है। परिशिष्ट में अप्रकाशित हस्तलिखित

स्तोत्र और प्रकाशित स्तोत्र इस प्रकार दो वर्गों में विभाजन करके प्रकाशन किया गया है।

अब भोट भाषा में अनूदित एवं कंग्युर और तनग्युर संग्रहों में प्राप्त स्तोत्रों के बारे में प्रकाश डालने का प्रयास किया जा रहा है। वैसे तो स्तोत्रों के खोजने का आधार क्षेत्र काग्युर (बुद्धवचन) एवं तनग्युर (अर्थात् उन वचनों के अर्थप्रकाशक शास्त्र) ये दो ही हैं। इन दोनों में से प्रत्येक के सूत्रपक्ष और तन्त्रपक्ष ये दो भेद हैं। प्रथम काग्युर के सूत्र और तन्त्र दोनों पक्षों में स्तोत्रविषयक स्वतन्त्र ग्रन्थ भी हैं और परिच्छेदों के अन्तर्गत पठित स्तुति—इस तरह दो प्रकार के स्तोत्र हैं।

तनग्युर में परिगणित स्तोत्र के विषय में यह ज्ञातव्य है कि सामान्यतया सभी तनग्युर-संस्करणों के प्रारम्भ में एक स्तोत्रगण अलग से दिया हुआ है, किन्तु उनमें केवल सूत्र से सम्बद्ध स्तोत्र ही दिये गये हैं, न कि तन्त्र से सम्बन्धित। इसलिए वे स्तोत्रगण एकपक्षीय ही रहे हैं। इसलिए यहाँ यथासम्भव इन दोनों में से स्तोत्रों की खोजबीन कर एक विस्तृत स्तोत्रसूची ग्रन्थ के परिशिष्ट में देने का प्रयास किया गया है।

संक्षेप में काग्युर-संग्रह में सूत्र और तन्त्र दोनों पक्षों से सम्बन्धित ६५ स्तोत्र हैं। तनग्युर-संग्रह में १९४ स्तोत्र हैं और तनग्युर-संग्रह के सम्पूरक में ५६ स्तोत्र हैं। अतः कुल मिलाकर लगभग ३१५ स्तोत्र उपलब्ध होते हैं। इन सबका वर्गीकरण, नामसूची, पृष्ठसंख्या आदि का विवरण इस ग्रन्थ के परिशिष्ट में दो भाषाओं (संस्कृत और भोट) में दिया गया है।

वैसे तो भोट भाषा में प्राप्त तमाम संस्करणों की स्तोत्रसूची में दिये हुए स्तोत्रों की संख्या में, संस्कृत में प्राप्त स्तोत्रगणों में तथा संस्कृत में प्राप्त और भोट भाषा में अनूदित—इन सभी में परस्पर तुलनात्मक समीक्षण आदि कार्य करने की आवश्यकता है। उसी प्रकार समस्त स्तोत्रों में से प्रत्येक स्तोत्र का परिचय, संस्कृत में उपलब्ध होना, न होना आदि विश्लेषण करने का प्रयोजन भी है और आवश्यकता भी है, किन्तु समय के अभाव और आवश्यक सामग्री की अल्पता के कारण पूर्णतया प्रकाश डालना सम्भव नहीं हो सका, फिर भी विशिष्ट स्थलों में अनेक स्तोत्रों पर अपेक्षित विवरण पाद-टिप्पणी में दिये गये हैं।

सामान्यतया काग्युर और तनग्युर संग्रहों में अनेक स्तोत्र ऐसे भी हैं, जो स्वतन्त्र ग्रन्थ और परिच्छेद के अन्तर्गत न होने पर भी ग्रन्थ के भीतर सम्बद्ध



विषय के साथ देखने को मिलते हैं, जैसे गुह्यसमाजतन्त्र के १७वें परिच्छेद के प्रारम्भ में “अक्षोभ्यवज्र महाज्ञान वज्रधातु महाबुध।” (पृ० १०३) इत्यादि के द्वारा पञ्च तथागतों की स्तुति की गई है। इसी तरह दुर्गतिपरिशोधनतन्त्र में “नमस्ते शाक्यसिंहाय धर्मचक्रप्रवर्तक।” इत्यादि के रूप में शाक्यसिंहस्तोत्र दिया गया है। आचार्य नागार्जुन विरचित पञ्चक्रम के तृतीय स्वाधिष्ठान परिच्छेद के अन्तर्गत “शौषीर्य नास्ति ते काये मांसास्थिरुधिरं न च।” इत्यादि द्वारा मायाकाय की स्तुति उपलब्ध होती है। इस तरह अनेक स्तोत्र उपलब्ध होते हैं, किन्तु विस्तार के भय से उनका निरूपण नहीं किया गया है।

अपि च, इस प्रकार स्तुति रचना के गद्य, पद्य एवं मिश्रक ये तीन प्रकार उपलब्ध होते हैं। पद्य में दण्डक छन्द के रूप में एक ही चरण में सैकड़ों अक्षरों से अन्वित अति लम्बायमान श्लोक रचे गये हैं। कलिङ्ग-राजा के गुरु महाविद्वान् त्रिपिटकाचार्य साधुकीर्ति ने ‘श्रीकालचक्रदण्डकस्तुति’ नामक स्तोत्र की रचना की है। इसी प्रकार न्यायपरमेश्वर आचार्य धर्मकीर्ति ने “श्रीवज्रडाकस्तोत्रदण्डक” नामक स्तोत्र की रचना की है। आचार्य अश्वघोष द्वारा अनेक परिच्छेदों से युक्त ‘शतपञ्चाशतकस्तोत्र’ की तथा आचार्य अश्वघोष और आचार्य दिङ्नाग द्वारा ‘मिश्रकस्तोत्र’ आदि की रचना की गई है। इनमें दस से अधिक परिच्छेद हैं। मूल और वृत्ति के साथ ‘त्रिकायस्तोत्र’, ‘विशेषस्तव’, ‘देवातिशयस्तुति’ आदि अनेक स्तोत्र हैं। फिर भी सबसे अधिक स्तोत्रों की रचना किसने की है और किस देवता की स्तुति अधिक है? इन सबके बारे में प्रकाश डालना विस्तार के भय से छोड़ा जा रहा है।

हिमवान् भोट-देश के विद्वानों ने भी स्तुति विषयक अनेक स्तोत्र ग्रन्थ लिखे हैं। उन सबका यहाँ उल्लेख करना सम्भव नहीं है। फिर भी अतिसंक्षेप में प्रमुख विद्वानों के कार्यों पर यहाँ प्रकाश डालना अनुचित नहीं होगा। उदाहरणार्थ महापण्डित आचार्य चोंखापा लोसङ् डगपा (सुमतिकीर्ति) ने ‘प्रतीत्यसमुत्पाद-स्तुतिसुभाषितहृदय’ नामक स्तुतिराज आदि “महास्तोत्रचतुष्टय” सहित ५० अद्भुत स्तोत्रों की रचना की है। आचार्य खे-डुब-गेलेग-पालसङ् ने अपने गुरु महापण्डित चोंखापा जी की स्तुति, गुह्यसमाज मण्डल के ३२ देवताओं की स्तुति आदि लगभग २० स्तोत्र लिखे हैं। साक्या-डोगोन-छोस्-ग्यल-फगपा ने ‘गुरुसामान्यस्तुति’ तथा पुत्र सहित पिता राजा द्वारा स्तूप का निर्माण करते समय



१३७९ अक्षरों वाले दण्डकस्तोत्र सहित लगभग ४३ से अधिक स्तोत्रों की रचना की है।

प्रथम दलाई लामा जे-गेदुन-डुब ने ६०० सौ से अधिक अक्षर वाले दो दण्डक स्तोत्रों की प्रणिधान के साथ रचना की है। उसी प्रकार एकोत्तरिकास्तव, समन्तभद्रचक्र आदि २५ से अधिक स्तोत्रों को भी उन्होंने रचा है। द्वितीय दलाई लामा जे-गेदुन-ग्या-छो ने 'बुद्धबोधिसत्त्व स्तोत्रगण' नामक ३४ पत्रे के ग्रन्थ को रचा है। इसके अतिरिक्त आचार्य चोङ्खापा विरचित प्रतीत्यसमुत्पादस्तुति की टीका आदि कतिपय स्तोत्र वृत्तियाँ भी लिखी हैं।

पञ्चम दलाई लामा जी ने 'दश दिक्तागतशैक्षाशैक्षबोधिसत्त्वसंघस्तुति-विषयक सिद्धिसागरनिधिकोश' नामक स्तोत्रगण तथा 'प्राज्ञसिद्धेश्वरप्रमुख-सद्गुरुस्तोत्रगण'—इन दो स्तोत्रग्रन्थों की रचना की है। इनमें से प्रथम ग्रन्थ में १८ तथा दूसरे ग्रन्थ में २६० इस तरह २७८ स्तोत्र संगृहीत हैं। इनके भीतर १० से भी अधिक 'समन्तभद्रचक्र' नामक अद्भुत रचनाएँ भी सम्मिलित हैं।

सातवें दलाई लामा कलसङ्-ग्याछो ने 'शुभभास्कराभास' नामक ग्रन्थ की रचना की है, जिसमें गुरु, बुद्ध, बोधिसत्त्व आदि के स्तोत्र, प्रार्थना आदि को विषय बनाने वाले ३६० से भी अधिक लघुग्रन्थ संकलित हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने आचार्य चोंखापा विरचित 'मञ्जुश्रीमहास्तोत्र' की टीका भी लिखी है। चङ्क्या रोलपई दोर्जे ने 'प्रतीत्यसमुत्पादसुभाषितहृदय' की अद्भुत टीका 'सुभाषितमणिकोश' की रचना की है तथा अन्य अनेक स्तोत्र एवं तत्सम्बन्धित ९ ग्रन्थों का प्रणयन किया है।

सन् १७६२ के बाद उत्पन्न महाविद्वान् 'गुङ्-थङ्-तनपई डोनमे' ने (बुद्ध) शासनहृदयप्रकाशक मञ्जुनाथ चोंखापा-विषयक 'सार्थकस्तुति' नामक स्तोत्र एवं उसकी विस्तृत स्ववृत्ति की रचना की है। इसके अतिरिक्त 'अधिष्ठाननिधिद्वारोद्घाटन' नामक ग्रन्थ लिखा है, जिसमें भगवान् तथागत की स्तुति आदि अनेक स्तुति एवं प्रार्थना आदि से सम्बन्धित ८५ ग्रन्थ संगृहीत हैं। इसमें आचार्य नागार्जुन द्वारा गम्भीर दर्शन के प्रतिपादन से सम्बन्धित स्तोत्र 'मध्यमकालोक' भी संकलित है। इस ग्रन्थ का प्रतिपाद्य अभिधेय तो प्रायः चतुः-स्तव का संक्षिप्त सारांश ही है—ऐसा कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा। हमें ऐसा

प्रतीत होता है। इनके अतिरिक्त १० से अधिक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्तोत्र और कतिपय स्तोत्रवृत्ति इनके द्वारा रचित हैं।

इन विद्वानों के अतिरिक्त तनदर-ल्हहरमपा, दगेशेस् शेस्-रब्-ग्याछो, चोने लामा लोसङ्-ग्याछो आदि अन्य विद्वान् प्रमुख हैं, जिन्होंने भी अद्भुत रचना-शैली से सम्पन्न अनेक स्तोत्रों एवं टीकाओं की रचना की है।

स्तुतियों के बारे में स्तुत्य (व्यक्ति) एवं स्तुतिकर्ता की दृष्टि से देखा जाए तो अत्युत्तम शास्ता बुद्ध से लेकर पृथग्जन पर्यन्त इसमें अनेक महापुरुष परिगणित हैं। उदाहरणार्थ स्तुतिकर्ताओं में तन्त्र के उपदेष्टा शास्ता वज्रधर ने 'श्रीवज्र-मण्डलालंकार' नामक महातन्त्रराज में 'सर्वतथागतस्तोत्रराज' नामक स्तोत्र कहा है। उसी प्रकार 'गुह्यसमाज' आदि तन्त्रों में भी अनेक स्तोत्र उपलब्ध होते हैं। अपि च, सूत्रों के उपदेष्टा तथागत शाक्यमुनि ने भी 'सुवर्णप्रभाससूत्र' में "अतीत, अनागत, प्रत्युत्पन्न समस्त सम्यक्सम्बुद्धों की स्तुति" आदि तथा अनुशंसा सहित 'नमस्तारैकविंशतिस्तोत्र' आदि अनेक स्तोत्र कहे हैं। पूर्वोक्त सूत्र एवं तन्त्र दोनों के शास्ता वास्तव में एकस्वरूप हैं, फिर भी विशिष्ट प्रयोजन एवं विशिष्ट कर्म के कारण पृथक्-पृथक् रूप से उनका निरूपण भी देखने को मिलता है। उनके द्वारा क्षेत्र (स्तुत्य) विशेष की स्तुति करना अत्यन्त गम्भीर एवं अद्भुत है। उन परम-क्षेत्र के प्रति अन्यो के द्वारा स्तुति एवं सत्कार करना तथा शैक्ष-आर्य एवं पृथग्जनों द्वारा एक-दूसरे के प्रति विरचित स्तुतियाँ तो अनन्त हैं। इस विषय पर भूमिका आदि में अनेक बार कहा जा चुका है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में चार स्तोत्रों से सम्बद्ध अनेक प्रतिलिपियों का परस्पर तथा तिब्बती पाठ के साथ मिलान करके उनकी प्रामाणिक तुलना एवं समीक्षा की गई है तथा जिज्ञासुओं की सुविधा के लिए हिन्दी में अनुवाद भी किया गया है। ग्रन्थ की विस्तृत भूमिका में ग्रन्थ के 'चतुःस्तव' इस नामकरण की समीक्षा एवं रचनाकार आदि के बारे में विश्लेषण, स्वरूप परीक्षण, ग्रन्थ के संस्कृत मूल की प्राप्ति के प्रयास, ग्रन्थ पर अन्य विद्वानों के कार्य, आधारभूत भोट-संस्करण का निर्धारण, पाठभेद तथा वैज्ञानिक एवं प्रामाणिक संस्करण की विशेषता आदि पर प्रकाश डाला गया है।

ग्रन्थ का सारांश लिखते समय महत्त्वपूर्ण तथ्यों एवं उनकी पृष्ठभूमि पर पर्याप्त विचार प्रस्तुत किये गये हैं।



ग्रन्थ के परिशिष्ट में भगवान् बुद्ध के सूत्र एवं तन्त्र से सम्बद्ध प्रवचन और तत्सम्बद्ध तदभिप्रायिक टीका-ग्रन्थों (जो काग्युर एवं तनग्युर संग्रह) में विद्यमान स्तोत्रों को संकलित कर स्तोत्रगण की विस्तृत सूची दो भाषाओं में दी गई है। उसी प्रकार अप्रकाशित हस्तलिखित संस्कृत पाण्डुलिपियों से और प्रकाशित ग्रन्थों से प्राप्त स्तोत्रों का संकलन कर संस्कृत स्तोत्रों की विस्तृत सूची भी दी गई है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता आचार्य नागार्जुन हैं, अतः दो तिब्बती विद्वानों द्वारा आचार्य नागार्जुन की जीवनी और उनके गम्भीर दर्शन को विषय बनाकर रचित दो महत्त्वपूर्ण स्तोत्रों को भी दिया गया है। भारत के एक आधुनिक विद्वान् ने चतुःस्तव का तिब्बती से संस्कृत में पुनरुद्धार कार्य करते समय 'परमार्थस्तव' के स्थान पर 'स्तुत्यतीतस्तव' का पुनरुद्धार किया है। वह स्तोत्र अभिधेय की दृष्टि से अन्य तीन स्तोत्रों के अत्यधिक अनुकूल है, इस कारण प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए उसकी भोटपाठ से मिलान कर संशोधन के साथ उसे परिशिष्ट में दे दिया गया है।

बौद्ध वाङ्मय अखिल जगत् के कल्याणार्थ एक प्रेरणाप्रद एवं बहुमूल्य भारतीय सम्पत्ति है। तदन्तर्गत बुद्धवचन एवं तदाधारित शास्त्रों का संस्कृत मूल अधिकांशतया विलुप्त हो चुका है। उसे भोटभाषागत अनुवाद से पुनः संस्कृत में पुनरुद्धार करने के लिए संस्थान के पूर्वनिदेशक परमपूज्य प्रो० समदोङ् रिनपोछे ने एक महत्त्वपूर्ण कार्ययोजना परिचालित की है, जिसमें अब तक दर्जनों महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हुए हैं। उस योजना को व्यवस्थित ढंग से गतिशील रखने के लिए वर्तमान निदेशक प्रो० गेशे डवङ् समतेन समुचित व्यवस्था एवं सुविधाएं प्रदान कर रहे हैं। अतः मैं इन दोनों महानुभावों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

संस्थान के शोध-आचार्य (डॉ० अम्बेडकर चेअर) प्रो० रामशंकर त्रिपाठी बौद्ध विद्याओं के सुप्रसिद्ध प्रामाणिक विद्वान् हैं। उन्होंने इस ग्रन्थ को सार्थक और बोधगम्य बनाने के लिए पाठ-संशोधन से लेकर हिन्दी-अनुवाद, सम्पादन एवं प्राकशन तक समय देकर न केवल अपना बहुमूल्य योगदान किया है, अपितु मुझे सदा प्रेरित भी करते रहे हैं। अतः मैं उनके प्रति विशेष रूप से अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

मैं प्रो० शुबतन छोगडुब् (आचार्य मूलशास्त्र) का भी आभारी हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थ के संस्कृत पाठ की तुलनात्मक समीक्षा के लिए चतुःस्तव के



अन्तर्गत संगृहीत “नैरोपम्यस्तव” एवं “परमार्थस्तव” इन दो स्तोत्रों को अंग्रेजी अनुवाद के साथ मुझे सुलभ कराया है।

मैं डॉ० ठाकुरसेन नेगी (शोध-अधिकारी, दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध-अनुभाग) का आभारी हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थ से सम्बन्धित कई हस्तलिखित पाण्डुलिपि सुलभ कराई हैं तथा हस्तलिखित स्तोत्रों से सम्बद्ध अनेकविध सामग्री मुझे दी, जिससे मुझे अपने कार्य में अत्यधिक सहायता प्राप्त हुई है।

इस पुनीत कार्य को सम्पन्न करने के लिए प्रकाशन-अनुभाग के प्रभारी श्री समतेन छोस्फेल, प्रूफ-संशोधक श्री श्यामबिहारी तिवारी तथा श्रीमती छिमेद छोमो, कम्प्यूटरीकरण के लिए श्री तोपग्यल और श्री एस० पी० सिंह आदि सम्बद्ध लोगों ने महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया है। इसलिए मैं इन सबको हृदय से साधुवाद देता हूँ।

मैंने इस कार्य को अपनी बुद्धिक्षमता के अनुसार यथाशक्ति साङ्गोपाङ्ग एवं प्रामाणिक रूप से सम्पन्न करने का प्रयास किया है, फिर भी अज्ञानवश हुई त्रुटियों एवं असंगतियों को विद्वज्जन मेरी असमर्थता समझकर क्षमा करने का अनुग्रह करेंगे। मैं ऐसी आशा करता हूँ।

अन्त में मेरे इस पुनीत कार्य से उत्पन्न समस्त पुण्य जगत् के कल्याणार्थ प्रतिफलित हों तथा सभी सत्त्व गम्भीर शून्यता और प्रतीत्यसमुत्पाद के अनुत्तर तत्त्व का साक्षात्कार कर शीघ्रतापूर्वक सर्वज्ञता प्राप्ति की ओर उन्मुख हों, यह कामना करता हूँ।

बुद्धाब्द - २५४५

सन् - २००१

ज्ञलछेन नमडोल

तिब्बती संस्थान, वाराणसी।

तापाच्छेदाच्च निकषात् सुवर्णमिव पण्डितैः ।  
परीक्ष्य भिक्षवो ग्राह्यं मद्रचो न तु गौरवात् ॥

तुलनीय- श्रीमहाबलतन्त्रराज ( स्वे-दगे संस्करण 'ग' पृ० २१६ )

བསྐྱེགས་བཅད་བདར་བའི་གསེར་བཞིན་དུ॥

ཡོངས་སུ་བརྟགས་ནས་ང་ཡི་བཀའ॥

སྤང་བར་བྱ་ཡི་མོས་པའམ॥

གཞན་གྱིས་མཁས་པ་འདྲག་མི་བྱ॥

(དཔལ་སྟོབས་པོ་ཆེའི་རྒྱུད་ཀྱི་རྒྱལ་པོ། སྤྱི། བཀའ། རྒྱུད། 'ག' ३१६)

ཇི་ལྟར་འདིག་རྟེན་ལས་དང་ཉོན་མོངས་...

རྒྱུར་བཅས་བྱེད་རྒྱུར་ལྟར་འབྱུང་དང་॥

ལས་དང་ཉོན་མོངས་པ་དག་ལྟོག་རྒྱུ་

དེ་ཡང་འདྲེན་བས་རབ་ཏུ་གསུངས།

གང་ན་སྟེ་དང་ག་དང་རྒྱུད་པའི་

སྟུག་བསྐྱེལ་ངས་བར་མི་གནས་པ།

ཐར་པའི་མཆོག་དེ་སྟུ་བའི་བྱ་མཆོག་

དེ་ཡིས་རང་གིས་མཁྱེན་རྟེ་གསུངས།

(འདུས་པ་རིན་པོ་ཆེ་ཏོག་གི་གསུངས། མདོ། 'ན' १५५)

## སྒྲིང་བཙོང་།

༄༅། །དེ་ཡང་ཇི་སྒྲིང་དུ། ཚད་མར་གྱུར་པའི་སྒྲིས་མཚོག་དག་གི་  
དཔལ་གྱི་མགར་ལས།<sup>༡</sup>

གང་ཞིག་ལ་ནི་ཉེས་པ་ཀུན། །ཡོན་ཏན་ཡོང་ཡེ་མི་མངའ་ཞིང་།

གང་ལའང་རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་དུ། །ཡོན་ཏན་ཐམས་ཅད་གནས་གྱུར་པ།

གལ་ཏེ་སེམས་གིག་ཡོད་ན་ནི། །དེ་ཉིད་ལ་ནི་སྒྲིབས་འགྲོ་ཞིང་།

དེ་བསྟོད་དེ་ནི་བཀུར་བ་དང་། །དེ་ཡི་བསྟོན་ལ་གནས་པས་རིགས།

ཞེས་དང་། དེ་བཞིན་དུ།<sup>༢</sup>

གང་ལ་སྟོན་ནི་མི་མངའ་ཞིང་། །ཡོན་ཏན་དཔག་མེད་མངའ་བ་དང་།

ཐམས་ཅད་མཁྱེན་དང་ཐུགས་རྗེ་ཅན། །དེ་ལ་བདག་ནི་སྒྲིབས་སུ་མཆི།

ཞེས་གསུངས་པ་ལྟར་མཚོན་ཅིང་བསྟོད་འོས་ཀྱི་ཞིང་དམ་པ་ཆེ་བའི་ཆེས་མཚོག་

རྒྱལ་བ་དོན་ཇི་འཆང་དང་ངོ་བོ་དབྱེར་མ་མཆིས་པའི་སྤྲུལ་ཡིད་དམ་དང་། སངས་

རྒྱས་བྱང་སེམས་སོགས་དང་། དེ་དག་གི་སྒྲིབས་གསུང་ཐུགས་མཛད་པ་འཕྲིན་ལས་

དང་བཅས་པའི་བསམ་གྱིས་མི་བྱབ་པའི་གསང་བ་གསུམ་གྱི་ཡོན་ཏན་དག་ནི།

ཕལ་དང་ཕལ་གྱི་བསམ་སྟོད་ཀྱི་ར་བའི་སྟོམ་གཞི་ལས་ཡོངས་སུ་བཞུགས་ཞིང་།

<sup>༡</sup> སྟོབ་དཔོན་ན་དབྱངས་ཀྱིས་མཛད་པའི་བརྒྱུ་ཕྱེ་བཅུ་པ་ཞེས་བྱ་བའི་བསྟོད་པ། (ཐུ། བསྟན།  
བསྟོད་ཚོགས། 'ཀ' ༡༡༠)

<sup>༢</sup> སྟོབ་དཔོན་བདེ་བྱེད་བདག་པོས་མཛད་པའི་ལྷ་ལས་སུལ་དུ་བྱུང་བར་བསྟོད་པ། (ཐུ།  
བསྟན། བསྟོད་ཚོགས། 'ཀ' ༩༩)



2 སྤྱབ་དཔོན་དཔའ་བོས་མཛད་པའི་བསྐྱེད་པ་དེ་ལ་བོད་དཔེ་རྣམས་སྟུ། ལེའུ་ ༡༣ ལྷན་དུ་  
ཡོད་པ་ཞིག་དང་། ཡང་ལེའུ་གཅིག་བྱར་དུ་ཡོད་པ་བཅས་ཁྲོན་ལེའུ་བཅུ་གསུམ་ཡོད་པ་ལས།  
གང་སྒྲིམ་གྱི་མཚན་ཤུང་དེ་ལེའུ་དང་པོ་ཁོ་ནའི་མཚན་ཤུང་ཡིན་པ་ལས་གཞུང་ཆ་ཆང་གི་མིན་  
མོད། འོན་ཀྱང་བོད་འབྱུར་རྣམས་སུ་དེ་ལྟར་དུ་འཁོད་པ་ནི་མ་དག་སྒྲུག་འབྲམས་ཤིག་ཡིན་  
པར་ལེའུ་སོ་སོའི་མཚན་ཤུང་དང་། ལེགས་སྒྱུར་གྱི་སྒྱུ་དཔེ་ལ་གཟིགས་ན་ལེགས་པར་  
ཁྲམས་རྒྱས་སོ། །ལེགས་སྒྱུར་སྐད་ཐོག་ལེའུ་ ༡༣ ལས་གཞན་པའི་ལེའུ་བྱུར་པ་དེ་གསལ་  
མེད་པས་དཔྱད་པར་གྱུ་ལོ།

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

१ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

२ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

འགལ་བའི་གཙུང་རྩེ་བརྒྱུ་ཡིས་དགག་དུ་མེད། ।

ཅེས་ཇི་སྒྲིབ་གསུངས་པ་དག་དང་ཕྱོགས་འདྲ་བའི་ཚུལ་དུ་གནས་སོ། ।

དེ་འདྲ་བའི་བསྟོན་ཡུལ་ཁྱད་པར་ཅན་རྣམས་ལ་བསྟོན་པ་མཛད་པའི་ཆེ།  
ཐ་སྟད་རྟེན་འབྲུང་གི་གཞུང་ལམ་ལ་བརྟེན་ནས་ཅི་དགར་བསྟོན་དུ་ཡོད་ན། སློབ་  
དཔོན་ཉིད་ཀྱི་མཛད་པའི་དོན་དམ་པར་བསྟོན་པ་དང་། འཕགས་པ་འཇམ་  
དཔལ་གྱི་དོན་དམ་པའི་བསྟོན་པ་བཅས་སུ།

ཆོས་རྣམས་ཐམས་ཅད་སྟོང་པ་ལ། །སྤུ་ལ་བསྟོན་ཅིང་སྤུ་ཡིས་བསྟོན།

ཅེས་དང་།

སྟེ་བ་མེད་ཅིང་གནས་པ་མེད། །འཇིག་རྟེན་པ་ལས་ཤིན་དུ་འདས།

ངག་གིས་བཙོད་པའི་སྟོན་ཡུལ་མིན། །མགོན་ཁྱེད་ཇི་ལྟར་བསྟོན་པར་བགྱི།  
ཞེས་སོགས་གསུངས་པའི་དོན་ཇི་ལྟར་འབྲེལ་བར་བྱེད་ཅི་ན། ཆོས་ཐམས་ཅད་  
རང་བཞིན་གྱིས་གྲུབ་པས་ཡོངས་སུ་སྟོང་ན་ཡང་། རྟེན་ཅིང་འབྲེལ་བར་འབྲུང་  
བའི་རྟེན་ཉིད་འདི་པ་ཙམ་གྱི་ཚུལ་དུ་སྤྲོ་ན་མེད་པའི་བསྟོན་ཡུལ་གང་ལ། སློ་  
ཅན་དད་འདུན་ཅན་དག་གིས་དད་གུས་ཆེན་པོའི་སྟོན་པ་བསྟོན་ཅིང་བསྐྱབས་པའི་  
བྱ་བྱེད་ཀྱི་རྣམ་གཞག་མཐའ་དག་གཞན་ངོ་ཙམ་དང་འབྲུལ་ངོ་ཁོ་ནར་བསྐྱུལ་མི་  
དགོས་པར་རང་ལྟར་ལ་བསྟོན་མེད་དུ་འཇོག་དུ་ཡོད་པ་ལ་གོང་སྟོན་ལྟར་འགལ་

² གྲི་ བསྟན། (བསྟོན་ཆོགས། 'ཀ' ༩༠, ༩༠)



ཀྱིན་གྱི་ཆ་ཕྱ་མོ་ཙམ་ཡང་མེད་དོ། །དེ་ལྟར་ཡང་སློབ་དཔོན་ཉིད་གྱིས་མཇུག་  
པའི་གོང་སློབ་ཀྱི་གཞུང་དེ་དག་ཏུ།

འོན་ཀྱང་འཇིག་རྟེན་བདག་ས་རྟེན་གྱིས།

ཁྱེད་ཀྱི་ཅི་འདྲ་དེ་བཞིན་དུ།

བདག་གིས་གུས་པས་སྒྲ་མ་བརྟོད།

ཅེས་དང་།

དེ་ལྟ་ན་ཡང་གང་འདྲ་བས།

དེ་བཞིན་ཉིད་དོན་སྤྱོད་ཡུལ་གྱི།

འཛིག་རྟེན་བཏགས་པ་ལ་གནས་ནས། །

གུས་པ་ཚོན་པོས་བདག་གིས་བསྟོད།

ཅེས་དང་། དེ་བཞིན་དུ་བསྟོད་པ་ལས་འདས་པར་བསྟོད་པ་ལས་ཀྱང་།<sup>3</sup>

སྒྲ་མེད་ལམ་ལས་གཤེགས་པ་ཡི།

དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་བསྟོད་འདས་ཀྱང་། །

གུས་ཤིང་སྤྱོད་པའི་སེམས་ཀྱིས་ནི།

བདག་གིས་བསྟོད་འདས་བསྟོད་པར་བབྱ། །

ཞེས་སོགས་གསུངས་པས་ལེགས་པར་འགྲུབ་པོ།

2 རྒྱ། བརྟམ། (བརྟོད་ཆོགས། 'ཀ' ༥༠, ༧༠)

3 སྒྲིབ་ བསྟན། (བསྟོད་ཆོག་ལ། 'ཀ' ལེ)



མེད་པར་ཐལ་བ་དངོས་སྒྲིའི་གཏམ།     ।

དང་དྲུ་ལེན་བཞིན་དབུ་མར་སྒྲ།     ।

ཞེས་གསུངས་པ་ལྟར་དཔལ་ལྷན་དབུ་མ་ཐལ་འགྱུར་བའི་ཡང་དག་པའི་ལྟ་བ་  
ལས་རིང་དྲུ་གྱུར་པའི་འདོད་ཚུལ་དག་རང་ཐོག་དྲུ་བབས་པར་འགྱུར་རོ།

རང་བཞིན་གྱིས་སྒྲོང་པའི་ཕྱགས་ལ་བསྟོད་བྱ་བསྟོད་བྱེད་སོགས་ཀྱི་སྒྱུ་  
འབྲས་བྱ་བྱེད་ཀྱི་ནམ་གཞག་ཀྱན་ཇི་ལྟར་འཐད་ཚུལ་ནི།   སྟོབ་དཔོན་ཉིད་ཀྱི་ཅ་  
ཤེས་པ་

གང་ལ་སྒྲོང་པ་ཉིད་རུང་བ།   དེ་ལ་ཐམས་ཅད་རུང་བར་འགྱུར།”

ཞེས་དང་།   དེ་བཞིན་དུ།<sup>१</sup>

གང་ཕྱིར་རྟོན་འབྱུང་མ་ཡིན་པའི།   ཆོས་འགའ་ཡོད་པ་མ་ཡིན་ནོ།

དེ་ཕྱིར་སྒྲོང་པ་མ་ཡིན་པའི།   ཆོས་འགའ་ཡོད་པ་མ་ཡིན་ནོ།

ཞེས་བསྟན་ལ་སྟོན་པ་གཉིས་པ་ལྟར་སྒྲགས་པའི་ཆད་མའི་སྒྲིམ་བྱ་དེའི་དཔལ་གྱི་  
མགྱུར་ལས་ཐོན་པའི་གསུང་མཆོག་མཚུངས་པ་མེད་པ་འདི་དག་ལ་ཆོས་མཐུན་  
གྱི་ཞོལ་བ་གང་གིས་ཀྱང་དྲུས་ནམ་དྲུ་ཡང་བཞི་བར་མི་རྒྱས་པས་ཚུལ་འདི་ལ་  
ཆད་མས་དྲངས་པའི་ངེས་པ་བདུན་པོ་རྟོད་པར་བྱའོ།

<sup>१</sup> ཟླ། བསྟན། (དབུ་མ། ‘ཅ’ ༡༥)

<sup>२</sup> ཟླ། བསྟན། (དབུ་མ། ‘ཅ’ ༡༥)



སྤྱི་དང་རྟེན་འབྲུང་གཉིས་གཅིག་གྲགས་སུ་གཅིག་འབྲེ་བའི་ཚུལ་འདི་  
 ཆེས་ཡ་མཚན་པར་གཟིགས་དེ། ཆངས་སྤྱི་བཞད་པ་དྲི་རྩེས་མཛད་པའི་  
 ལེགས་བཤད་སྤྱི་པོའི་སྤྱི་མར་བསྟོད་པ་ལས།

རང་བཞིན་གྱིས་སྤྱི་སྤྱི་བཞིན་བརྟེན་ནས་འབྲུང་། ।

ཀུན་རྫོག་འབྲུལ་སྤྱི་སྤྱི་བཞིན་གཞི་རྩ་དབུ་། ।

སྤྱི་སྤྱི་མི་འགལ་འགལ་མེད་གྲགས་ཉིད་དུ། ।

འཆར་བའི་ངང་ཚུལ་ཚུལ་འདིའི་སྤྱི་གཞི་ཡིན། ।

སྤྱི་མེད་སྤྱི་བར་སྤྱི་བའི་རྟེན་འབྲུང་ཆོས། ।

རང་གི་རང་བཞིན་འབྱུང་མེད་མཐའ་བྲལ་དང་། ।

སྤྱི་པས་སྤྱི་གཞན་བཞུ་བཞིན་ཇི་ལྟའི་ཚུལ། ।

བཟོད་བྲལ་བཟོད་པའི་རྒྱར་གྱུར་ཚུལ་འདིར་ལྟོས། ।

ཞེས་དང་།<sup>१</sup>

རྟེན་ཞེས་ཆོས་ཉིད་མི་འདོར་ལ། ।

འབྲུང་ཞེས་འཛིག་རྟེན་ཚུལ་ཡང་མཐུན། ।

རིགས་ཚུལ་ཀུན་ལས་སྤྱི་པོ་བཞིན། ।

རྟེན་ཅིང་འབྲུལ་འབྲུང་ཆད་མའི་བཀའ། ।

གཤིས་དཔྱད་སྤྱི་ཡིས་རྟེན་མིན་ཐ་སྟོད་དུ། ।

<sup>१</sup> དཔེ་ཅིང་། ३

<sup>२</sup> དཔེ་ཅིང་། ༤







སྤྱི་པ་གྱུ་ཆེན་པོས་གྱུ་ཅིང་སྤྱད་མ་སྤྱད་སྟོགས་ཀྱི་བརྟེན་ཚུལ་ལ་བྱད་པར་ཆེས་  
ཤིན་ཏུ་མང་ངོ་॥

དེ་ཡང་འཕགས་ཡུལ་གྱི་མཁས་པ་ཆེན་གཟུ་བོར་གནས་ཤིང་། རིགས་  
པ་ཡང་དག་གི་རྗེས་སུ་བསྟེགས་པའི་སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་མཐོ་བཙུན་རྒྱལ་བྱིང་དང་།  
བདེ་བྱིང་བདག་པོས་རིམ་པ་བཞིན་ཁྱད་པར་འཕགས་བསྟོན་དང་། ལྷ་ལས་ཕུལ་  
བྱུང་གི་བསྟོན་པ་དག་མཛད་ཅིང་། སློབ་དཔོན་གེས་རབ་གོ་ཆས་གཞུང་དེ་  
གཉིས་ཀྱི་འགྲེལ་པ་མཛད་པ་བཅས་སུ་ཕྱི་ནང་གི་སྟོན་པ་དང་བསྟན་པའི་བྱར་པར་  
ལ་དཔུང་ཞིབ་ལེགས་པར་མཛད་ནས། མཚོག་དམན་གྱི་ཁྱད་པར་རྣམས་ཆེས་  
མངོན་གསལ་དོད་པོའི་སྟོན་པ་གསལ་ཁ་གཏོང་དེ། བྱང་རིམ་ལོ་རྒྱུས་ཀྱི་དཔེ་དང་  
རྒྱགས་གནད་དོན་རྣམས་རྒྱ་མཚན་རིགས་པའི་སྲང་ལ་གཞལ་དེ། སྟོན་པ་སངས་  
རྒྱུས་དང་དེའི་བསྟན་པ་ལ་གེས་ནས་དད་པ་ཐོབ་པའི་རང་རྟགས་མངོན་གསལ་  
ཅན་གྱི་བསྟོན་པ་ཆེས་མད་དུ་བྱུང་བ་དག་བཅུ་མས་པར་མཛད་ཡོད། བསྟོན་  
ཚོགས་ནང་ཡོད་བསྟོན་པ་གཞན་པལ་ཆེ་བར་མཚོག་དམན་མཚོན་བྱེད་ཀྱི་གསལ་  
ཁ་མངོན་གསལ་ཅན་དེ་ལྟ་བུ་གཏོང་བ་མེད་ཀྱང་། གང་ལྟར་སྟོན་པ་སངས་རྒྱུས་  
དང་དེའི་བསྟན་པ་ལ་གེས་ནས་དད་པ་ཐོབ་པའམ། ཆད་མས་དྲངས་པའི་ངས་  
པ་བཟླ་བོ་རྟེན་པའི་སྟོན་པ་བསྟོན་པ་གཙོ་ཆེ་བའི་ཚུལ་དུ་ཡོད། དེ་ལ་ཡང་  
སྟན་པ་གི་རྒྱན་དང་ཉམས་དུ་མས་རབ་དུ་བརྒྱན་ཅིང་སྤྱད་ལ། ཆིག་སྤྱོར་ཚུལ་  
ལ་མཁས་པའི་དག་གི་དཔལ་ཕུན་སྲུང་ཚོགས་པ་དང་ལྷན་པའི་སྟོན་པ་བསྟོན་པ།  
སློབ་དཔོན་དཔལ་བོས་མཛད་པའི་བསྟགས་འོས་བསྟགས་བསྟོན་དང་། བསྟོན་པ་

བརྒྱུ་ལ་བཅུ་པ་དང་། ཡང་སྒྲིབ་དཔོན་དཔལ་བོ་དང་། སྒྲིབ་དཔོན་ཕྱོགས་གྲང་  
 གཉིས་ཀྱིས་མཇད་པའི་སྤྲེལ་མར་བསྟོད་པ་སོགས་དང་། རྗེ་བདག་ཉིད་ཆེན་  
 པོས་མཇད་པའི་བྱམས་འཇམ་དབྱངས་ཀྱི་བསྟོད་ཆེན་དང་། ཆོས་རྗེ་གྲགས་  
 པ་བྱང་རྒྱལ་དཔལ་བཟང་པོའི་ཆེ་བའི་ཡོན་ཏན་ལ་བྱ་དཀའི་རྒྱལ་གྱིས་བསྟོད་པ་  
 དང་། ཆངས་སྤྲས་བཞད་པ་དོན་རྗེ་གྲགས་སྟན་ཕྱོགས་ལས་རྣམ་པར་རྒྱལ་བའི་  
 རྗེས་མཇད་པའི་ལེགས་བཤད་སྟོང་པོ་ལས་བརྒྱམས་ཏེ་སྤྲེལ་མར་བསྟོད་པ་  
 དགོངས་དོན་ཟད་མེད་རྣམ་མཁའ་མཇོད་ཀྱི་སྒོ་འཕར་བྱ་ཆེར་བྱེ་བ་རྗེས་ལྷན་  
 སྤྲིན་གྱི་སྒྲུ་དབྱངས་ཞེས་བྱ་བ་སོགས་གིན་ཏུ་མང་བས་འདིར་བཀོད་པ་ནི་མཚན་  
 པ་ཙམ་མོ།།

དེ་ལྟར་ཆོག་གྱི་སྒྲིམ་པ་གྱི་ཆེན་པོས་རབ་དྲུ་བརྒྱན་ཅིང་མ་སྤྱད་ཀྱང་  
བཅོད་བྱ་སྤྱི་བྱེ་བཤལ་ཅི་རིགས་ཀྱི་སྒྲོར་ལ་རང་བཞིན་བཅོད་པའི་རྒྱན་གྱི་ངང་ཚུལ་  
ལས་མ་འདས་པར་བསྟོད་པ་སྟོབ་དཔོན་ཉིད་ཀྱིས་མཛད་པའི་བསམ་གྱིས་མི་བྱབ་  
པར་བསྟོད་པ་སོགས་བསྟོད་པ་རི་སྟོད་ཅིག་དང་། རྗེ་བདག་ཉིད་ཆེན་པོས་མཛད་  
པའི་སྟོན་པ་སངས་རྒྱས་ཀྱི་བསྟོད་པའི་རྒྱལ་པོ་རྟེན་འབྱེལ་བསྟོད་པ་ལེགས་བཤད་  
སྟོང་པོ་དང་། རྗེ་གྲང་ཐང་གི་གསུང་བསྟོད་པ་དོན་ལྡན་མ་སོགས་གིན་དུ་མང་  
བས་མ་སྟོས་སོ། །

དེ་ལྟར་སངས་རྒྱུ་མཉམས་སྒྲིལ་གྱི་ཡོན་ཏན་གྱི་བྲག་པ་ལ་དམིའ་  
སྲུ་བཀར་ནས་བསྟོད་པ་གིན་དུ་མང་པོ་ཡོད་པ་ལས་ཕལ་ཆེ་བ་དངོས་ཤུག་བརྒྱད་  
གསུམ་ནས་མཛད་པ་ཀུན་གྱི་རབ་དང་ཕུལ་དུ་གྱུར་པ་གསུང་གི་མཛད་པ་དང་།









རང་ཉིད་སྐྱེས་ལུ་དམ་པའི་སྤྱོད་པ་དང་མཐུན་པར་མཆོན་ཐུབ་པ་དང་། ཞིང་  
 རྒྱུད་པར་ཅན་དེ་དག་ལ་ཡོན་ཏན་མཛད་དུ་བྱུང་བ་ཇི་ལྟ་བུ་མངའ་བ་རྟོགས་ཐུབ་པ་  
 དང་། ལྟོས་ས་གང་ལ་ལྟོས་ཏེ་ཇི་ལྟར་རྒྱུད་པར་འཕགས་ཆུལ་དང་། རྒྱབས་  
 ཡུལ་མཆོག་དང་མཆོག་མ་ཡིན་པའི་རྒྱུད་པར་གཤམ་ཐུབ་པ་དང་། ཡོན་ཏན་དེ་  
 དག་ལ་དམིགས་ནས་རྒྱབས་སུ་འགྲོ་བ་དང་། བཞེག་དུ་མཛད་པའི་དད་གུས་  
 འཕེལ་བ་དང་། ཡོན་ཏན་དེ་དག་རང་བརྒྱུད་ལ་མངོན་དུ་བྱ་འདོད་ཀྱི་འདུན་པ་  
 དང་སྤོ་བུགས་དྲག་པོ་སྐྱེས་ཐུབ་པ་དང་། གོང་མའི་རྒྱུད་པར་དེ་དག་ལ་གཤམ་  
 ནས་དད་པ་ཐོབ་ཐུབ་པ་དང་། དེ་དག་གི་བྱེད་པ་ལ་བརྟེན་ནས་རིམ་པས་སྟོན་  
 པ་དང་བསྟན་པ་ལ་ཚད་མས་དྲངས་པའི་ངེས་པ་རྣམ་དག་འདྲིན་ཐུབ་པ་དང་  
 རྒྱགས་དེའི་ལུང་རྟོགས་ཀྱི་བསྟན་པ་རྣམས་རང་རྒྱུད་ལ་དངོས་སུ་བསྐྱེན་ཐུབ་པའི་  
 ཚུལ་བལ་ལ་ཞུགས་འདོད་པ་དང་། དེ་བཞིན་དུ་མཆོད་ཅིང་བསྟོད་པའི་རྣམ་  
 དཀར་གྱི་བྱ་བ་བཟང་པོ་དག་ལ་བརྟེན་ནས་བསོད་ནམས་རྒྱབས་ཆེན་གསོག་ཐུབ་  
 པ་དང་། རྒྱབས་ཡུལ་དེ་དག་གིས་ཆེ་རབས་ཐམས་ཅད་དུ་རྗེས་སུ་འཛིན་པ་  
 དང་། གཤམ་རྒྱུད་བྱིན་གྱིས་བརྒྱབས་པ་དང་། གོང་མའི་རྒྱུད་པར་དག་སྤྱར་དུ་  
 རྒྱུད་ལ་སྐྱེ་བའི་གྲོགས་འཕྲིན་ལས་མཛད་པ་སོགས་དགོས་པ་གིན་དུ་མང་ངོ་ །

སྒྲོབ་དཔོན་ཀླུ་མྱུབ་གྱིས་བསྟོད་པའི་སྒྲོར་ལ་ཕྱག་རྒྱེས་

གང་བཞག་གི་སྒྲོར།

སྐབས་འབྲེལ་གྱི་གཞུང་འདི་དག་གི་མཇེད་པ་པོ་སྒྲོབ་དཔོན་ཀླུ་མྱུབ་གྱིས་  
 མཇེད་པའི་བསྟོད་ཆོགས་ནང་། བསྟན་པའི་བདག་པོ་སྟོན་པ་སངས་རྒྱས་དང་  
 དེའི་མཇེད་པ་ཀུན་གྱི་རབ་དང་ཕུལ་གྱུར་གསུང་གི་མཇེད་པའི་ཕྱག་རྒྱེས་རྟེན་  
 འབྱུང་སྟངས་པའི་དོན་རྩིས་ལྟར་གསུངས་ཚུལ་ལ་ཕྱགས་རབ་དུ་འཕྲོག་དེ། ཚུལ་དེ་  
 ལས་བརྒྱལས་དེ་བསྟོད་པའི་བསྟོད་པ་གཙོ་ཆེ་བའི་ཚུལ་དུ་ཡོད། སྒྲོབ་དཔོན་  
 ཆོགས་ནང་སྒྲོབ་དཔོན་གྱིས་མཇེད་པའི་བསྟོད་པ་རྒྱས་བརྒྱས་བཅུ་དག་ཙམ་  
 བཞགས་པ་ལས། བསམ་གྱིས་མི་ཁྱབ་པར་བསྟོད་པ་སོགས་སྐབས་སུ་བབས་  
 པའི་“བསྟོད་པ་རྣམ་པ་བཞི་”ཞེས་པའི་གཞུང་དེ་དག་དང་། བསྟོད་པ་ལས་  
 འདས་པར་བསྟོད་པ་དང་། ཤེར་ཕྱིན་གྱི་བསྟོད་པ་དང་།<sup>१</sup> འཕགས་པ་རྒྱེ་  
 བཅུན་འཇམ་དཔལ་གྱི་དོན་དམ་པའི་བསྟོད་པ་དང་། སྒྲོབ་མེད་པའི་བསྟོད་པ་  
 བཅས་སུ་གཙོ་བོ་སྟོན་པས་ཟབ་མོ་སྟངས་དང་རྟེན་འབྱུང་གི་དོན་རྩིས་ལྟར་  
 ཚུལ་ལས་བརྒྱལས་དེ་བསྟོད་པར་མཇེད་ཡོད། ཆོས་དབྱིངས་བསྟོད་པ་ནི།  
 སྟོང་གཞི་ཆོས་ཅན་སེམས་ཀྱི་གནས་ལྷགས་མཐར་ཐུག་རང་བཞིན་གནས་རིགས་  
 སམ། ཁམས་བདེ་བར་གཤེགས་པའི་སྟིང་པོ་ལས་བརྒྱལས་དེ་བསྟོད་པ་ཞིག་

<sup>१</sup> སྒྲོབ་དཔོན་གྱི་མཆན་ཐོག་ལ་ཡོད་པའི་“ཤེས་རབ་ཀྱི་པ་རྣམ་དུ་ཕྱིན་པའི་བསྟོད་པ་”འདི་དང་  
 སངས་རྒྱུན་ཞུས་པའི་ ‘बौद्धस्तोत्र संग्रह’ ཞེས་པ་དེའི་ནང་ ‘श्रीलक्षाभगवाती’  
 ཞེས་པ་དེའི་མཆན་ཐོག་ལ་བཞུགས་ཡོད་པས་དཔྱད་པར་བྱའོ།



ཡིན། རྩེ་བཙུན་འཇམ་དཔལ་གྱི་སྤྱིང་རྩེ་ཆེན་པོ་ལ་བསྟོན་པ་ཅེས་པའི་བསྟན་  
 རོན་ནི་ཆིག་གིས་ཟིན་ཆོད་ལྟར་དང་། སེམས་ཀྱི་དོ་རྩེའི་བསྟོན་པ་ཅེས་པ།  
 བདེ་སྤྱག་ཐམས་ཅད་ཀྱི་བྱེད་པོ་གཙོ་བོ་སེམས་ཡིན་པ་དང་། ཉོན་མོངས་སྤྱིང་བ་  
 པོ་དང་། སངས་རྒྱས་པ་པོ་ཡང་དེ་ཉིད་ཡིན་སྟེ་ཀྱི་བཞེད་གཞི་ལས་བརྒྱམས་ཏེ་  
 བསྟོན་པ་ཞིག་ཡིན། བསྟོན་པ་དེའི་བསྟན་རོན་ལ་བརྟགས་པའི་ཆེ་དེ་ལ་སྤྱགས་  
 ལུགས་ལྟར་གྱི་ཐུན་མིན་གྱི་འབྲེལ་ལུགས་ཤིག་ཀྱང་བྱེད་དུ་མེད་དམ་སྟུམ་པས་  
 དཔུང་པར་བྱའོ།

སྐྱེ་གསུམ་ལ་བསྟོན་པའི་ཅ་བ་དང་དེའི་རང་འབྲེལ་གཉིས་སུ་རྒྱལ་བ་  
 རྣམས་ཀྱི་ཆོས་ཀྱི་སྐྱེ་དང་། ལོངས་སྤྱོད་རྩོགས་པའི་སྐྱེ་དང་། སྤྱལ་སྐྱེ་བཙུན་  
 ཀྱི་ཆེ་བའི་ཡོན་ཏན་ལ་མཆོག་དུ་བསྟོན་ཅིང་བསྤྱགས་པར་མཇེད་པ་ཞིག་ཡིན།  
 སེམས་ཅན་མགྲུ་བར་བྱེད་པའི་བསྟོན་པ་དང་། གནས་ཆེན་པོ་བརྒྱད་ཀྱི་མཆོད་  
 རྟེན་ལ་བསྟོན་པ་ཁག་གཉིས་དང་། མཇེད་པ་བཙུ་གཉིས་ཀྱི་ཚུལ་ལ་བསྟོན་པ།  
 ཕུག་འཆལ་བའི་བསྟོན་པ། དཔུལ་བ་ལས་འདོན་པ་ཞེས་བྱ་བའི་བསྟོན་པ་དག་  
 ནི། དངོས་སུ་ཆིག་གིས་ཟིན་ཆོད་ལྟར་གྱི་མཆོད་བྱང་ཉིད་ལས་བཞེད་བྱ་གང་  
 སྟོན་ཆོད་དཔག་སྤྱི་བའི་ཚུལ་དུ་ཡོད་ཀྱང་། དངོས་དོན་ལ་འདི་དག་ཆང་མ་  
 དངོས་ཤུགས་བརྒྱད་གསུམ་ནས་སངས་རྒྱས་ལ་བསྟོན་པ་ཁོ་ན་ལས་མ་འདས་སོ།  
 དེ་ཡང་བསྟོན་ཚུལ་ལ་སངས་རྒྱས་ཀྱི་མཇེད་པ་བཙུ་གཉིས་དང་། དེ་ཉིད་གང་དུ་  
 བྱོན་པའི་གནས་དང་། དེའི་མཆོད་རྟེན་དང་། དེའི་མཇེད་འཕྲིན་སྤྱགས་  
 ལས་བརྒྱམས་ཏེ་བསྟོན་པ་གསུག་གོ།



“བསྟོད་པ་བཞི་པ་”ཞེས་པའི་ཐ་སྟོད་ཇི་ལྟར་

བྱང་ཚུལ་ལ་དཔྱད་པ།

[illegible]





གཞུང་གི་བླ་མ་པ་སོ་སོའི་གསལ་ཁ་ཡང་མེད་པར་“ཡང་ཇི་སྐད་དུ”ཞེས་པ་དང་།  
“ཡང་བཞུང་པ་”ཞེས་སོགས་གསུངས་པའི་སྒྲིམ་ཁུང་འདྲིན་མཛད་ཡོད།

དེས་ན་ཆོགས་བཅད་གཉིས་ཙམ་ལ་མཁས་པ་དེ་གཉིས་ཀས་གསལ་ཁ་  
གཅིག་པ་བཞུང་པ་གང་ཞིག་ལ། གཞན་ལ་གསལ་ཁ་མེད་པ་དང་། གང་ལ་  
གསལ་ཁ་བཞུང་གྱི་ཆོགས་བཅད་ཀྱང་གཉིས་ཀས་གཅིག་པ་བཞུང་སྒྲུངས་ལ་  
བརྟགས་ན། མཁས་པ་དེ་གཉིས་གཅིག་གིས་གཅིག་གོས་ལ་གཞི་བཙུག་བཟུང་  
བྱས་སྒྲིམ་གྱི་ཐོབ་པ་ལྟ་བུར་སྒྲུང་བས། དེ་གཉིས་ལས་གང་སྒྲིམ་ལ་བྱོན་ཡོད་  
མེད་དང་། སྒྲིམ་སྒྲུ་ལ་གཞི་བཙུག་ཡོད་མེད་དང་། ལུང་འདྲིན་གཞན་ལ་  
གསལ་ཁ་མེད་དགོས་པའི་སྒྲིམ་ཆུང་གང་ཡིན་སོགས་དཔྱད་དགོས་པ་གིན་དུ་མང་  
ངོ་།།

ད་ཡོད་ཀྱི་ལེགས་སྒྲུར་སྐད་ཐོག་བཞུགས་པའི་ཤེས་འགྲུང་སྤྱོད་འབྲེལ་དུ་  
“འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པར་བསྐྱོད་པའི་”ཆོགས་བཅད་ཨང་ ༡༩, ༡༩, ༢༠,  
བཅས་ཀྱི་ལུང་འདྲིན་མཛད་ཡོད་པ་དེ་དག་གི་ཐད་དུ་གཞུང་གྱི་ལ་ཁུབ་པའི་མིང་  
གི་གསལ་ཁ་འཁོད་ཡོད་ཀྱང་། དེ་དག་བོད་འགྱུར་སྐར་མ་ཁག་དུ་ཆང་མེད་  
པས། གསལ་ཁ་དེ་རྩ་བའི་མ་དཔེ་ངོ་མར་སྒྲིམ་ཁུང་པ་ཞིག་གམ་གསལ་  
དུ་དཔེ་དེ་བུ་ཐོགས་བསྒྲིགས་པས་བསྒྲིམ་པ་གང་ཡིན་དཔྱད་དགོས་པར་མངོན་དེ།

༡ ལུང་འདྲིན་དེ་དག་གི་སྒྲིམ་ཁུང་མདོ་སྒྲིམ་ཆེར་འོལ་པའི་ལུང་ཆེས་འོལ་པ་ཞིག་བཞུང་ཡོད་  
ཀྱང་། དེ་དག་ཀྱང་དེའི་ཐད་ཀྱི་བོད་སྐད་ཐོག་གསལ་མེད།













२८-ངོས་ནས་གྲུབ་པས་ཡོངས་སུ་སྤོང་ན་ཡང་། ཉེན་འབྱུང་བྱ་བྱིང་གི་རྣམ་  
 བཞག་ཐམས་ཅད་ལེགས་པར་འཐད་ཚུལ་གྱི་བཟོད་གཞི་ལས་བརྒྱམས་དེ་བསྟོད་  
 པའི་ཆ་ནས་དེ་དག་ལྷན་དུ་འཛོག་སྟུང་ན། དེ་དག་ལས་གཞན་པ་“བསྟོད་པ་  
 ལས་འདས་པར་བསྟོད་པ་”ཞེས་པ་དེ་ཡང་། བཟོད་བྱ་དང་བསྟོད་པ་མཛད་  
 ཚུལ་གང་ཐད་ནས་དེ་དག་དང་ཤིན་དུ་མཐུན་ཆེ་བས། དེ་ཡང་དེ་དག་གི་ལྷན་  
 དུ་ཅིས་ཀྱང་འཛོག་དགོས་པར་འགྱུར་རོ། །ལཱ་ནས་བསྟོད་པ་བཞིའི་ནང་ཆ་ན་  
 “དོན་དམ་པར་བསྟོད་པ་”ཞེས་པ་དེར་བཟོད་བྱ་སྤོང་ཉིད་ལས་བརྒྱམས་དེ་བསྟོད་  
 པ་ལས་ཉེན་འབྱུང་གསུངས་ཚུལ་གྱི་གསལ་ཁ་དེ་ཙམ་མེད་ཚུལ་ལ་བརྟགས་ན་  
 བསྟོད་པ་བཞིའི་ནང་ཆ་ན་“དོན་དམ་པར་བསྟོད་པ་”པའི་ཆ་བ་ལ་“བསྟོད་པ་ལས་  
 འདས་པར་བསྟོད་པ་”ཞེས་པ་དེ་བསྟོད་པ་གཞན་གསུམ་དང་ཤིན་དུ་མཐུན་ཆེ་  
 ཞིང་ཕྱོགས་གཅིག་པའི་ཚུལ་དུ་ཡོད་པས། དེ་དག་སྟེ་ཆ་ན་གཅིག་དུ་འཛོག་གྱུ་  
 བྱུང་ན་ཅི་མ་རུང་སྟུང་པ་ཡོད། གནད་དོན་དེ་འདྲ་ལ་བརྟེན་ནས་དེང་དུས་ཀྱི་གྱུ་  
 གར་གྱི་མཁས་པ་(Prabhuphai Patel)ཞེས་པ་དེས་བསྟོད་པ་བཞི་ལ་བསྐྱར་  
 ཞིབ་དང་ཉམས་གསོའི་ཕྱག་ལས་གནང་སྐབས་“དོན་དམ་པར་བསྟོད་པའི་”ཆ་བ་  
 ལ་“བསྟོད་པ་ལས་འདས་པར་བསྟོད་པ་”ཞེས་པ་དེ་བཞག་ནས་གྲངས་བཞིར་  
 གཏན་འབེབས་བྱས་ཡོད། དེ་ནི་བཟོད་བྱ་དང་བཟོད་ཚུལ་གཉིས་ཀའི་ཆ་ནས་  
 སྟེ་ཆ་ན་ལོགས་སུ་ཕྱི་གྱུར་ཤིན་དུ་འོས་ཤིང་འཆམ་པ་ཞིག་དུ་མངོན་ནོ། །



## གཞུང་བཞི་ཇི་ལྟར་ངོས་འཛིན་ཚུལ་ལ་དཔྱད་པ།

བསྟོན་པ་བཞི་ཞེས་གྲགས་པའི་ནང་ཆོན་གཞུང་བཞི་གང་དག་ཡིན་ངོས་  
 འཛིན་བྱེད་པའི་ཆེ། བོད་སྐད་དང་ལེགས་སྦྱར་གཉིས་ཀའི་སྐད་ཐོག་ལུང་འདྲིན་  
 གྱི་ལམ་ནས་གསལ་ཁ་དངོས་སུ་འཁོད་པ་ནི་གོང་སྟོས་ལྟར་“དཔེ་མེད་པར་བསྟོན་  
 པ་” ཞེས་པ་དེ་ལས་གཞན་ལ་གསལ་ཁ་དེ་འདྲ་དངོས་སུ་འཁོད་པ་མ་ཆེད།  
 འོན་ཀྱང་ལེགས་སྦྱར་རང་སྐད་ཐོག་བསྟོན་ཆོགས་ཀྱི་གཞུང་བཞི་ཕྱོགས་གཅིག་ལ་  
 བཀོད་ནས་“བསྟོན་པ་བཞི་པ་”ཞེས་པའི་ཐ་སྟོན་དངོས་སུ་སྦྱར་བའི་ལེགས་སྦྱར་  
 གྱི་རྒྱ་དཔེ་འདྲ་མིན་ཁག་བཞི་ཙམ་ལག་སོན་བྱུང་བ་དེ་དག་ཕལ་ཆེ་བར་བསྟོན་པ་  
 བཞི་བབྲངས་ཚུལ་གཅིག་མཐུན་ཡོད་ཀྱང་། ཉམས་གསོ་བྱས་པ་ཞིག་ཡོད་པ་  
 དེར་གོང་སྟོས་ལྟར་“དོན་དམ་པར་བསྟོན་པའི་”ཆབ་ལ་“བསྟོན་པ་ལས་འདས་  
 པར་བསྟོན་པ་”ཞེས་པ་དེ་བབྲངས་ཡོད། ཡང་རུབ་སླིང་གི་མཁས་པ་ Prof.  
 Louis de la Vallee Poussin ཞུ་བ་དེས་བསྟོན་པ་བཞི་(French)སྐད་ཐོག་  
 ཕབ་བསྦྱར་དང་སྒྲགས་བོད་དཔེ་རྣམས་རོ་མན་ཡིག་ཐོག་དུ་མཉམ་བཀོད་བྱས་པ་  
 ཞིག་བྱུང་ཡོད། དེར་“བསམ་གྱིས་མི་བྱུང་པར་བསྟོན་པའི་”ཆབ་ལ་“སེམས་ཀྱི་  
 རྟོ་རྗེའི་བསྟོན་པ་”ཞེས་པ་དེ་བཀོད་ཡོད་ཚུལ་གསལ་ཡོད།

ཡང་རྒྱ་གར་གྱི་སྟོབ་དཔོན་ཨཱིནྟྱར་ཞེས་པས་མཇུག་པའི་བསྟོན་པ་  
 བཞིའི་བསྟུས་དོན་ (चतुःस्तवसमासार्थ) ཞེས་པ་ཞིག་ཡོད་པ་དེར་དཔེ་མེད་པར་  
 བསྟོན་པ་དང་། བསམ་གྱིས་མི་བྱུང་པར་བསྟོན་པ་དང་། དོན་དམ་པར་

[illegible]

གཞུང་འདི་དག་གི་སྒྲོར་ལ་ལེགས་སྤྱར་གྱི་གྲ་དཔེ་འདྲ་མིན་བདུན་ཙམ་

(१) वयं पवित्रात्मनाः प्रदिग्धैर्दृष्टुम् (श्री दिव्यवज्र वज्राचार्य) विष्णो-  
देवाभिरुदेन्द्रेण वयं युवास्तु यत्तद् अस्माकं पवित्रेष्वेकैश्चिच्छिवैश्च  
(अखिल नेपाल महायान बौद्ध समाज) विष्णोर्विश्वेश्वरपञ्चाङ्ग



ཉུས་ཡོད། དེར་གཞུང་དེ་དག་གི་ལེགས་སྤྱར་ཅ་བ་ལ་ཉམས་ཞིབ་དང་།  
བལ་པོའི་སྐད་ཐོག་ཕབ་བསྐྱར་དང་འབྲེལ་དེ་དག་སྤྱི་མཐོང་བསྐྱུས་དོན་དང་  
སྤྱིང་བཟོད་བཅས་བཞོད་ནས་སྤྱར་བསྐྱུན་ཉུས་ཡོད།

(३) འདི་གའི་དཔེ་རྒྱུན་དཀོན་རིགས་སྡེ་ཆེན་གྱི་འགན་འཛིན་གཞིན་པ།

དེང་དུས་ཀྱི་རྒྱ་གར་མཁས་པ་ལྷ་མོ་འཇུག་པ་ལྷ་མོ་ལྷ་མོ་ (པཎ་ ཇམ་འཛུལ་ ས་ཤ་མོ་  
ཤ་མོ་) ཞེས་པས་ཕྱོགས་བསྐྱེད་སྤྱི་མཐོང་བསྐྱུས་ཉུས་པའི་ནང་པའི་བསྐྱེད་  
ཆོག་ཕྱོགས་བསྐྱེད་ (འཛུལ་སྤྱི་མཐོང་སྤྱི་མཐོང་) ཞེས་པའི་ནང་ལེགས་སྤྱར་སྐད་  
ཐོག་བསྐྱེད་པ་འདྲ་མིན་ ༡༠༥ ཅམ་ཕྱོགས་བསྐྱེད་གནང་ཡོད་པ་དེ་དག་གི་ཁྲོད་  
དུ་བསྐྱེད་ཆོག་གི་གཞུང་བཞི་པོ་འདི་དག་ཀྱང་ཆ་ཆང་བཞོད་ཡོད། དེར་  
སྤྱི་དཔོན་གྱིས་མཇུག་པའི་ལྷ་མོ་དོན་ལྷ་མོ་ལྷ་མོ་བསྐྱེད་པ་ཞེས་པ་ཞིག་དང་། དཔལ་  
དོན་ལྷ་མོ་ཆེན་པོའི་བསྐྱེད་པ་དང་། སེམས་ཅན་མགུ་བར་བྱེད་པའི་  
ཆོག་སྤྱི་བཅད་པ་ཞེས་པ་དང་། དཔལ་བ་ནས་འདོན་པ་ཞེས་བྱ་བའི་  
བསྐྱེད་པ་དང་། ཤེས་རབ་ཀྱི་པ་རྣམས་དུ་བྱིན་པའི་བསྐྱེད་པ་བཅས་གཞུང་ལྷ་  
ལེགས་སྤྱར་སྐད་ཐོག་གསལ་ཡོད། དེ་དག་ལས་ལྷ་མོ་གཉིས་བསྐྱེད་པའི་  
སྐྱེར་ཡིན་ཡང་བསྐྱེད་འགྱུར་བསྐྱེད་ཆོག་ནང་གསལ་མེད།

(३) རྒྱ་བསྐྱེད་གི་མཁས་པ་ CHR. Lindtner ཞེས་པ་དེས་སྤྱི་དཔོན་གྱི་  
སྤྱི་མཐོང་པའི་བསྐྱེད་བཅས་མང་པོའི་ཐོག་ཉམས་ཞིབ་ཕྱོགས་བསྐྱེད་སྤྱི་མཐོང་  
དང་། དཔེ་སྐད་ཐོག་ཕབ་བསྐྱུར་སྤྱི་མཐོང་བསྐྱེད་པའི་དེབ་ 'Nagarjuniana'  
ཞེས་པ་དེའི་ནང་བསྐྱེད་པ་བཞི་པོ་ཉམས་ཞིབ་འབྲེལ་བཟོད་དང་སྤྱི་མཐོང་



“འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པར་བསྐྱོད་པ་”དང་། “བསམ་གྱིས་མི་ཁུབ་  
པར་བསྐྱོད་པ་”གཉིས་ཀྱི་ལེགས་སྦྱར་གྱི་དཔེ་དང་ལྷན་དུ་བོད་བསྐྱར་ཡང་  
བཏོད་ཡོད། དེ་དག་ལ་ཐུགས་ཞིབ་ཆག་པོས་འདྲ་བསྐྱར་བསྐྱར་ཞིབ་དང་  
འབྲེལ་རོམ་མཉམ་གཟུགས་ཐོག་བཏོད་ཡོད། དེར་མ་ཟད་བསྐྱོད་པ་དེ་  
གཉིས་དབྱིན་སྐད་ཐོག་ཕབ་བསྐྱར་ཡང་ཞུས་ཡོད། སྤྱིར་བསྐྱོད་པ་བཞི་ཀའི་  
སྐོར་སྐོང་སྐོང་འབྲེལ་བཅའ་གནང་ཡོད་ཀྱང་བསྐྱོད་པ་གཞན་གཉིས་འདིར་  
བཏོད་མེད། མཁས་པ་དེས་གོང་སྤྱོད་ཀྱི་བསྐྱོད་པ་གཉིས་ལ་དམིགས་སུ་  
བཀར་ནས་འདྲ་བསྐྱར་བསྐྱར་ཞིབ་དང་ཕབ་བསྐྱར་བྱས་ནས་བཏོད་དགོས་  
པའི་སྐུ་མཚན་ནི། བསྐྱོད་པ་དེ་གཉིས་སློབ་དཔོན་གྱི་གཞུང་ཙུ་གེ་སོགས་  
རིགས་ཚོགས་རྣམས་དང་ཏ་ཅང་མཐུན་གསལ་ཆེ་བའི་དགོས་དབང་ལ་བརྟེན་  
ནས་དེབ་དེའི་ནང་བཏོད་དགོས་གལ་གྱི་འབྲེལ་བཅའ་སྐུ་མཚན་དང་སྐྱགས་  
ནས་བཏོད་ཡོད། མཁས་པ་དེས་ཕྱོགས་བསྐྱིགས་བགྱིས་པའི་དེབ་དེའི་  
མཐར་བསྐྱོད་པ་བཞིའི་ལེགས་སྦྱར་ཙུ་གེ་བ་དང་། རྒྱ་གར་གྱི་སློབ་དཔོན་  
ཤི་འོ་མ་ནི་ (शारमणि) ཞེས་པས་མཇུག་པའི་གཞུང་དེ་དག་གི་ཆོག་འབྲེལ་  
སྤྱོད་གྱི་ཡིག་རྟེང་ལག་བྲིས་ཀྱི་ཚུལ་དུ་ཡོད་པ་དེ་དག་གི་འདྲ་སྤྱར་ཡང་ཁ་སྐོང་  
གི་ཚུལ་དུ་བཏོད་པར་མཇུག་ཡོད།

(༩) རུབ་སྒྲིང་ཨི་ཏེ་ལི་འི་མཁས་པ་ Prof. G. tucci ཟུ་བ་དེ་བོད་ལ་  
 སེམས་སྐབས་ངོར་དགོན་པར་བསྟོད་ཆོགས་ཀྱི་གཞུང་འདི་དག་གི་ནང་ཆན་  
 དཔེ་མེད་པར་བསྟོད་པ་དང་། དོན་དམ་པར་བསྟོད་པ་གཉིས་ཀྱི་ལེགས་

སྐྱར་གྱི་རྒྱ་དཔེ་རྩེད་སྔོན་བྱུང་ཡོད་པ་ལྟར་ཁོང་གིས་དེ་དག་དང་བོད་འགྱུར་  
 སྐར་མའི་དབར་འདྲ་བསྐྱར་བསྐྱར་ཞིབ་དང་འབྲེལ་དབྱིན་སྐད་ཐོག་ཕབ་  
 བསྐྱར་བཅས་གནང་ནས་སྐད་ཡིག་གསུམ་གྱི་ཐོག་ Journal of Royal  
 Asiatic Society (JRAS) ཞེས་པའི་ཆེད་ཚུལ་ཕྱོགས་བསྒྲིགས་བགྱིས་  
 པའི་དྲུས་དེབ་ནང་ ༡༩༣༣ ལོར་སྐར་བསྐྱར་ཞུས་ཡོད་པ་དང་། དེ་བཞིན་  
 དྲུང་ར་དགོན་པ་ནས་རྩེད་པའི་ལེགས་སྐྱར་རྒྱ་དཔེ་ཁྲོད་དུ་སློབ་དཔོན་གྱིས་  
 མཇུག་པའི་ཐོག་པ་ཆེན་པོ་ཉི་ཤུ་པ་ཞེས་པའི་གཞུང་དེའི་རྒྱ་དཔེ་དང་འདབ་  
 སྐྱར་གྱི་ཚུལ་དུ་རྒྱ་གར་གྱི་སློབ་དཔོན་ཨམྲིཏཀར་ (अमृतकार) ཞེས་པས་  
 མཇུག་པའི་བསྐྱོད་པ་བཞིའི་བསྐྱུས་དོན་ (चतुःस्तवसमासार्थ) ཞེས་པའི་རྒྱ་  
 དཔེ་དེ་ཡང་རྩེད་སྔོན་བྱུང་འདུག དེའི་ནང་དཔེ་མེད་པར་བསྐྱོད་པ་དང་།  
 བསམ་གྱིས་མི་ཁྲུབ་པར་བསྐྱོད་པ་དང་། དོན་དམ་པར་བསྐྱོད་པ་བཅས་གྱི་  
 བསྐྱུས་དོན་གསལ་ཡོད་ཀྱང་། འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པར་བསྐྱོད་པའི་  
 བསྐྱུས་དོན་གསལ་མེད་པ་ནི་རྒྱ་དཔེ་མ་ཆང་བའི་རྒྱུ་གྱིས་ཡིན་ཆོད་འདུག  
 བསྐྱུས་དོན་དེ་དག་དུ་ས་བཅུ་པའི་མདོ་དང་། རྒྱུད་སྒྲ་མ་སྔགས་ཀྱི་ལུང་  
 འདྲིན་མང་པོ་ཞིག་བཞོད་ཡོད། ཕུག་དཔེའི་དབུ་ཞབས་ལ་བརྟགས་སྐབས་  
 ཕལ་ཆེར་ཆང་ཡོད་པ་ལྟ་བུ་ཞིག་དུ་མངོན་ཡང་། དངོས་དོན་གཞི་བཞག་  
 སའི་རྒྱ་དཔེ་ཤིང་ལོ་སྔགས་ཀྱི་ཐོག་བྲིས་པ། ཆེས་བགྱིས་སྔང་ལ་བརྟེན་ནས་  
 ཡི་གེ་མ་གསལ་བ་དང་། ཆད་སྒྲོན་དང་། མ་ཆང་བ་མང་བའི་རྒྱུ་གྱིས་བལྟ་  
 མི་བཟོད་པ་ལྟ་བུའི་ཚུལ་དུ་ཡོད་པས། ད་ལམ་དེབ་འདིའི་ནང་གཞུང་དངོས་

དང་དེའི་ཁ་སྐྱོང་ལྷན་ཐབས་གང་དུ་ཡང་བཀོད་ཐབས་བདེ་པོ་མ་བྱུང་། གྱུ་  
མཚན་གཙོ་པོ་ཞིག་ནི། གཞུང་དེ་དེ་སྔ་པོད་སྐད་ཐོག་མ་བསྐྱར་པའི་གྲས་  
ཡིན་པས་ཉམས་གསོ་སོགས་བྱེད་ཐུབ་ཐབས་མེད་པའི་རྒྱན་གྱིས་ཡིན། བོད་  
སྤྱོད་མཁས་པ་དེས་ལུང་འདྲིན་སོགས་ལ་བསྐྱར་ཞིབ་དང་འབྲེལ་སྦྱང་བཅུ་དྲུག་  
མདོར་བསྐྱས་ཤིག་བཀོད་ནས་ Minor Buddhist Texts ཞེས་པའི་དེབ་  
དེའི་ནང་རོ་མན་ཡི་གེའི་ཐོག་བཀོད་ཡོད། དེབ་དེའི་ནང་མཁས་པ་དེས་སློབ་  
དཔོན་ཀམ་ལ་གྲོལ་ས་མཛད་པའི་སྒྲིམ་རིམ་དང་པོ་དང་། འཕྲ་པ་ཐོར་  
མེད་ཀྱིས་མཛད་པའི་རྩི་ཆེ་བཅོད་པའི་བཤད་སྐྱར་གྱི་ཆིག་ལུང་རྩ་པ་  
སོགས་གཞུང་མང་པོའི་ཐོག་ཉམས་ཞིབ་ཚུགས་བསྒྲིགས་དང་ཕབ་བསྐྱར་  
སོགས་ཀྱི་ཕུག་ལས་མང་པོ་གནང་བ་ཁག་གསལ་ཡོད།

(4) འདི་གའི་སློབ་ཁང་གི་དཔེ་ལྗོན་དཀོན་མཆོག་རིགས་ཉམས་ཞིབ་སྡེ་ཆེན་གྱི་ལས་  
བྱེད་ ཇོ་ཏ་ཀུར་སེན་ཀེ་ལྷུ་ལྷུ་རྒྱུ་ལ་འཕྲོ་བཞུགས་པའི་ལེགས་སྤྱད་ཀྱི་  
དཔེ་ལྗོན་ལ་ཀྱུ་གར་གྱི་སློབ་དཔོན་གྱི་རོམ་ཆེ་ (ཤི་རོ་མཆོག་) ལུ་བས་མཇེད་  
པའི་ཨ་ཀུ་རི་ཀུ་ (འཀར་རི་ཀུ་) ཞེས་པའི་འབྲེལ་པ་དེར་བསྟོད་པ་བཞིན་  
གཞུང་ཙམ་བ་དང་། གཞུང་ཆེན་གལ་ཆེ་ཁག་གི་འབྲེལ་པ་གསལ་ཡོད།  
གཞུང་དེ་དཀྱི་ཆར་སྡོན་གྱི་ཆེ་ལྷུ་རྒྱུ་ཡིག་རྩིང་ཐོག་གསལ་ཡོད། མ་དཔེ་  
དེ་ (Tokyo University Library) ལས་རྩིང་སྡོན་བྱེད་ཡོད། དེར་

१) लघु प्रिया म दये लद ३८०। के प्र दये लद ३८०। म दये लद ३८०।  
१-३६ (हस्तलेख सं० ३४०, लिपि नेवारी, पत्र संख्या १-३६)





འགྱུར་སྤར་མ་ལ་གཞི་མཛད་ནས་གཞུང་ཙུ་པ་ལེགས་སྤར་རང་སྤྱོད་ཐོག་  
 ཉམས་གསོ་དང་སྤྱགས་བོད་དཔེ་ཉམས་སྤར་མ་པན་ཚུན་འདྲ་བསྤར་བསྐྱར་  
 ཞིབ་དང་། ལུང་འདྲིན་འཛོལ་ཞིབ་དང་མཆན་བཞོད་སྤྱགས་གནང་ནས་དེ་  
 དག་དང་ལྷན་དུ་རོ་མན་ཡིག་གཟུགས་ཐོག་བཞོད་ཡོད། མཁས་པ་དེས་  
 གཞུང་དེའི་ཐོག་ཕྱག་ལས་གནང་སྐབས། ལེགས་སྤར་གྱི་མ་དཔེ་ངོ་མ་  
 ཉམས་མེད་ཀྱི་ཚུལ་དུ་བཞུགས་ཡོད་པ་རྒྱས་མངའ་མ་བྱུང་བའལ། མ་དཔེ་  
 ཕྱག་སོན་མ་བྱུང་བའི་དབང་གིས་བོད་དཔེ་ལ་གཞི་བྱས་ནས་བསྐྱར་གསོའི་  
 ཕྱག་ལས་གནང་དགོས་པ་ཡང་བྱུང་ཡོད། ཁོང་གིས་བསྟོད་པ་བཞིའི་གཞུང་  
 ངོས་འཛིན་ཚུལ་ལ་མཁས་པ་གཞན་དང་ཁྱད་པར་ཆེ་ཞི། གཞན་གྱིས་  
 བབྲངས་པའི་“དོན་དམ་པར་བསྟོད་པའི་”ཆབ་ལ་“བསྟོད་པ་ལས་འདས་  
 པར་བསྟོད་པ་”ཞེས་པ་དེ་ཉམས་གསོ་བྱས་ནས་བཞོད་ཡོད། ཁོང་སྟོས་  
 བཞིན་བསྟོད་པ་དེ་ཉིད་ཀྱི་བརྗོད་བྱ་དང་བསྟོད་ཚུལ་གཉི་ཀའི་ཆ་ནས་གཞུང་  
 གཞན་གསུམ་དང་མཐུན་ཤས་ཆེ་བའི་དགེ་མཆན་ཆེན་པོ་ཡོད།

དེ་ལྟར་གོང་སྒྲོམ་གྱི་ཕལ་པ་ཁག་གི་ཚུལ་དཔེ་དང་། ཆེད་ཚུལ་བྱུགས་  
བརྒྱུགས་གྱི་སྒྲིང་བརྗོད་སྟེགས་སྐྱུ་གསལ་བ་ལྟར་ན། རྒྱལ་སྤྱིའི་ཕ་རན་སིའི་  
(France) ཕལ་པ་ Prof. Louis. de La Vallee Poussin ཞེས་  
པ་དེས་བསྟོད་པ་བཞིའི་ཐོག་སྐྱུག་ལས་གནང་ཡོད་སྟོར་གྱི་གསལ་ཁ་འཁོད་པ་  
ལྟར། ཁོང་གིས་བསྟོད་པ་བཞིའི་ངོས་འཛིན་གནང་སྐབས་ “བསམ་བྱིས་  
མི་ཁྲལ་པར་བསྟོད་པའི་”ཆབ་ལ་“སེམས་གྱི་དོ་རླུང་བསྟོད་པ་”ཞེས་པ་དེ་

བསྐྱེད་པ་ཡོད། བསྐྱེད་པ་ཚུལ་དེ་ནི་བསྐྱེད་པ་འགྲུལ་ནང་ཇི་ལྟར་བཀོད་པའི་  
 རིམ་པ་ཉིད་ལ་གཞི་བྱས་ནས་བཀོད་པ་ཞིག་ཏུ་མངོན་ཏེ། དེར་“དཔེ་མེད་  
 པར་བསྐྱེད་པ་”དང་། “འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པར་བསྐྱེད་པ་”གཉིས་ཀྱི་  
 རིམ་སུ་“སེམས་ཀྱི་དོན་ཇི་ལྟར་བསྐྱེད་པ་”ཞེས་པ་དེ་གསལ་ཡོད། དེའི་རིམ་  
 ཉིད་ལ་དོན་དམ་པར་བསྐྱེད་པ་གསལ་ཡོད་པས་བཀོད་པའི་རིམ་པ་དེ་དང་  
 མཐུན་པར་དེ་བཞི་ལ་ངོས་འཇིག་གནང་བ་ཞིག་ཏུ་མངོན་ནོ། “ཀུན་གསལ་  
 གྱིས་མི་ཁྱབ་པར་བསྐྱེད་པ་”ནི་དེ་བཞིའི་རིམ་སུ་“སྐྱེད་པ་ལ་བསྐྱེད་པ་”ཙམ་  
 འབྲེལ་སྟེན་གཞུང་ཆུང་གཞན་ལཱ་ཇི་ལྟར་བཀོད་ཡོད་པས་སོ། །ཞོང་  
 སྐྱེས་ཀྱི་མཁས་པ་དེ་ལ་ཡང་གཞུང་འདི་དག་གི་ལེགས་སྤྱར་བྱ་དཔེ་ལྟར་ཏུ་  
 སོན་མེད་པ་ལ་བརྟེན་ནས་བོད་དཔེ་ལ་གཞི་བྱས་ནས་པ་རན་སེའི་སྐད་ཐོག་  
 སྐབས་བསྐྱུར་དང་འབྲེལ་ ༡༩༡༤ ལ་དེ་གཉིས་ལྟན་ཏུ་སྤྱར་བསྐྱེད་ཀྱིས་ཡོད་  
 འདུག འོན་ཀྱང་རྒྱ་བཟོགས་ཀྱི་སྐྱེད་པ་ལས་པར་དམག་ཆེན་འབྱུང་སྐབས་  
 དཔེ་དཔེ་དེ་རིགས་མང་པོ་ཞིག་ཉམས་བཞག་ཕྱིན་ཡོད་སྐྱེད་པ་ཡང་གསལ་ཡོད།

(ལ) འདི་གའི་གཙུག་ལག་སྤྱོད་པ་ལ་མཁས་དབང་གིས་བསྐྱེད་པ་མཆོག་སྤྱོད་  
 གང་ཉིད་ལེགས་སྤྱར་གཙུག་ལག་སྤྱོད་པ་ཏུ་ནང་པའི་ལྟ་བུ་སྤྱོད་ཆུང་གི་  
 མཇེད་གཙོའི་ལྟ་ལས་གནང་སྐབས། སྤྱོད་པའི་ལྟ་སྤྱོད་ཀྱིས་མཇེད་པའི་  
 བསྐྱེད་པ་བཞི་པའི་ནང་ཆུང་“དཔེ་མེད་པར་བསྐྱེད་པ་”དང་། “དོན་དམ་  
 པར་བསྐྱེད་པ་”གཉིས་ཀྱི་ལེགས་སྤྱར་བྱ་དཔེ་དང་དེའི་དབྱིན་བསྐྱུར་སྟེན་  
 རྒྱ་བཟོགས་ཀྱི་ཁྱེད་ལས་སོན་པུང་ཡོད་དོན་བཞིན་བོད་དཔེ་དང་ལྟན་ཏུ་





ཁྱད་པར་ཇི་སྟེང་ཅིག་ཡོད་པ་སྟོས་མེད་ཐོག་    ཆིགས་བཅད་རེ་བྱང་ལེགས་སྐྱར་  
 སྐད་ཐོག་ལ་ཡོད་ཀྱང་བོད་དཔེར་མེད་པ་དང་།    ཆིགས་བཅད་ཕྱིད་ཡོད་ལ་ཕྱིད་  
 མེད་པ་སོགས་མདོར་ན་གསར་དུ་བསྐྱར་དགོས་པ་དང་།    བསྐྱར་གསོ་དང་ཁ་  
 བསྐྱང་གུངས་ཚང་བཅོ་དགོས་པ་ཇི་སྟེང་ཅིག་བྱང་ཡོད་པ་དེ་དག་གི་སྐྱར་གཞུང་  
 དངོས་ཀྱི་འབྲེལ་ཡོད་ཆིགས་བཅད་དེ་དག་གི་ཐད་དུ་འབྲེལ་བཞིན་དགོས་ངེས་  
 དང་སྒྲགས་མཆན་བཀོད་བྱས་ཡོད།

འདྲ་བསྐྱར་བསྐྱར་ཞིབ་འདི་དག་བྱས་ཤིང་སུ་ལེགས་སྐྱར་གྱི་དཔེ་དང་  
 བོད་དཔེ་གཉིས་ལ་གཞི་བྱས་ནས་ཉིན་སྐད་ཐོག་ཕབ་བསྐྱར་གྱི་ལས་དོན་དག་བྱས་  
 ཡོད།    ཕབ་བསྐྱར་གྱི་ལས་དོན་ལ་དམིགས་བསལ་འབྲེལ་བཞིན་བྱེད་དགོས་པ་  
 ཞིག་ལ།    དང་ཐོག་ལེགས་སྐྱར་དང་བོད་འགྱུར་གྱི་མ་དཔེ་གཉིས་ཀ་ལ་གཞི་  
 བཅོལ་ནས་ཉིན་སྐད་ཐོག་ཕབ་བསྐྱར་བྱས་རུང་།    མཐའ་མའི་ཞུ་དག་སྐབས་  
 ཕབ་བསྐྱར་གྱི་ལས་དོན་ལ་ཞུ་ཆེན་གྱི་རོགས་མགོན་དང་གཟེགས་རྟོགས་གནང་  
 མཁན་གྱི་གར་གྱི་མཁས་པ་སྟོབ་དཔོན་ཆེན་པོ་རུ་མཁུར་དུ་པཱེ་མཆོག་ནས་  
 ལེགས་སྐྱར་གྱི་གྱི་དཔེ་ཉིད་ལ་གཙོ་བཟུང་གནང་ནས་ཕབ་བསྐྱར་གྱི་ལས་དོན་  
 རྣམས་གཏན་འབེབས་གནང་ཡོད་པས།    ད་ལམ་འདིར་ཉིན་སྐད་ཐོག་ཕབ་  
 བསྐྱར་བགྱིས་པ་དེ་དག་གི་གཞུང་དོན་བསྐྱུར་ཚུལ་གྱི་གོ་རིམ་དང་།    ཆིག་དོན་  
 གྱི་ཆ་མང་པོ་ཞིག་བོད་དཔེ་ལས་ལེགས་སྐྱར་དང་མཐུན་ཆེ་བའི་ཚུལ་དུ་ཡོད།  
 འོན་ཀྱང་དགོས་གཤམ་ལ་གཞིགས་དེ་བོད་དཔེར་ལྟ་བུ་བསྐྱུར་དང་འབྲེལ་བྱངས་  
 གདུགས་མང་པོ་གནང་ཡོད་པ་ནི་སྤྱིར་བཏོན་དུ་མེད་པའི་གནས་སྐབས་ཞིག་ཡིན།

སྤྱིར་བཤད་བསྟན་འགྱུར་ནང་བཞུགས་གཞུང་ཆུང་བ་ཆེས་འགངས་ཅན་  
 མང་པོ་ཞིག་ཇོ་བོའི་ཆོས་ཆུང་བརྒྱ་ཅུའི་ནང་འགྱུར་དང་ཆོག་སྤྱིར་མི་འདྲ་བའི་  
 བྱད་ཀྱས་ལྷག་དང་བཅས་པའི་ཚུལ་དུ་འཁོད་པ་ཆེས་མང་པོ་ཡོད་ཀྱང་། སྤྱི་བ་  
 དཔོན་གྱིས་མཇུག་པའི་བསྟོན་ཆོགས་ནང་བཞུགས་ཀྱི་གཞུང་རྣམས་ལས་“སྤ་ན་  
 མེད་པའི་བསྟོན་པ་”ཞེས་པ་དེ་ལས་གཞན་སྐབས་འབྲེལ་གྱི་གཞུང་འདི་དག་དེར་  
 འཁོད་མིད། བསྟོན་པ་བཞིའི་ནང་ཆན་གྱི་གཞུང་འདི་དག་ལ་རྒྱ་གར་གྱི་མཁས་  
 པས་མཇུག་པའི་བོད་འགྱུར་གྱི་རྒྱ་འབྲེལ་མ་ཆེད་པར་མ་ཟད་བོད་འབྲེལ་ཡང་  
 གཞུང་གཅིག་ལ་མ་གཏོགས་ཆེད་སོན་མ་བྱུང་། དེ་ནི་རྩོམ་སྟོན་གྲུ་རྒྱལ་  
 མཆན་གྱིས་མཇུག་པའི་“དོན་དམ་པར་བསྟོན་པའི་”འབྲེལ་པ་ཞིག་ཡོད་པ་དེ་  
 ཡིན། ལེགས་སྒྱུར་སྐད་ཐོག་གོང་སྟོས་བཞིན་བསྟོན་པ་བཞིའི་བསྟུས་དོན་ཞེས་པ་  
 ཞིག་དང་། བསྟོན་པ་བཞིའི་ཆོག་འབྲེལ་གསལ་བ་ཞིག་བཅས་རྒྱ་དཔེ་གཉིས་  
 ལག་སོན་བྱུང་ཡང་། དེ་གཉིས་ཀ་བོད་སྐད་ཐོག་བསྒྱུར་མེད་པར་མ་ཟད།  
 ཐོག་མའི་མ་དཔེ་དེ་དག་བསྟེན་སྟོན་ཆེ་བའི་རྒྱུ་གྱིས་ཆ་གསུམ་མ་ཆང་བ་མང་བ་  
 དང་། ལྷག་པར་དུ་གཞུང་ལྔ་མ་དེ་བལྟ་མི་བཟོད་པ་ལྟ་བུའི་གནས་སྐབས་ཅན་དུ་  
 ཡོད་པས། དེ་དག་གི་མ་དཔེ་ཆང་ཆེ་བ་ཞིག་མ་སོན་བར་དུ་འདིའི་ཐོག་ལས་  
 དོན་བྱེད་དཀའ་བས། ད་ལམ་འདིར་འདྲ་བསྒྱུར་བསྒྱུར་ཞིབ་བྱེད་རྒྱ་ཅམ་ལས།  
 གཞུང་དངོས་དང་། ཁ་སྐོང་གང་གི་ཁོངས་སུ་ཡང་སྤར་ཐེངས་འདིའི་སྐབས་  
 བཞེད་བདེ་བྱུང་མ་སོང་བས་ཕྱིས་སུ་སྤར་ཐེངས་གཉིས་པའི་དགོས་གཤམ་གྱིས་  
 སྐབས་འབད་ཅོལ་བསྒྱུར་མ་ཞིག་བྱེད་དགོས་པ་བརྗོད་མེད་ལ་བརྟེན། སྐབས་





པོས་མཇད་པའི་སྟོན་པ་བཅུ་ལྔ་ལྟ་བུ་བསྟོན་པའི་སྟུང་པོ་རྟེན་འབྲེལ་  
བསྟོན་པ་ལས།<sup>१</sup>

མཇད་པ་ཀུན་ལས་གསུང་གི་ནི།     |

མཇད་པ་མཆོག་ཡིན་དེ་ཡང་ནི།     |

འདི་ཉིད་ཡིན་ཕྱིར་མཁས་པ་ཡིས།     |

འདི་ལས་སངས་རྒྱས་རྗེས་དྲན་བྱས།     |   ཞེས་གསུངས།

དེ་བཞིན་དུ་རྗེ་གུང་ཐང་གི་གསུང་འཕགས་མཆོག་འཇམ་དཔལ་དཀར་  
པོའི་བསྟོན་པ་ལས།<sup>२</sup>

ཟབ་མའི་དེ་ཉིད་ཉིད་ཀྱིས་བཞེགས་པ་...

...རྗེ་བཞིན་ལེགས་གསུངས་གསུང་གི་འོད་ཟེར་གྱིས།

སྟུང་པའི་གསུང་རབ་རབ་འབྲམས་དགོངས་དོན་རྗེ་...

...བཞིན་གསལ་མཇད་མཇད་པ་ཀུན་གྱི་མཆོག།

གདུལ་བྱའི་ལས་དབང་དབང་པོའི་རིམ་པ་...

...རྗེ་བཞིན་ཆོས་སྟོན་སྟོན་པ་སྤྲོ་ན་མེད།   |ཅེས་དང་།

རྗེ་དཔལ་སྤུལ་གྱི་གསུང་སྟོན་པ་བདེ་བར་གཤེགས་པའི་གསུང་གི་གསང་བ་བསམ་  
གྱིས་མི་བྱུང་པ་ལ་བསྐྱབས་པ་པམ་དཀར་པོའི་རྟེན་འཕྲུང་ལས།<sup>३</sup>

<sup>१</sup> རྗེ། 'ཁ' ३༥ (དེ་བ་གཟུགས་)

<sup>२</sup> རྗེ་གུང་ཐང་། 'ཇ' ༥༧ (དེ་བ་གཟུགས་)

<sup>३</sup> པོ་དང་། 'ཀ' १३० (དེ་བ་གཟུགས་)





देदे रद वल्लिखं चिखं श्लेखं ।

वसुधं व रदं लखं य मल्लं पदं ।

लेखं रदं मल्लं कुलं किं किं चिखं यदं ।<sup>१</sup> । उखं ददं ।

रदं लखं रं मल्लं वसुधं प ददं ।

रदं लखं मल्लं वसुधं व वदं ।

कुलं रदं चिखं ल वल्लं क किं ।

वल्लं प र रदं चिखं वल्लं वसुधं मल्लं<sup>२</sup> ।

लेखं वसुधं च । दे वल्लिखं वुं हे वुदं वदं चिखं वसुधं वल्लं प रं क वल्लं

मल्लं<sup>३</sup>

वल्लं प मल्लं दे र वल्लं पदं श्लेखं ।

वसुधं चिखं मल्लं वसुधं प यदं ।

लेखं उदं रदं लखं रदं वसुधं प वसुधं ।

वसुधं वल्लं वदं वल्लं वसुधं वल्लं वसुधं ।

लेखं वसुधं च । मल्लं र वल्लं क हे र वसुधं वदं र वल्लं वल्लं वल्लं वल्लं वल्लं

लखं<sup>४</sup> “ रद वल्लिखं चिखं श्लेखं प लेखं रदं चिखं वल्लं वसुधं प रं क वल्लं

<sup>१</sup> हे। 'ल' ३० (देव-वसुधं चिखं)

<sup>२</sup> हे। 'ल' ३१ (देव-वसुधं चिखं)

<sup>३</sup> हे वुदं वदं । 'ल' ४ (देव-वसुधं चिखं)

<sup>४</sup> हे। 'ल' ४०० (देव-वसुधं चिखं)



དང་། ལྷ་བ་ངན་པ་ཐམས་ཅད་འགྲོག་པར་བསྐྱན་བཅོས་ཀྱི་དབྱ་ཞབས་གཉིས་  
 ཀར་བསྐྱན་ལ། བསྐྱན་བཅོས་ཀྱི་ལུས་ཐམས་ཅད་ཀྱིས་ཀྱང་དེ་ཉིད་འཆད་པ་  
 ཡིན་པས། རིགས་པ་རྣམས་ཀྱི་རྒྱལ་པོ་རྟེན་འབྱུང་གི་རིགས་པ་ཉིད་ལ་འབད་  
 རས་ཟབ་མོ་དབྱ་མའི་རྒྱལ་ངེས་པ་དོན་གྱི་སྤྱིང་པོའི་ལྷ་བ་རང་དང་གཞན་གྱི་རྒྱུད་  
 ལ་རྒྱས་པར་བྱའོ།” །ཞེས་གསུངས། ལྷང་སྤྱོད་ལ་པའི་དོ་རྗེས་མཇེད་པའི་  
 སྤྱུལ་མཐའ་ཐུབ་བསྐྱན་ལྷན་པོའི་མཇེས་རྒྱན་ལས། “བདག་མེད་པ་སྤྱུལ་བྱེད་ཀྱི་  
 འབྲེལ་ཆ་མ་དམིགས་པའི་གདན་ཆིགས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་ཀྱི་གནད་རྟེན་འབྱུང་  
 གི་གདན་ཆིགས་ཉིད་ལ་ཐུག་སྟེ། གདན་ཆིགས་དེ་དག་ཐམས་ཅད་ཀྱི་དོན་གྱི་  
 གཙོ་བོ་ནི་མཐའ་གཉིས་ཅིག་ཅར་བསལ་ནས་དབྱ་མའི་ལྷ་བ་རྒྱུད་ལ་བསྐྱེད་པ་ཉིད་  
 ཡིན་ཞིང་། དོན་དེ་ནི་རྟེན་འབྲེལ་གྱི་གདན་ཆིགས་འདི་ཉིད་ཀྱིས་དངོས་སུ་སྤྱུལ་  
 པའི་ཕྱིར་དང་། རིགས་པ་དེ་དག་མཐར་གདུགས་ན་རྒྱལ་དེ་ཉིད་ལ་ཐུག་པའི་  
 ཕྱིར་རོ།” །ཞེས་བདག་མེད་སྤྱུལ་པའི་རིགས་པའི་རྣམ་གྲངས་མཐའ་དག་མཐར་  
 གདུགས་ན་རྟེན་ནས་འབྱུང་བའི་གདན་ཆིགས་ཉིད་ལ་ཐུག་པས་དེ་ཉིད་རིགས་པ་  
 རྣམས་ཀྱི་གཙོ་བོ་དང་། རིགས་པ་རྣམས་ཀྱི་དོན་པོར་བརྒྱུད་དགོས་སོ།།

མདོར་བཟུས་ན། རྗེའི་གསུང་རྟེན་འབྲེལ་བསྟོད་པ་ལས།<sup>3</sup>

ཕན་མཛད་ཁྱོད་ཀྱིས་འགྲོ་བ་ལ། །སྒྲན་པའི་སྤང་དུ་བཀའ་སྩལ་པ། །

བསྟན་པའི་སྤྱང་པོ་སྤྱང་པ་ཉིད། །ངེས་པའི་རྒྱ་མཚན་ཟླ་མེད་པ།

2. བྲུབ་མཐུའ། ༤༥༣ (ནང་གསེས། 'ང' དེས།)

3 ཨ། 'ཁ' 30 (དེབ་གཟུགས།)



རྟེན་ཅིང་འབྲེལ་བར་འབྱུང་བའི་ཚུལ།།

ཞེས་གསུངས་པ་ལྟར་ངེས་དོན་བརྟན་པའི་སྤྱིང་པོ་གནས་ལུགས་སྤྱིང་པ་ཉིད་གྱི་  
 དོན་དེ་ཉིད་མཐའ་གཉིས་དང་བྲལ་ཞིང་།     སྤྱིང་པ་རྟོན་འབྱུང་དང་རྟོན་འབྱུང་  
 སྤྱིང་པའི་དོན་དུ་ངེས་པར་བྱེད་པའི་རྒྱ་མཚན་ཆུ་མེད་པ་ནི་རིགས་པའི་རྒྱལ་པོ་  
 རྟོན་འབྲེལ་གྱི་གདན་ཆེགས་ཉིད་ཡིན་པར་གསུངས་སོ།།

དེ་ལྟར་རྟེན་འབྲུང་ཟབ་མའི་ཆོས་རྒྱལ་དེ་ལ་དེ་ལྟར་ཕྱི་གུས་བཅི་དང་།  
གལ་གནད་ཆེན་པོ་ཅིས་དགོས་པའི་རྒྱ་མཚན་མཚོན་པ་ཙམ་བཞོད་ན། དེ་ལང་  
བདག་ཉིད་ཆེན་པོ་ལྷ་རྒྱལ་གྱི་གསུང་ལས།

རྟེན་ཅིང་འབྲེལ་བར་འབྱུང་འདི་སྒྲུལ་བ་ཡི།

གསང་གི་མཛོད་ཀྱི་གཅིས་པ་ཟབ་མོ་སྟེ། །

ཞེས་དང་། རྒྱུ་གསུང་གོང་སྒྲིབ་དེ་ཉིད་ལས།<sup>༡</sup>

ཁྱེད་ཀྱིས་ཇི་སྟེང་བཀའ་བསྩལ་པ།

རྟེན་འབྲེལ་ཉིད་ལས་བརྒྱམས་དེ་འདྲུག །

དེ་ཡང་སྤྱི་འདུན་གྱི་ཉེ།

ཞི་འགྱུར་མིན་མཛད་ཁྱོད་ལ་མེད།

ཅེས་དང་། དེ་བཞིན་དུ་རྗེ་གུང་ཐང་གི་གསུང་བསྟོད་པ་དོན་ལྡན་མ་ལས།<sup>3</sup>

2. རྒྱ། བསྟན། (སྤྱིར་སྤྱི་གྲ་ 'ངེ' རྒྱ)

३ རྒྱུ་ 'ཁ' (དེ་ལ་གཟུགས།)

³ རྩི་གང་ཐང་། ཡོད། 'ཀ' ༦ (དེབ་གཟུགས།)

वक्रदंष्ट्रिं वक्रिं श्लोकं कृतं ॥ ॥

हृदयं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं ॥ ॥

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं ॥ ॥

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं ॥ ॥

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं ॥ ॥

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं ॥ ॥

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं ॥ ॥

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं ॥ ॥

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं ॥

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं

वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं वक्रं

१ श्लोकः वक्रं वक्रं (वक्रं वक्रं '१' १६६)





ཅང་མང་པོ་ཡོད་ཆོག་པ་ནི་སྒྲིམ་མེད་ཅིང་འདུག སྤྱིར་སྐྱེལ་བའི་གསུང་རབ་གྱི་  
 དགོངས་པ་འབྲེལ་བའི་ཆེ་ལྷན་སྤྱི་མཐུན་ལ་མཐུན་ཏུ་དང་ཚུལ་བཞིན་སྐྱེས་  
 བཅུ་མིན་དང་། མདོ་ཕྱོགས་ལ་དྲང་ངེས་དང་། དགོངས་ལྡེམ་དགོངས་དང་།  
 སྤྱི་མཐུན་གོང་འོག་གང་གི་བཞེད་པ་སོགས་ལ་སྦྱར་དགོས་མིན་གྱི་འཆད་ཚུལ་  
 ལམ་དགོངས་པ་འབྲེལ་ཚུལ་གིན་དུ་མང་ན་ཡང་། འདིར་སྐྱབས་སུ་བབས་  
 པའི་གཞུང་འདི་དག་བསྟན་བཅོས་ཡིན་པས། སྐྱེལ་བའི་བཀའ་ལ་དགོངས་པ་  
 འབྲེལ་བ་ལྟར་གྱི་དྲང་ངེས་སོགས་འབྱེད་མི་དགོས་མོད། འོན་ཀྱང་གཞུང་འདི་  
 དག་གིས་དབུ་མ་ཐལ་འགྱུར་བའི་བཞེད་པ་ལྟར་གྱི་ལྟ་བ་དོན་འབྱུང་སྤོང་པ་སྟོན་  
 པར་འདུག་པས། དེའི་ལུགས་ལ་སློ་བྱོས་མི་ཟད་པའི་མདོ་བྲུངས་སུ་མཛུགས་  
 མདོ་ཐེགས་དག་དོན་དམ་པ་སྐྱབས་པ་བསྟན་པ་ངེས་དོན་དང་། ཀུན་རྗེ་བསྐྱབས་པ་  
 བསྟན་པ་དྲང་དོན་དུ་གསུངས་པ་དང་ཕྱོགས་འདྲ་བར་འདིར་ཡང་དོན་དམ་བདེན་  
 པ་བཅོད་བྱའི་གཙོ་བོར་བྱས་ནས་བསྟན་ཡོད་པས། གཞུང་གི་བསྟན་དོན་གྱི་གཙོ་  
 བོའི་བཅོད་བྱའི་ཆ་ནས་ངེས་དོན་བསྟན་པའི་གཞུང་དུ་འཛོག་རིགས་ནའང་།  
 སྐྱབས་མང་པོར་ཐ་སྟད་དུ་ཡོད་པའི་ཆོས་དགག་པའི་རྣམ་ཅན་དུ་བསྟན་པ་སྐྱེས་  
 ཟེན་ལྟར་ཁས་སྲུང་དུ་མི་རུང་བ་ཇི་སྟེད་ཅིག་གསུངས་པ་དེ་དག་ལ་ངེས་པར་དུ་  
 དགག་བྱ་ལ་དོན་དམ་གྱི་བྲུང་པར་སྐྱར་བའི་སྒྲིམ་དགོངས་པ་བཀའ་དགོས་པར་  
 སྤང་དྲི། དཔེར་ན་རྩ་ཤེའི་མཆོད་བཅོད་ཀྱི་སྐྱབས་དོན་འབྲེལ་འགག་སོགས་  
 བསྐྱེད་དང་བྲལ་བའི་དོན་བཀའ་བའི་ཆེ། དབུ་མ་ཆེག་གསལ་དང་། དེའི་  
 དགོངས་པ་ཇིའི་རྩ་ཤེའི་ཆེན་དུ་ཇི་ལྟར་བཀའ་བར་མཛུགས་པ་ལྟར་ཐ་སྟད་དུ་

ཡོད་པའི་ཆོས་ལ་ཁྱད་པར་གྱི་ཆོག་མ་སྒྲུར་བར་དགག་དུ་མེད་པར་གསུངས་པ་  
འདིར་ཡང་འདྲ་བས། སྒྲུབ་ཟིན་གྱི་དོན་གཞན་དུ་བྱངས་དགོས་པ་ཡང་ཇི་སྟེད་  
ཅིག་ཡོད་དོ། །

གཞུང་འདི་དག་གི་སྤྱི་ཁོག་གི་དགོངས་པའི་གནད་བབས་ས་ནི་གོང་སྒྲོམ་  
ལྟར་ཆོས་རྣམས་དེ་ལྟར་སྤྱད་སྤོང་པའི་ཚུལ་ལྟགས་བསྟན་པ་ལས་མ་འདས་པས།  
དེ་ཉིད་གཞི་རྩར་བརྟུང་བའི་ཐོག་ བྱེ་བྲག་ཆོགས་བཅད་རེ་རེ་བཞིན་གྱི་བསྟན་  
དོན་ལ་སྒྲོབ་དཔོན་གྱི་དགོངས་ཆོད་ཇི་བཞིན་ལོན་སྐབ་མིན་ལ་མ་ལྟོས་པར་གཞུང་  
དོན་གྱི་གོ་བ་ལེན་ཕྱོགས་དང་བསྐྱུས་དོན་བྱེད་ཚུལ་དག་ནི། རྒྱ་གཞུང་ལྟགས་  
བརྒྱ་བསྟན་ཞེས་གོང་དུ་བཅོད་པ་ལྟར་གྱི་ལམ་སྒྲོལ་དེ་ཉིད་ལག་བསྟར་མ་བྱེད་  
མཐུས་མེད་ཀྱི་ཚུལ་དུ་མངོན་དེ། སྤྱིར་ཐོག་མའི་གཞི་འཛིན་སའི་རྩ་བའི་མ་ཕྱི་  
ལྟེ་བ་ལེགས་སྒྲུར་གྱི་རྒྱ་དཔེ་ལ་ཡང་སྟོན་ཆག་དང་། ལག་བྲིས་ཀྱི་ཡིག་རྟེང་ནང་  
ཕན་ཚུན་ལ་མི་མཐུན་པའི་ཁྱད་པར་ཆེན་པོ་ཁ་ཆོན་བཅད་དཀའ་བ་ཇི་སྟེད་ཅིག་  
ཡོད་ལ། བོད་འགྱུར་སྐགས་ལ་ཆ་མཆོན་ན་ཡང་ལོ་པར་ཆོས་གོ་བ་ལེན་ཕྱོགས་  
འདྲ་མིན་ལ་བརྟེན་པའི་དཀྱུས་གཞུང་གི་འགྱུར་དང་། ལུང་འདྲིན་མཛད་པ་ཁག་  
གི་འགྱུར་བཅས་ཀྱི་དབར་ལ་ཁྱད་པར་ཆེན་པོ་ཇི་སྟེད་ཅིག་ཡོད་པ་སྒྲོམ་མེད་ཐོག་  
ལྟག་པར་དུ་འབྲེལ་པ་མང་པོ་ཡོད་པའི་རྩ་གཞུང་རྣམས་ཀྱི་གཞུང་དོན་གྱི་དགོངས་  
པ་བཀྲལ་ཚུལ་ལམ་གོ་བ་ལེན་ཕྱོགས་ལ་མཁས་པ་སོ་སོའི་སྟོ་རྩལ་ལ་གཞིགས་  
པའི་འབྲེལ་ཚུལ་ལྟ་ཆོགས་ཤིག་ཡོད་པ་ནི་ཉི་ཤར་སྤར་མོས་ཁེབ་དུ་མེད་པའི་ངང་  
ཚུལ་དུ་མཆིས་པས་སོ། །





ཆོད་དཔག་དུ་མེད་པའི་དུས་རིང་ནས་གཅིག་དུ་ཐུགས་བརྩེ་ཆེན་པོས་དགོངས་  
ཤིང་། འགྲོ་བའི་དོན་རྒྱུ་མི་ཆད་དུ་མཇུག་པའི་དབང་གིས་ཐུན་མོང་གདུལ་  
བྱའི་སྤང་ངོར་སྐྱེ་ཐང་ཆད་པའམ་སྐྱེ་མཉེལ་བའི་རྒྱུ་པ་བཞིས་དགོས་པ་ལྟ་བུའི་  
ཚུལ་དུ་ཡོད་ཀྱང་། ཇིས་པའི་དོན་དུ་སེམ་པ་མ་ཡིན་པའི་ཆོར་བ་སྐྱེ་བའི་གོ་  
སྐབས་ཐམས་ཅད་གཏན་ནས་བཅོམ་ཟིན་པའི་ཕྱིར་ན་དེ་ལྟར་འབྱུང་བ་མེད་དོ།

སྒྲིན་པ་སྤྲོན་མེད་པ་ཁྱོད་ཀྱི་ལུགས་ལ་ངོ་པོ་ཉིད་ཀྱིས་གྲུབ་པའི་ཆོས་གིག་  
གཏན་ནས་མེད་མོད། འོན་ཀྱང་སེམས་ཅན་ལ་མཚོན་ན་ཕུང་པོ་ཅམ་ལ་ཡང་  
གཏན་ལྟོས་མ་དགོས་པའི་སེམས་ཅན་དེ་འདྲ་གཏན་ནས་མེད་ཀྱང་། ཉིན་  
འབྱུང་ལྟོས་གྲུབ་ཅན་གྱི་སེམས་ཅན་གྱི་དོན་ལ་མཚོག་དུ་གཞིལ་ཞིང་ལྷན་འབྲུབ་  
རྒྱུ་མི་ཆད་པའི་འཕྲིན་ལས་ཀྱི་སྒྲོན་ནས་འགྲོ་བའི་དོན་དུ་འཁོར་བ་མ་སྤོང་བའི་  
བར་མངོན་པར་བཞུགས་པ་ལས་ཉན་ཐོས་འགོག་པ་བ་ལྟར་གཞིར་ཡང་མི་མཇུག་  
དོ། དེ་འདྲའི་ལྟོས་པ་ཅན་གྱི་ཕུང་པོ་དེ་ཡང་སྐྱེ་མ་དང་། སྤྲིག་རྒྱུ་དང་། སྤྱི་  
ཟུང་གོང་ཁྱེད་དང་། མི་ལམ་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་རྒྱུ་ཉིད་འདི་པ་ཅམ་གྱི་ཚུལ་དུ་  
གདུལ་བྱ་སྒོ་གྲོས་དང་ལྷན་པ་རྒྱུ་པ་བཞིས་པར་མཇུག་ཅིང་། གང་རྒྱུ་རྒྱུ་ལ་  
ལྟོས་ནས་འབྱུང་བ་རྒྱུ་པ་དེ་དག་ཕན་འདོགས་བྱེད་དུ་མེད་པར་འབྱུང་བའི་  
གནས་མེད་པས། དེ་དག་གི་ཡོད་ཚུལ་ཡང་རྟོག་པས་བཏགས་ཅམ་དུ་གཟུགས་  
བརྒྱན་དང་བྲག་ཅ་ལྟ་བུའི་ཚུལ་དུ་གསལ་བར་ཅིའི་ཕྱིར་འདོད་མི་རིགས་ཏེ་རིགས་  
པར་གསུངས་སོ། །





དང་། དེ་མིན་པ་མཇུག་པ་བཅས་ཀྱི་དགེ་མཚན་གི་ཉིན་འབྲེལ་ལ་བཞུགས་ནས།  
འབྲས་བུ་བདེ་སྤྱད་དག་མ་འཆོལ་མ་འབྲུགས་པར་འབྱུང་ཡང་། རང་བཞིན་  
གྱིས་གདན་ནས་མ་སྐྱེས་སོ་ཞེས་སོ་རིག་བཞི་ལ་དབང་འབྱོར་བའི་ཆེག་གི་བདག་  
པོ་ཁྱེད་ཀྱིས་ལེགས་པར་གསུངས་ཡོད། གང་དུ་གསུངས་ན། ལྷན་སྐྱེལ་པོ་མ་  
རྩོས་པས་ཞུས་པའི་མདོ་ལས། “གང་ཞིག་རྒྱུན་ལས་སྐྱེས་པ་དེ་མ་སྐྱེས། །དེ་  
ལ་སྐྱེ་བའི་རང་བཞིན་ཡོད་མ་ཡིན།” །ཞེས་སོགས་གསུངས་པའི་ཕྱིར་རོ།

ཡུལ་གཟུགས་སོགས་འཛོག་བྱེད་ཀྱི་ཡུལ་ཅན་གྱི་ཤེས་པ་མེད་པར། དེ་  
གང་ལ་ལྟོས་ནས་འཛོག་པའི་གཞུང་བྱེད་ཡུལ་འཛོག་པ་མི་འཐད་ལ། དེ་བཞིན་  
དུ་གཞུང་བྱེད་ཡུལ་མེད་པར་དེ་ཉོགས་པའི་རྣམ་པར་ཤེས་པ་ཡང་བཞག་དུ་མེད་  
དོ། །དེས་ན་ཤེས་པ་དང་ཤེས་བྱ་དག་པའི་རྣམ་པར་ཤེས་པ་ཡང་བཞག་དུ་མེད་  
གྱིས་རང་ངོས་ནས་མེད་ལ། གལ་ཏེ་མཆོད་མཆོད་སོགས་རང་ངོས་ནས་གྲུབ་  
པའི་གཞན་ཡིན་ན་མཆོད་བྱེད་མཆོད་ཉིད་མེད་པར་འགྱུར་བ་དང་། དེ་དག་  
ལྟོས་པ་ཅམ་དུ་ཡང་ཐ་དད་དུ་བཞག་དུ་མེད་ན། དེ་དག་ལ་ནང་པའི་རྣམ་པར་  
འཛོག་གི་རྣམ་བཞག་བྱེད་དུ་མེད་པར་འགྱུར་རོ། །དེས་ན་ཆོས་གང་ལ་ཡང་  
རང་ངོས་ནས་གྲུབ་པའི་མཆོད་མཆོད་དང་། བཟླ་བྱེད་བྱེད་མེད་ཀྱང་ཉིན་  
འབྲུང་སྐྱེལ་ཅམ་དུ་ཇི་ལྟར་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་སྤྱན་གྱིས་གཟུགས་པ་ལྟར་འདོམས་པའི་སྒོ་  
ནས་གངས་ལས་འདས་པའི་འགྲོ་བའི་ཤེས་བྱེད་ཀྱི་སྤྱི་བཞུགས་པའི་ཆགས་དང་  
བཅས་པའི་ཆ་གདུང་ཀྱན་ཞི་བར་མཛད་པ་ལ་མཛོད་པར་བསྐྱེད་དོ། །





རིགས་པར་འགྱུར་རོ། །རང་ངོས་ནས་གྲུབ་པའི་ཞིག་པའི་རྒྱ་ལས་འབྲས་ལྟ་  
 འབྲུང་བ་མི་རིགས་པ་དེ་བཞིན་དུ། མ་ཞིག་པ་ལས་ཀྱང་མི་འཐད་ལ། དེས་  
 རྒྱ་ཞིག་མ་ཞིག་ལས་འབྲས་ལྟ་འབྲུང་བའི་རིམ་པ་མཐའ་དག་རྟེན་འབྲུང་སྐྱུ་མ་  
 བཞིན་དུ་འབྲུང་བ་ཡིན་པས་འདུས་བྱས་ཀྱི་ཆོས་ཀྱི་རང་རྒྱལ་དེ་བཞིན་དུ་  
 བསྐྱེད་སྤྱོད་སོ།། རྒྱ་མཚན་དེ་དག་གིས་ཕྱིར་ན་སྟོན་པ་ཁྱེད་ཀྱིས་འགྲོ་བ་འདི་དག་  
 བསྐྱེད་དུ་རྟོག་པས་བདག་ཅེས་པ་འབྲུང་བ་དང་། དོན་དམ་དུ་སྐྱེ་བ་དང་  
 འགག་པ་གཏན་ནས་མེད་པ་དང་། འགྱུར་མེད་ཉག་པའི་ཆོས་ལ་འཁོར་འདས་  
 གྲུབ་ཀྱི་རྣམ་བཞག་འཛིན་དུ་མེད་པར་མ་ཟད། མི་བཙན་པའི་རང་རྒྱལ་ཅན་  
 གྱི་མི་ཉག་པ་ལ་ཡང་རང་ངོས་ནས་གྲུབ་པའི་འཁོར་བ་སོགས་མེད་པས། བང་  
 སྐྱང་ཞིང་སྤྱིད་པའི་འཁོར་འདས་ཀྱི་ཡོད་རྒྱལ་མཐའ་དག་མི་ལམ་དང་འདྲ་བའི་  
 རྒྱུ་ཉིད་འདི་པ་ཅེས་ཀྱི་ཡོད་རྒྱལ་ལས་མ་འདས་པར་བསྐྱེད་སྤྱོད་སོ།། །

འབྲས་ལྟ་སྐྱུ་བསྐྱེད་པའི་རྒྱ་ཀྱན་འབྲུང་རང་གི་བྱས་པ་དང་།  
 བཞག་དང་བཞིན་ཀས་བྱས་པ་ཇི་སྟེན་ཅིག་དང་། དེ་དག་གི་རྣམ་པར་སྐྱིན་པ་  
 རྒྱུང་དགོས་པ་སོགས་ནི་ལས་བསྐྱེད་པ་པོ་དེ་དག་གི་བྱས་ཉིས་ལ་བརྟེན་ནས་བྱུང་  
 བ་ལས་མ་འདས་ཀྱང་། ཆོས་འདི་ལས་ཕྱི་རྒྱུ་དུ་གྱུར་པའི་ཕྱ་སྐྱེགས་རྟོག་གི་  
 བཞག་ཅིག་གིས་དེ་དག་རྒྱ་མེད་དུ་བྱུང་བའམ་འཛིན་རྟེན་བྱེད་པོས་སྐྱང་བ་གང་དུན་  
 བྱས་པ་ལས་བྱུང་བར་འདོད་མེད་ཀྱང་། སྟོན་པ་སྟོན་མེད་པ་ཁྱེད་ཀྱིས་དེ་ཀྱན་  
 རྒྱུ་འབྲས་ངེས་པ་ཅན་གྱི་རྟེན་འབྲུང་དུ་བསྐྱེད་སྤྱོད་སོ།། ། བང་རྟེན་ཅིང་འབྲེལ་  
 བར་འབྲུང་བ་དེ་ནི་རང་ངོས་ནས་གྲུབ་པས་ཡོངས་སུ་སྐྱོང་པ་ཡིན་པས། ཆོས་

གང་ལ་ཡང་རང་ངོས་ནས་བྱུང་པ་རྒྱལ་ཙམ་ཡང་མེད་ཅེས་སྟོན་པ་མཉམ་མེད་དེ་  
ཡི་འཇིག་པ་མེད་པའི་སེལ་ཁྲི་ང་རོས་ཕྱོགས་བཅུར་སྟོགས་པར་མཇུག་ཡོད།

བདེན་པར་མཛོན་པར་ཞེན་པའི་ཀྱན་རྟོག་གི་སྟོན་པ་མཐའ་དག་ཡོངས་  
སུ་སྤངས་པའི་ཕྱིར་དེ་དག་གི་གཉེན་པོར་སྟོང་པ་ཉིད་ཀྱི་བདུད་རྩིའི་ཟབ་ཆོས་རྒྱ་  
ཆེ་སྤེལ་བར་མཇུག་པ་དག་ལ་མཛོན་པར་ཞེན་པར་བྱེད་ན་ནི། སྟོན་དུག་དུ་  
འབྱུང་བ་དང་། རྒྱལ་མི་འབར་བ་ལྟར་གསོ་མི་རུང་བའི་ལྟ་བ་ཆེས་ཤིན་དུ་  
སྟོན་པར་བྱ་བ་དང་། དོར་བར་བྱ་བའི་གནས་སུ་གསུངས་སོ། །རྒྱལ་འདི་ནི་  
སྟོབ་དཔོན་ཉིད་ཀྱིས་མཇུག་པའི་རྩ་བ་ཤེས་རབ་ལས།

རྒྱལ་བ་རྣམས་ཀྱིས་སྟོང་པ་ཉིད།

ལྟ་ཀྱན་ངེས་པར་འབྱིན་པར་གསུངས།

གང་དག་སྟོང་པ་ཉིད་ལྟ་བ།

དེ་དག་བབྱུང་དུ་མེད་པར་གསུངས།

ཞེས་གསུངས་པ་དང་གནད་གཅིག་གོ། །དེས་ན་ཕྱིའི་ཆོས་དངོས་པོ་ཤལ་པ་  
སེམས་མེད་བེམ་པོ་དང་། ནང་གི་ཆོས་ལས་ཉོན་གྱི་གཞན་དབང་ཅན་གྱི་  
སེམས་ཅན་རྣམས་རང་བཞིན་གྱིས་བྱུང་པས་སྟོང་ཡང་སྟོང་མ་བཞིན་དུ་རྟེན་ལས་  
བྱུང་བ་ཡིན་པས། མདོར་ན་ཆོས་ཐམས་ཅད་རང་བཞིན་གྱིས་བྱུང་པ་མེད་པར་  
རབ་དུ་བསྟན་པར་མཇུག་ཡོད། དེ་ཁོ་ན་ཉིད་ཀྱི་གནས་ལུགས་དང་དེ་སྟོན་རྒྱལ་  
དག་སྟོན་པས་ལྔར་མེད་ཞིག་གསར་བསྟན་མཇུག་པ་ལྟ་བུ་ཡང་མ་ཡིན་ལ།

’ རྩ་བ་རབ་བྱེད། ༡༩ (འདུ་བྱེད་བརྟགས་པ།)



གཤིས་སྤྱུ་བྱུ་པའི་གནས་ལུགས་ཀྱི་དོན་དེ་ལ་འགའ་ཡང་བཀག་པ་མེད་ལ།  
 སྤྱོད་ཀྱི་ཚུལ་བ་རྣམས་ཀྱིས་ཀྱང་དེ་ཉིད་ཐུགས་ཉམས་སྤྱུ་བཞིས་གིང་སེམས་ཅན་  
 རྣམས་ལ་ཇི་ལྟར་སྤྱོད་པར་མཇེད་པ་ལྟར་སྤྱོད་པ་ཉིད་ཀྱིས་ཀྱང་དེ་ཉིད་ཇི་ལྟར་  
 བཞིན་ཐུགས་སྤྱུ་ཆུང་ཅིང་གཞན་ལ་འདོམས་པར་མཇེད་ཡོད་ཆུལ་འདི་ནི། ས་  
 བཅུ་པའི་མདོ་ལས། “རིགས་ཀྱི་བྱ་འདི་ནི་ཆོས་རྣམས་ཀྱི་ཆོས་ཉིད་དེ། དེ་  
 བཞིན་གཤེགས་པ་རྣམས་བྱུང་ཡང་རུང་། མ་བྱུང་ཡང་རུང་། ཆོས་ཀྱི་  
 དབྱིངས་འདི་ནི་གནས་པ་ཉིད་དེ། འདི་ལྟར་ཆོས་ཐམས་ཅད་སྤོང་པ་ཉིད་དང་།  
 ཆོས་ཐམས་ཅད་དམིགས་སྤྱུ་མེད་པའོ།” །ཞེས་གསུངས་པ་དང་གནད་གཅིག་  
 གོ། །

སོ་སོ་སྤྱོད་པའི་ས་ལས་གོང་དུ་འཕགས་པའི་འཕགས་པ་རྣམས་ཀྱིས་ལམ་  
 བསྐོམ་པའི་རྩོལ་བ་ལ་གཏན་མ་ལྟོས་པར་གནས་ལུགས་མཆན་མ་མེད་པའི་དོན་  
 དེ་དག་རྣམ་པར་ཤེས་པའི་སྤྱོམ་པ་ཡོངས་སྤྱོད་པར་མི་འགྱུར་ན། སོ་སྤྱོད་པ་  
 མལ་པ་རྣམས་ལྟ་ཅི་སྤྱོད་པ། དེས་ན་ལུགས་མཆོག་དུ་གྱུར་པ་འདིར། བདེན་  
 འཛིན་ཀྱི་སྤྱོམ་པས་དབེན་པའི་སྤོང་པ་ཉིད་དང་། མཆན་མ་མེད་པའི་ལམ་ལ་  
 མ་བཞུགས་པར་ཐར་པ་དམ་པའི་གོ་འཕང་ཐོབ་དུ་མེད་དོ། །དེས་ན་སྤྱོད་པ་སྤྱོད་  
 ན་མེད་པ་ཁྱོད་ཀྱིས་ཐེག་པའི་ཡང་ཅི་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་ལམ་འདིར་ཟབ་པ་དང་བྱ་  
 ཆེ་བའི་ལམ་ཀྱི་ལུས་ཡོངས་སྤྱོད་པའི་ཤིང་། ཆ་ཆང་བར་བསྐྱོད་པའི་སྤྱོད་པ་

² སྤྱོད་ཆེན་ལུ་སོ་གཅིག་ལ། ས་བཅུའི་ལུ་ (པོད་ 'ཁ' ༣༧) ཆུལ་དེ་འདྲ་བ་ས་  
 ལུ་ལྟར་པའི་མདོར་ཡང་གསལ་ཡོད། (པེ། མདོ། 'ཅུ' ༣༣)

གདུལ་བྱའི་རེ་བ་ཡིད་བཞིན་དུ་བསྐྱོང་བར་མཛད་ཡོད། རྒྱལ་འདི་འདྲ་བ་དབུ་  
མ་རིན་ཆེན་ཕྱང་བ་སོགས་སུ་ཡང་གསལ་ཡོད། དེ་ལྟར་ཟབ་ཅིང་གྲུ་ཆེ་བའི་  
མདོ་སྒྲགས་ཀྱི་ལམ་གྱི་ལུས་ཇོགས་པར་སྟོན་པ་ཡོ། བསྟོན་ཅིང་བསྒྲགས་པར་  
འོས་པའི་སྟོན་དམ་པ་སྟོན་པ་མཆོག་དེར་སྟོང་དང་རྟེན་འབྱུང་གསུངས་རྒྱལ་གྱི་སྟོ་  
ནས་དང་བ་ཆེན་པོས་མངོན་པར་བསྟོན་པ་ལ་བརྟེན་ནས་ཐོབ་པའི་བསོད་ནམས་  
དེས་འགྲོ་བ་མཐའ་དག་བདེན་འཛིན་གྱི་མཚན་མའི་འཆིང་བ་ལས་ཐུར་དུ་གྲོལ་  
བར་ཤོག་ཅེས་སྟོབ་དཔོན་གྱིས་བསྟོན་པ་དང་ཐུགས་སྟོན་མཛད་པའི་སྟོ་ནས་བསྟོན་  
པའི་མཁུག་བསྟུ་བར་མཛད་དོ། །

### (१) དཔེ་མེད་པར་བསྟོན་པའི་བསྟུ་བར་དོན།

ཇི་ལྟ་ཇི་སྟེད་ཀྱི་ཆོས་ཀྱན་གྱི་གནས་ལུགས་ལ་བལྟ་བའི་ཡང་དག་པའི་ལྟ་  
བས་ཐོངས་ཤིང་། མ་རིག་པའི་རབ་རིབ་ཀྱི་ལིང་དོག་གིས་སྟོ་གྲོས་ཀྱི་མིག་ལྗོངས་  
བའི་འཛིག་རྟེན་པ་དག་ལ་གཅིག་དུ་སྦྲུལ་པར་བཅོན་ཞིང་། བདེན་གྲུབ་ཀྱི་དངོས་  
པོ་གཏན་ནས་མེད་པའི་དོན་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་ཉོགས་པའི་སྟོན་པ་སྟོན་པ་མེད་པ།  
འགྲན་པའི་ཆེད་དང་མཚུངས་ཆོས་ཀྱི་དཔེ་རྟེན་དུ་མེད་པ་དེ་ལ་སྟོབ་དཔོན་གྱིས་སྟོ་  
གསུམ་གསུམ་པ་ཆེན་པོས་བསྟོན་ཅིང་ཐུག་མཛད་ནས་དོན་གང་ཞིག་སྟོན་པར་བཞེད་  
ཅེ་ན། དེ་ཡང་ཇི་སྟེད་དུ་མདོ་ལས། ‘མ་མཐོང་བ་ནི་མཐོང་བ་དམ་པའོ།།’  
ཞེས་གསུངས་པ་ལྟར་སྟོན་པ་གང་གིས་ངོ་བོ་ཉིད་ཀྱིས་གྲུབ་པའི་ཆོས་ཅུང་ཟད་ཀྱང་  
མ་གཟིགས་པ་དེ་ཉིད་ཀྱི་གཟིགས་པ་སྟོན་པ་མེད་པ་ཡིན་དེ། གཟིགས་ཆུལ་དེ་

ཚཱ་མ་གྱི་གནས་ལུགས་མཐར་ཐུག་པ་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་ཀྱི་དོན་ཇི་ལྟ་བུ་བཞིན་  
 རིག་པ་ཡིན་པའི་ཕྱིར་རོ། ། ལྟོས་པ་དང་བྲལ་བའི་དོན་དམ་ཚུགས་ཐུབ་ཅན་གྱི་  
 རྟོགས་བྱ་དང་རྟོགས་བྱེད་ཀྱི་རྣམ་བཞག་མི་འཐད་ལ། ལྟོས་བཅས་དང་བཅོས་  
 མའི་རྟོགས་བྱ་མཐའ་ཡས་པ་ཀུན་ལས་ཆེས་མཆོག་དུ་རྟོགས་དཀའ་བའི་གནས་  
 རྩ་མཆར་ཅན་ཚཱ་མ་ཉིད་སྤང་པ་ཉིད་ཀྱི་དོན་དེ་ཉིད་སངས་རྒྱུ་རྣམས་ཀྱིས་  
 མངོན་སུམ་དུ་རྟོགས་པ་ཡིན་པས་སྟོན་པ་ཁྱོད་ཀྱི་རང་ངོས་ནས་གྲུབ་པའི་ཆོས་  
 ཅུང་ཟད་ཅིག་ཀྱང་བསྐྱེད་པ་དང་བཀག་པ་མེད་ལ། ཚཱ་མ་ཐམས་ཅད་རྩ་བའི་ཉིད་  
 ཀྱིས་མ་གྲུབ་པ་མཉམ་པ་ཉིད་དུ་རྟོགས་པའི་ལྟ་བུ་དེ་ཉིད་ཐུགས་ཉམས་སུ་བཞེས་  
 པ་ལ་བརྟེན་ནས་ཐོབ་བྱ་སྤྲོད་མེད་པའི་སངས་རྒྱུ་གྱི་གོ་འཕང་དམ་པ་དེ་བརྟེས་  
 པ་ཡིན་ནོ། །

སྟོན་པ་ཁྱོད་ཀྱིས་ཐོན་སྟོབ་པ་ལམ་གྱི་གནས་སྐབས་ཚུན་དུ་སྒྲུག་བསྐྱེད་  
 ཀྱིས་མནར་བའི་འཁོར་བ་པ་དག་ཇི་མི་སྟུམ་པར་དོར་ནས་རང་ཉིད་གཅིག་པུ་  
 སྟོལ་དུ་རེ་བའི་དམན་པའི་མྱང་འདས་ཐོབ་འདོད་པའི་སྐབས་དེ་འབྲུག་ཞར་ཡང་  
 བྱུང་མྱུང་མེད་ལ། འཁོར་བའི་གནས་ལུས་ལོངས་སྟོན་དང་བྱ་བྱེད་ཀུན་ལ་  
 མངོན་པར་ཞེན་པའི་མཚན་འཛིན་གྱི་དམིགས་གཏད་ཐམས་ཅད་གཏན་ནས་ཞིག་  
 པའི་ཞི་བ་དེ་མགོན་པོ་ཁྱོད་ཀྱིས་ཇི་ལྟ་བུ་བཞིན་རྟོགས་པ་ཡིན་པས། ཀུན་ཉོན་  
 དང་རྣམ་བུ་གི་ཆོས་ཀུན་ཚཱ་མ་ཉིད་དོན་དམ་གྱི་དབྱིངས་སུ་རོ་གཅིག་ཅིང་དབྱར་  
 མེད་པའི་མཐར་ཐུག་པའི་གདོད་ལུགས་དེའི་རྟོགས་ཆ་ནས་གང་གི་མཁུན་པ་དེ་  
 རྣམ་པ་ཀུན་དུ་རྣམ་པར་དག་ཅིང་སྟོས་པའི་མཚན་མ་དང་བྲལ་བ་ལྟ་བུ་སྟོས།



གཙོ་བོ་ཁྱོད་ཀྱིས་གནས་དུས་ཇི་འདྲ་བ་ཞིག་དུ་ཡང་བདེན་དངོས་ཀྱི་ཚོས་ངེས་པའི་  
 དོན་དུ་ལྟོ་ཞིག་ བུ་སྟངས་ཀྱི་ཚོས་ཀྱི་ཚུལ་ཙམ་དུ་ཡང་ཡིག་འབྲུག་ཅིག་གི་ཚོས་  
 ཙམ་ཡང་གསུངས་པ་མེད། འོན་ཀྱང་སྐབས་སུ་གང་བབས་ཀྱི་གདུལ་བྱའི་འགྲོ་  
 བ་རྣམས་སྤྱི་ལོ་གྱི་ལམ་ལ་འགོད་པའི་སྟངས་དུ་བྱང་བ་དང་ངེས་པའི་དོན་གྱི་  
 དམ་པའི་ཚོས་ཀྱི་ཆར་ཆེན་པོས་ཡོངས་སུ་མཆིམས་པར་མཛད་ཡོད། །

སྟོན་པ་གང་ཞིག་ལ་མཁྱེན་པ་རྣམས་མཁའ་དང་མཉམ་པའི་ཆུ་ཆེ་བའི་  
 ཐུགས་མངའ་ཞིང་ཕུང་ཁམས་སྤྱི་མཆེད་ཀྱིས་བསྐྱུས་པའི་ཚོས་གང་ལ་ཡང་ཞེན་  
 ཆགས་མི་མངའ་བ་ཡིན་པས་དམན་པ་ཟག་བཅས་ཀྱི་ཚོས་གང་ལ་ཡང་རེ་ལྟོས་  
 བཅའ་དགོས་པ་མེད་ལ། དེ་བཞིན་དུ་ཆགས་ཐོགས་དམན་པའི་སྤྱི་བ་པ་མ་  
 སྤངས་པའི་སེམས་ཅན་གྱི་འདྲ་ཤིས་ཅན་གྱི་འཇུག་པ་རྣམས་པ་ཐམས་ཅད་དུ་མི་  
 མངའ་ཡང་། ཐུག་བསྐྱུལ་གསུམ་གྱིས་ཅེ་རིགས་པར་མནར་བའི་སེམས་ཅན་  
 རྣམས་ལ་གཅིག་དུ་ཐུགས་བཅེ་ཆེ་བའི་སྤྱི་ཇི་ཇི་གོང་བྱ་འམ་དེའི་བདག་ཉིད་དུ་  
 བྱུང་བའི་སྟོན་སྐབས་སུ་གང་བབས་ཀྱི་འགྲོ་བའི་དོན་མཛད་པའི་འཕྲིན་ལས་ཀྱི་  
 འཇུག་པ་དུས་ལས་རྣམས་ཡང་ཡོལ་བ་མེད་དོ། །

འཇིག་རྟེན་འཁོར་བས་བསྐྱུས་པའི་ཚོས་ཚོར་བ་བདེ་སྤྱད་དང་། བདག་  
 ཡོད་མེད་དང་། ཉག་མི་ཉག་སོགས་ལ་བརྟེན་པའི་རྣམ་རྟོག་སྤྱི་ཚོགས་ཀྱི་སྤྱི་  
 གྱིས་རྣམས་ཡང་མ་བསྐྱོས་ཤིང་། ཚོས་རྣམས་ལ་ངོ་བོ་ཉིད་ཀྱིས་འགྲོ་འོང་དང་།  
 སྤངས་པ་དང་བཀའ་པ་སོགས་ཀྱི་ཀུན་ཚོབ་ཀྱི་སྤྱི་བ་པ་དང་ཇི་ལྟར་བྱལ་ཚུལ་  
 རྣམས་ཚོས་རྣམས་ཀྱི་གཤིས་ལུགས་ཀྱི་ངེས་དོན་དོན་དམ་བདེན་པ་རིག་པས་



ཞིང་ག་ཟུགས་མེད་བཞིན་དུ་ཡི་ཤེས་རང་སྤང་ལས་གྲུབ་པའི་དག་པའི་འཇག་ལུས་  
 གྱུ་མའི་གྱུ་འཕགས་པ་རྣམས་ཀྱི་ཡི་ཤེས་ཀྱི་སྤྱན་གྱི་གཟིགས་ངོར་ཡིད་ལུས་ཀྱི་རྣམ་  
 པ་ཅན་གྱི་ཚུལ་མཇེལ་དུ་ཡོད་ཅིང་། བ་མལ་པའི་སྤང་ངོར་ག་ཟུགས་ཅན་གྱི་  
 རྣམ་པར་མཇེལ་བ་དེ་ཅམ་གྱིས་སྟོན་པ་ཁྱོད་ཀྱི་དག་པའི་གྱུ་མའི་གྱུ་དངོས་མཇེལ་  
 བ་མིན་ལ། འོན་ཀྱང་འཇིག་རྟེན་གྱི་བ་སྟོད་ཀྱི་སྤང་ངོར་མཐོང་ངོར་མཇེལ་ལོ་ཞེས་  
 ཀྱང་མངོན་པར་བཞེད་པར་བྱེད་དོ། །སྟོན་པས་བསྟན་པའི་རྣམ་ཀྱན་མཆོག་ལྷན་  
 གྱི་དམ་པའི་ཆོས་ཀྱི་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་རྟོགས་ཚུལ་ཇོགས་པའི་སྟོན་ས་  
 མཐོང་ཞིང་རྟོགས་ན་སྟོན་པ་དང་བསྟན་པའི་ངང་ཚུལ་མཐའ་དག་ཇོགས་པར་  
 མཐོང་བ་སྟེ་རྟོགས་པར་འཇོག་གོ། འོན་ཀྱང་ཆོས་ཉིད་སྤོང་བ་ཉིད་ཀྱི་གནས་  
 ལུགས་དེ་གཉིས་སྤང་ཅན་གྱི་སྟོས་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་མཐོང་བ་མ་ཡིན་ནོ། །ཚུལ་དེ་  
 འབྲ་བ་འཕགས་པ་ས་ལུ་ལྷུང་པའི་མདོ་ལས། “དག་སྤོང་དག་སུས་རྟེན་ཅིང་  
 འབྲེལ་བར་འབྲུང་བ་མཐོང་བ་དེས་ཆོས་མཐོང་ངོ། །སུས་ཆོས་མཐོང་བ་དེས་  
 སངས་རྒྱས་མཐོང་ངོ།” །ཞེས་སོགས་གསུངས་པ་བཞིན་ནོ། །

[illegible]

2. ཡེ། བཀའ། (མདོ་ 'རྩ' 33)













ཐལ་པ་ཆེན་པོའི་གཞུང་ལམ་ལ་བརྟེན་ནས་སྐྱེ་ཉིད་ཀྱིས་ཇི་ལྟར་ཆོས་རྒྱམས་ལ་  
བདག་མེད་པའི་རྒྱལ་མཁུན་ཅིང་གཟེགས་པ་ལྟར། སློང་ངར་ལྟ་པའི་གདུལ་བྱ་  
རྒྱམས་ལ་ཐུགས་བརྩི་བ་ཆེན་པོས་འདྲེམས་པར་མཇང་ཡོད། རྒྱལ་འདི་དག་ནི་  
ཇི་བདག་ཉིད་ཆེན་པོས་རྟེན་འབྲེལ་བསྐྱེད་པར།

གང་ཞིག་གཟིགས་ཤིང་གསུང་བ་ཡི།

མཁུན་དང་སྟོན་པ་སྒྲ་ན་མེད།

ཅེས་གསུངས་པ་དང་གནད་ཅིག་གོ། །

ལྷ་ཁྲིམ་དང་གདགས་གཞི་འདྲིམས་བྱུང་མོགས་ལ་བརྟེན་ཅིང་ལྷོས་ནས་  
 འབྱུང་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་རང་ངོས་ནས་མ་སྐྱིས་པ་དང་། ཆོས་རྣམས་ངོ་བོ་ཉིད་  
 གྱིས་བྱུང་པའི་ཚུལ་དུ་མ་སྐྱིས་པའི་ལྷ་མཆན་གྱིས་རང་ངོས་ནས་བསྐྱུང་པས་སྤོང་  
 པར་རབ་དུ་བསྐྱེད་པར་མཛད་ཡོད། ཚུལ་འདི་ཡང་རྗེའི་གསུང་དེ་ཉིད་ལས།

གང་གང་རྒྱུན་ལ་རྟག་ལས་པ།

དེ་དེ་རང་བཞིན་གྱིས་སྤྲོང་ཞིས།

གསུངས་པ་འདི་ལས་ཡ་མཚན་པའི།

ལེགས་འདོམས་རྒྱལ་ནི་ཅི་ཞིག་ཡིད།

ཅེས་གསུངས་པ་དང་གནད་གཅིག་གོ།

རི་ལྗང་རྟེན་ཅིང་འབྲེལ་བར་འབྲུང་བ་ཅན་གྱི་སྤྱོད་པ་ལྟ་བུའི་དབྱུང་ས་  
དག་འགག་པ་མེད་པར་ཐོས་སུ་ཡོད་པ་ལྗང་སྤྱོད་མ་དང་སྤྱིག་སྤྱིའི་ཚུལ་ཏུ་སྤྱིད་པ་  
འཁོར་བ་དག་སྤྱོད་མར་འབྲུང་ཡང་ངོ་ཤོ་ཉིད་གྱིས་གྲུབ་པའི་ཚུལ་གྱིས་ནི་མ་ཡིན་



དངོས་པོ་རྣམས་རང་ངོས་ནས་ཡོད་པ་ལས་ཀྱང་མིན་ལ། ཐ་སྟད་ཅམ་དུ་མེད་  
 པ་ལས་ཀྱང་མིན་ལ། དེ་གཉིས་ཀའི་གཞི་མ་ཐུན་ལས་ཀྱང་མིན་པ་དེའི་ཆེ་  
 མཐའ་བཞི་གང་ལས་འབྱུང་ཟིགས་ཏེ་མི་ཟིགས་སོ། །དེས་ན་ཚུལ་དེ་དག་ལས་  
 ཡོངས་སུ་ཐོག་ཏེ། རྟེན་འབྱུང་གྱི་མ་ཙམ་གྱི་འབྱུང་ཚུལ་དག་གི་ན་དུ་འཐད་པ་  
 ཡིན་ནོ། །མཐའ་བཞི་དང་བྲལ་བའི་ཆོས་ལ་ཐ་སྟད་རྟེན་འབྱུང་གི་སྐྱེ་བ་འཐད་  
 ཀྱང་རང་བཞིན་གྱིས་སྐྱེ་བ་རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་དུ་བཞག་དུ་མེད་ལ། དེ་མེད་  
 པས་ལྟོས་ས་དེ་ལ་ལྟོས་པའི་གཞན་དངོས་ལས་བྱུང་བ་ཡང་མི་འཐད་དོ། །ཐ་  
 སྟད་རྟེན་འབྱུང་གི་ཚུལ་དུ་རང་ཉིད་ཡོད་ན། དེ་ལ་ལྟོས་པའི་གཞན་དང་། དེ་  
 ལས་བཞྱོག་པ་ཡང་འཛོག་དུ་ཡོད་པ་ནི་དེ་དག་པ་རྩེ་ལ་ཚུ་རྩེ་བཞིན་དུ་ལྟོས་པ་  
 ཅན་དུ་བྱུང་བའི་གནད་ཀྱིས་ཡིན་ནོ།

གལ་ཏེ་ལྟོས་མེད་བཅོས་མིན་ཡིན་ན་རྒྱ་རྒྱུ་དང་གདགས་གཞི་འདོགས་  
 བྱེད་སྟེགས་གང་ལ་བརྟེན་ནས་ཅི་ཞིག་འབྱུང་བའི་རྣམ་བཞག་དག་འཛོག་མི་  
 ཟིགས་ཏེ། །དཔེར་ན་གང་ལ་ལྟོས་སའི་གཞི་རིང་བ་དང་རགས་པ་སྟེགས་མེད་  
 ན། དེ་ལ་ལྟོས་པའི་བྱུང་དུ་དང་ཕྱ་བ་སྟེགས་འཛོག་དུ་མེད་པ་བཞིན་ནོ། །དཔེ་  
 དེ་བཞིན་དུ་ཡོད་མེད་དང་། གཅིག་ཐ་དད་དང་། འདས་མ་འོངས་དང་།  
 ཀྱན་ཉོན་རྣམ་བུ་དང་། ཡང་དག་ལོག་པ་དང་། རང་དང་གཞན་ལ་སྟེགས་  
 པའི་གཉིས་ཆོས་ཀྱི་རྣམ་བཞག་མཐའ་དག་པམ་ཚུན་ལྟོས་པ་ཅན་དུ་ཡོད་པ་དང་།  
 རང་ངོས་ནས་བྱུང་བ་གཏན་ནས་མེད་པར་གསུངས་སོ། །མདོར་ན་ཆོས་  
 ཐམས་ཅད་གདོད་མ་ནས་བདེན་པར་བྱུང་བའི་སྐྱོས་པའི་མཚན་མ་ཡོངས་སུ་ཞི་



གདང་། རང་བཞིན་གྱིས་ཀྱང་ཡོངས་སུ་བྱ་ངན་ལས་འདས་གིང་། ཡང་དག་  
པར་སྒྲི། ཉོན་དམ་པར་རང་བཞིན་གྱིས་མ་སྒྲིས་པ་ཡིན་པས། ཆོས་རྣམས་  
ཉོན་འབྱུང་སྒྲི་མ་བཞིན་དུ་འབྱུབ་པར་གསུངས་སོ། །

གྲོ་བློས་ཀྱི་མཐུ་ཕུལ་དུ་དབྱུང་དུ་མེད་པའི་སྒྲོན་པ་ཁྱོད་ཀྱིས་གཟུགས་  
 སོགས་ཀྱི་ཚོས་རྒྱམས་དབུ་བ་དང་། རྩུ་བ་དང་། རྩུ་མ་དང་། འབྲ་བ་དཔེ་  
 དུ་མའི་སྒྲོན་ས་རང་བཞིན་མེད་པར་བྱབ་པར་མཇད་ཡོད། གལ་ཏེ་ཐ་མལ་པའི་  
 དབང་པོའི་ཡུལ་དུ་གང་དམིགས་པ་དེ་ཚོས་རྒྱམས་ཀྱི་ཡང་དག་པའི་གནས་ལྷགས་  
 ཡིན་ན། བྱིས་པ་སོ་སོ་སྤྱོད་པས་ཀྱང་གནས་ལྷགས་ཀྱི་དོན་རྟོགས་པར་ཐུལ་བ་  
 དང་། འཕགས་རྒྱུད་ཀྱི་ཡང་དག་པའི་རིག་ཤེས་དགོས་མེད་དུ་འགྱུར་བའི་སྒྲོན་  
 ཡོད་དོ། །སོ་སྤྱོད་དབང་པོས་དོན་དེ་མི་རིག་པའི་རྒྱ་མཚན་ནི། མིག་སོགས་  
 དབང་པོ་དེ་རྒྱམས་བཅའ་པོ་ཡིན་པའི་ཕྱིར་ན་ཆད་མ་མིན་ལ། དེ་བཞིན་དུ་དེ་  
 དག་ལྷང་དུ་མ་བསྐྱེན་པ་དང་། ལོག་པར་ཡོངས་སུ་ཤེས་པ་ཡིན་པར་གསུངས་  
 པའི་ཕྱིར་རོ། །དེས་ན་ཐ་མལ་པའི་དབང་པོས་ཚོས་རྒྱམས་ཀྱི་གནས་ལྷགས་  
 མཐར་ཐུག་པ་ཅི་ཞིག་ཀྱང་རྟོགས་སྐབས་པར་དཀའ་སྟེ། འཇིག་རྟེན་པ་རྒྱམས་མི་  
 ཤེས་པའི་སྤྱིབ་པས་ཤེས་རྒྱུ་ཡོངས་སུ་བསྐྱེབས་ནས་ཡོད་པ་དེ་ཡང་དག་ཇི་  
 བཞིན་སྐྱབས་སུ་རྒྱུད་པའི་སྒྲོན་པ་ཁྱོད་ཀྱིས་བཀའ་བསྟུལ་བའི་ཕྱིར་རོ། །

སྒྲིལ་པ་སྒྲུབ་ཅིང་པ་ཁྱེད་ཀྱི་ལུགས་ལ་བདེན་དངོས་ཀྱི་ཆོས་ཡོད་པར་སྒྲུབ་  
པ་ཉག་པར་བཟུང་བ་དང་། བཟུང་ཙམ་དུ་མེད་པའི་གཏན་མེད་སྒྲུབ་ཆད་པར་  
ལྟ་བུ་ཡིན་པས། དེ་གཉིས་དང་བྲལ་བའི་ཡང་དག་པའི་ཆོས་དབྱེ་མའི་ལམ་









བ་ཡིན་པས། དེ་ལས་གཞན་དུ་ན་མཐའ་མིང་དང་ཐུག་མིང་སོགས་སུ་ཐལ་  
བར་འགྱུར་རྟོ། །

[illegible]











ཐུགས་ཀྱི་ཆ་བསྟན་ནམས་ཀྱི་ཚྭས་ཀྱི་ཡོན་ཏན་རིན་པོ་ཆེས་ཕྱག་པ་སྟེ་ཐུགས་  
 རྒྱུད་ཡོངས་སུ་གཏམས་པས་ན།      མགོན་པོ་སངས་རྒྱལ་བཙུང་ལྷན་འདས་  
 རྒྱུད་ནི་ཚྭས་གཉིས་ཀྱིས་བསྐྱེད་པའི་ཡོན་ཏན་ཀྱང་གྱི་པ་རྣམས་ཀྱི་ཡོངས་སུ་སོན་  
 པ་ཆེ་མེད་པའི་སྐྱབས་གནས་གཅིག་པུ་ཡིན་ནོ། །

དེས་ན་མཆུངས་ཆོས་ཀྱི་དཔེ་རྒྱུད་མེད་པས་དཔེ་མེད་པ་དང་།  
 ཡོན་ཏན་གྱི་ཚྭས་ཕལ་དང་ཕལ་གྱི་སྒྲོར་རྒྱུད་མེད་པའི་བསམ་གྱིས་མི་ཁྱབ་  
 པའི་དཔལ་དང་ལྷན་པའི་བསྟོན་ཡུལ་མཆོག་འགྲོ་བའི་མགོན་པོ་སངས་རྒྱལ་  
 བཙུང་ལྷན་འདས་ལ་སྟོབ་དཔོན་གྱི་གྲུབ་བདག་གིས་དང་བ་ཆེན་པོས་བསྟོན་པ་ལ་  
 བརྟེན་ནས་ཐོབ་པའི་བསྟན་ནམས་དེའི་མཐུ་ལ་བརྟེན་ནས།      འགྲོ་བ་ཀྱང་ཀྱང་  
 སྟོན་པ་རྣམས་པའི་སངས་རྒྱལ་གང་ཉིད་དང་མཆུངས་པར་ཤོག་ཅིག་ཅེས་ཐུགས་  
 སྟོན་མཛད་པའི་སྟོན་ནས་བསྟོན་པའི་མཁུག་བསྐྱེད་པར་མཛད་དོ། །

### (༤) དོན་དམ་པར་བསྟོན་པའི་བསྐྱེད་དོན།

འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་མ་འདས་ཀྱི་ཆོས་གང་ལ་ཡང་རང་བཞིན་གྱིས་  
 ཐུབ་པའི་སྐྱེ་འཇིག་མེད་ལ།      འཇིག་རྟེན་གྱི་དཔེར་བྱ་བ་ཀྱང་ལས་འདས་པ་དང་།  
 སྐྱེ་རྒྱུ་དང་རྒྱུ་རྒྱུ་གི་སྟོན་ཡུལ་ལས་ཡོངས་སུ་འདས་པའི་དོན་དམ་གཤིས་  
 ལུགས་ཀྱི་ངང་རྒྱལ་གང་ལ་ཇི་ལྟར་བསྟོན་པར་བྱ་སྟེ་བསྟོན་པར་བྱར་མེད་མོད།  
 དེ་ལྟར་ཡང་གཤིས་ལུགས་དེ་དང་འབྲེལ་བའི་དོན་དམ་གནས་ལུགས་དེ་བཞིན་ཉིད་  
 ཀྱི་དོན་སྟོན་ཡུལ་དུ་བྱེད་པའི་འཕགས་པ་ཀྱའི་མཁུག་པའི་ཡེ་ཤེས།      འཇིག་རྟེན་









གནས་སུ་འགྲོ་བར་ཤོག་ཅེས་ཐུགས་སྒྲིན་མཛད་པའི་སྒྲོ་ནས་བསྐྱོད་པའི་མཇུག་  
བསྐྱུ་བར་མཛད་དོ། ॥

སུམ་སྒྲུབ་ལ།

पुण्याविपाकु सुख सर्वदुःखापनेती

अभिप्रायु सिध्यति च पुण्यवतो नरस्य ।

क्षिप्रं च बोधि स्पृसते विनिहत्य मारं

शान्तामथो गच्छति च विवृति शीतिभावं ॥

( ललितविस्तर-परि० २२, पृ० ६६९ )

བསྐྱོད་ནམས་རྣམས་སྒྲིན་བདེ་སྤྱོད་སྤྱུག་བསྐྱུ་བསྐྱུ་ཐམས་ཅད་སེལ།

བསྐྱོད་ནམས་ལྷན་པའི་མི་ཡི་བསམ་པ་རྣམས་ཀྱང་འགྲུབ།

བདུད་བཙོམ་ནས་ནི་བྱང་ཆུབ་མྱུར་དུ་རེག་པར་འགྱུར།

མྱ་ངན་འདས་པ་ནི་བ་བསེལ་བའི་དངོས་པོ་ཐོབ།

(མདོ་རྒྱ་ཆེན་རྩལ་པ། མདོ། 'ཁ' ༡༧༡)

## भूमिका

ओं नमः श्रीसर्वबुद्धबोधिसत्त्वेभ्यः ।

जैसा कहा गया है—

सर्वदा सर्वथा सर्वे यस्य दोषा न सन्ति ह ।  
सर्वे सर्वाभिसारेण यत्र चावस्थिता गुणाः ॥  
तमेव शरणं गन्तुं तं स्तोतुं तमुपासितुम् ।  
तस्यैव शासने स्थातुं न्याय्यं यद्यस्ति चेतना<sup>१</sup> ॥

[अर्थात् जिस (शास्ता) में सभी दोष सदा सर्वथा नहीं रहते और जिसमें सभी गुण सदा और सर्वथा विद्यमान होते हैं, अतः जिस (व्यक्ति) में (प्रज्ञारूपी) चेतना विद्यमान है, उसके लिए उसी (शास्ता) की शरण में जाना, उसी की स्तुति एवं उपासना करना तथा उसी के शासन (धर्म) में स्थित रहना युक्तियुक्त है ।]

उसी प्रकार देवातिशयस्तुति में कहा गया है—

यस्य दोषा न विद्यन्ते विद्यन्ते चामिता गुणाः ।  
सर्वज्ञश्च कृपालुश्च तमहं शरणं गतः<sup>२</sup> ॥

[अर्थात् जिसमें किसी प्रकार के दोष नहीं हैं और सभी प्रकार के अपरिमित गुण विद्यमान हैं, जो सर्वज्ञ और महाकृपालु हैं, उनकी शरण में जाता हूँ ।]

इन अमृतरूपी वचनों के अनुसार पूज्य एवं स्तुत्य जनों में परम विशिष्ट एवं सर्वोत्कृष्ट जिन-वज्रधर से अभिन्न गुरु, इष्टदेव, बुद्ध-बोधिसत्त्व, अर्हत् आदि तथा उन सबके काय, वाक्, चित्त एवं कर्म सहित अचिन्त्य त्रिगुह्य रूपी जो गुण हैं, वे साधारण जनों के चिन्तन (मनस्) एवं वाक् (स्तुति) के अगोचर हैं । आचार्य नागार्जुन ने इस तात्त्विक वस्तुस्थिति को यथावत् जानकर अपने स्तोत्रगण में तुल्य (उपमायोग्य) निदर्शन उपलब्ध न होने के कारण 'निरौपम्यस्तव' की

१. आर्यमातृचेट विरचित 'अध्यर्धशतक' स्तोत्र, १-२ कारिका । द्र०-बौद्धस्तोत्रसंग्रह, मोतीलाल-बनारसीदास, १९९४ ।

२. आचार्य शंकरस्वामि विरचित 'देवातिशयस्तुति' श्लो० २०, पण्डित सेरिस-१, पृ० २० ।



रचना की। उसी प्रकार सर्वसामान्य लौकिक स्थिति से अतीत होने के कारण 'लोकातीतस्तव', जिससे उत्तर (विशिष्ट) किसी अन्य के न होने के कारण 'निरुत्तरस्तव', जिन (बुद्ध) के गुणों और कर्मों के अचिन्त्य और अनभिलाष्य होने के कारण 'अचिन्त्यस्तव', शब्द और कल्पना के विषय से अतिक्रान्त होने के कारण 'स्तुत्यतीतस्तव' तथा यथावत् वस्तुस्थिति में विद्यमान होने के कारण 'परमार्थस्तव' आदि अनेक अद्भुत स्तुतियों की रचना की है।

उक्त पूजास्थानीय उत्तम गुणों को देखकर आचार्य अश्वघोष ने भी 'वर्णार्हवर्ण बुद्धस्तोत्र' के अन्तर्गत अशक्यस्तव, मूर्धाभिषेकस्तव आदि द्वादश स्तवों की रचना की है। इसी तरह अध्यर्धशतक के अन्तर्गत हेतुस्तव आदि त्रयोदश स्तव तथा इसी को आधार बनाकर आचार्य दिङ्नाग ने मिश्रकस्तोत्र की रचना की है। इस प्रकार भारतीय विद्वानों ने अनेक स्तोत्रों की रचना की है, जो अलंकार आदि उत्तम काव्यगुणों से गुम्फित हैं। इस तरह की स्तुतियों के जो गम्भीर अभिधेय हैं, उन्हें उत्तम शब्दालंकार और अर्थालंकारों से सुसम्पन्न काव्यशैली में आबद्ध कर वाक्य-रचना के माध्यम द्वारा पूजास्थानीय महापुरुषों के प्रति श्रद्धा, प्रसाद एवं उत्साह के साथ स्तुति एवं सत्कार रूपी शतसहस्रपत्रनिर्मित माला के रूप में दश दिशाओं में यथेष्ट फैलाया जा सकता है। वह भी, व्यावहारिक प्रतीत्यसमुत्पाद के अतिविशाल मार्ग पर आश्रित होकर यथेच्छ स्तुति की जा सकती है—इसमें किसी प्रकार की रुकावट नहीं है।

यदि ऐसा है तो आचार्य नागार्जुन ने अपने परमार्थस्तव और आर्यमञ्जुश्री-परमार्थस्तव में जो यह कहा गया है—

शून्येषु सर्वधर्मेषु कः स्तुतः केन वा स्तुतः<sup>१</sup> ।

[अर्थात् सभी धर्मों के शून्य होने के कारण कौन स्तुत होता है और किसके द्वारा स्तुति की गई है।] इसी तरह पुनः वहीं कहा गया है—

कथं स्तोष्यामि तं नाथमनुत्पन्नमनालयम् ।

लोकोपमामतिक्रान्तं वाक्यथातीतगोचरम्<sup>२</sup> ॥

१. द्र०-परमार्थस्तवः, का०-९ ।

२. द्र०-वही, का०-१ ।

[अर्थात् जो अनुत्पन्न, अनालय (आसक्तिरहित) और समस्त लौकिक उपमाओं से अतिक्रान्त (ऊपर) याने अनुपम है तथा जो वाक्यथ (अभिधान) का अगोचर (अविषय) है, उस नाथ (भगवान् बुद्ध) की मैं कैसे स्तुति (गुणाख्यान) करूँगा?]

इन उपर्युक्त कथनों की वज्रह से स्तुतिमाला को कैसे यथेष्ट फैलाया जा सकता है?

**समाधान—**समस्त धर्मों के परमार्थतः पूर्णतया शून्य होने पर भी वे अत्यन्त अभावभूत न होकर प्रतीत्यसमुत्पन्न के रूप में विद्यमान हैं, अतः स्तुतियोग्य क्षेत्रों अर्थात् पूजायोग्य महापुरुषों की श्रद्धावान् विद्वानों द्वारा सत्कारपूर्वक स्तुति की जा सकती है। यह सारी व्यवस्था भ्रान्तिमूलक परमत के आधार पर नहीं, अपितु स्वमत के अनुसार समुचित ढंग से स्थापित करने में कोई बाधा या रुकावट नहीं है। जैसा कि स्वयं आचार्य द्वारा विरचित उक्त ग्रन्थों में कहा गया है—

तथापि यादृशो वाऽसि तथतार्थेषु गोचरः ।  
लोकप्रज्ञसिमागम्य स्तोष्येऽहं भक्तितो गुरुम्<sup>१</sup> ॥

[अर्थात् आप जैसे भी हों, यद्यपि तथता के अर्थ (परमार्थ) में ही गोचर हैं, फिर भी लोक-व्यवहार का आश्रय करके भक्ति (श्रद्धा)पूर्वक मैं गुरु (भगवान् बुद्ध) की स्तुति करूँगा।]

उसी प्रकार स्तुत्यतीतस्तव में भी कहा गया है—

अनुत्तरमार्गगतं स्तुत्यतीतं तथागतम् ।  
भक्त्योत्सुकेन चित्तेन स्तुत्यतीतं स्तवीम्यहम्<sup>२</sup> ॥

[अर्थात् अनुत्तरमार्ग में प्रविष्ट (आरूढ़) तथागत (आप) यद्यपि स्तुत्यतीत (वाग्-अगोचर) हैं, तथापि भक्ति (श्रद्धा) और कुशलोत्साह से सम्पन्न चित्त के द्वारा मैं स्तुत्यतीत आपकी स्तुति करता हूँ।]

१. द्र०-परमार्थस्तवः का०-२ ।

२. द्र०-स्तुत्यतीतस्तव, का०-१, पृ० ७०१, इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टरली, वाल्यूम-८ ।

उपर्युक्त वचनों के आधार पर समस्त धर्मों के स्वभावतः शून्य होने पर भी व्यवहार में स्तुति, सत्कार आदि की सारी व्यवस्था समुचित ढंग से स्थापित की जा सकती है।

कुछ लोग इसे न मानकर स्वभावतः शून्यता का अर्थ अत्यन्ताभाव के रूप में ग्रहण कर उस (शून्यता पक्ष) में संक्लेश और व्यवदान की सारी व्यवस्था अयुक्त मानते हैं। ऐसे माननेवालों में कुछ लोग तो स्वयं को माध्यमिक कहते हैं, फिर भी वास्तव में वे वस्तुवादियों के मत में पतित होते हुए प्रतीत होते हैं। ऐसे लोगों के मत को दिखलाते हुए मूलमाध्यमिककारिका में कहा गया है—

यदि शून्यमिदं सर्वमुदयो नास्ति न व्ययः ।

चतुर्णामार्यसत्यानामभावस्ते प्रसज्यते<sup>१</sup> ॥

[अर्थात् यदि सभी धर्म शून्य हैं तो न उदय (उत्पाद) होगा और न व्यय (विनाश)। इस तरह आपके मत में चार आर्य सत्त्यों के भी अभाव का प्रसङ्ग होगा।]

इस तरह वे लोग माध्यमिकों की सम्यग्दृष्टि से दूर हो जाएँगे और अन्तर्विरोध के सागर में निमग्न हो जाएँगे। संक्षेप में निःस्वभावता के पक्ष में स्तुत और स्तुतिकर्ता आदि की सारी व्यवस्था का युक्तियुक्त ढंग से सुव्यवस्थित होना आचार्य ने स्वयं मूलमाध्यमिककारिका में कहा है—

सर्वं च युज्यते तस्य शून्यता यस्य युज्यते<sup>२</sup> ।

[अर्थात् जिसके मत में शून्यता युक्ति-युक्त (सिद्ध) होती है, उसके मत में सभी (व्यवस्थाएँ) युक्तियुक्त सिद्ध होती हैं।]

अपि च—

अप्रतीत्यसमुत्पन्नो धर्मः कश्चिन्न विद्यते ।

यस्मात्तस्मादशून्यो हि धर्मः कश्चिन्न विद्यते<sup>३</sup> ॥

१. द्र०—मूलमाध्यमिककारिका, नागार्जुनकृता, २४:१ कारिका।

२. वही, २४:१४ कारिका।

३. वही, २४:१९ कारिका।



[अर्थात् यतः कोई भी धर्म अप्रतीत्यसमुत्पन्न नहीं होता, अतः कोई भी धर्म अशून्य नहीं होता। (अर्थात् प्रतीत्यसमुत्पन्न होने से सभी धर्म शून्य होते हैं)।]

इस प्रकार बुद्धशासन में द्वितीय शास्ता के रूप में विख्यात उस प्रामाणिक पुरुष (नागार्जुन) के मुखमण्डल से समुद्गत ये वचन किसी भी वादी द्वारा धर्मानुकूल अकाट्य हैं। अतः इस तथ्य पर प्रामाणिक रूप से निश्चय प्राप्त कर लेना चाहिए।

### आर्य एवं भोट देश के विद्वानों द्वारा स्तुतिरचना-प्रक्रिया की समीक्षा

आर्यदेश और भोट देश के विद्वानों द्वारा पूजनीय क्षेत्रों (पुद्गलों) के अद्भुत गुणों के आधार पर की गई स्तुतियों के अनेक प्रकार हैं। उदाहरणार्थ सामान्य और विशेष का भेद किये बिना सभी गुणों का आख्यान करते हुए सामान्यतया स्तुति करना, विशिष्ट क्षेत्र या गुण के आधार पर विशेषतया स्तुति करना, प्रत्येक स्तुति का अलङ्कार से अलङ्कृत होते हुए काव्यबद्ध होना या न होना आदि अनेक प्रकार विद्यमान हैं।

आर्य देश के अत्यन्त संवेदनशील, ईमानदार और तर्कनिपुण विद्वान् आचार्य उद्भटसिद्ध एवं आचार्य शङ्करस्वामी ने क्रमशः विशेषस्तव एवं देवातिशयस्तोत्र की रचना की है। आचार्य प्रज्ञाकर वर्मा ने इन दोनों पर टीका लिखी है। इस प्रकार श्री हर्षदेव ने सुप्रभातस्तोत्र की रचना की है। इन ग्रन्थों में भगवान् तथागत की स्तुति करते समय अपने शास्ता और शासन की बौद्धेतर शास्ताओं और शासन के साथ तुलना करते हुए उत्तम और हीन का मौलिक अन्तर (भेद) करके स्तुति की गई है। वह भी पुराकालिक पुराणेतिहास के वृत्तान्तों को प्रमाण के रूप में प्रस्तुत करते हुए सम्यग् युक्तियों के आधार पर प्रामाणिक शास्ता के प्रति अवेत्यप्रसाद से युक्त होकर अद्भुत स्तुति की गई है। यह निश्चित रूप से स्तुतियों में अत्युत्तम है।

तनग्युर-संग्रह में उपलब्ध अधिकतर स्तुतियों में इस प्रकार उत्तम और हीन का विभाजन नहीं किया गया है, फिर भी अपने शास्ता भगवान् बुद्ध और उनके शासन के प्रति अवेत्यप्रसाद और प्रमाण द्वारा आनीत दृढ़ निश्चय से प्रेरित होकर स्तुति करना प्रमुख है। इनमें से अनेक स्तुतियाँ निःसन्देह अलङ्कार एवं रस से समन्वित, काव्यबद्ध, प्राञ्जल वाक्यरचना से युक्त तथा अद्वितीय एवं अद्भुत

वाक्-श्री से अन्वित हैं, जैसे—महाकवि अश्वघोष रचित वर्णार्हवर्णस्तोत्र एवं शतपञ्चाशत्कस्तोत्र तथा इसी को आधार बनाकर आचार्य दिङ्नाग विरचित मिश्रकस्तोत्र आदि प्रमुख हैं। भोट देश के महापण्डित आचार्य चोंखापा द्वारा विरचित आर्यमैत्रेयनाथस्तुति एवं आर्यमञ्जुश्रीस्तुति—ये दो महास्तोत्र, धर्मराज डक्पा-जङ्-छुप्-पदल्-सङ्पो (कीर्तिबोधिश्रीभद्र) के विशिष्ट गुणों को आधार बनाकर दुरूह महाकाव्य के रूप में विरचित 'अद्भुतस्तोत्र', छङ्से-येद्-पर्ई-दोर्जे (ब्रह्मपुत्रस्मितवज्र) द्वारा (चोंखापा जी के) 'प्रतीत्यसमुत्पादस्तुतिसुभाषितहृदय' को आधार बनाकर विरचित 'अक्षयाभिधेय-आकाशकोश-विस्तृतद्वार-उद्घाटन-सत्ययुगमेघघोष' नामक मिश्रकस्तोत्र आदि अनेक काव्यबद्ध उत्कृष्ट कृतियाँ निर्मित की गई हैं। यहाँ जिनका उल्लेख किया गया है, वे तो निदर्शनमात्र हैं।

अनेक स्तोत्र ऐसे भी हैं, जो शब्दालंकार आदि से चमत्कृत भले ही न हों, फिर भी उत्तम काव्यगुणों से समृद्ध हैं, जैसे—स्वयं आचार्य (नागार्जुन) द्वारा विरचित चतुःस्तव आदि स्तोत्र। इसी तरह आचार्य चोंखापा द्वारा विरचित तथागत के विशेष गुण का आख्यान करनेवाला 'प्रतीत्यसमुत्पादस्तुतिसुभाषितहृदय' नामक स्तुतिराज आदि अनेक स्तोत्र हैं, फिर भी यहाँ विस्तार के भय से उनका उल्लेख नहीं किया जा रहा है।

बुद्ध एवं बोधिसत्त्व आदि पूजनीय क्षेत्रों के प्रति लिखित जितनी भी स्तुतियाँ हैं, उनमें से अधिकतर स्तुतियाँ साक्षात् या परम्परया उन महापुरुषों के अनेकविध कर्मों में से परम विशिष्ट वाक्कर्म ही हैं, उसी (वाक्कर्म) को प्रमुखता देकर स्तुतियाँ रची गई हैं। उदाहरणार्थ आचार्य नागार्जुन का चतुःस्तव आदि तथा आचार्य चोंखापा जी की प्रतीत्यसमुत्पादस्तुति आदि। इन सब (स्तुतियों) में भगवान् तथागत के अनेक गुणों में से शून्यता और प्रतीत्यसमुत्पाद के उपदेश रूपी गुण को प्रमुख मानकर और उससे आकृष्ट एवं प्रभावित होकर अनुपम स्तुतियों की रचना की गई है।

अनेक स्थानों पर प्रतिपाद्य विशेष गुण अथवा विशेष अभिधेय को स्तुत्य बनाकर स्तुति की रचना की गई है, यथा—नागार्जुन का 'धर्मधातुस्तोत्र' है, जिसमें समस्त प्राणियों में विद्यमान प्रकृतिस्थ गोत्र को आलम्बन बनाकर स्तुति की गई है। इसी तरह आचार्य चोंखापा और भट्टारक 'गुड्थङ्-तेनपर्ई-डोनमे' ने क्रमशः रक्त-पीत मञ्जुश्री तथा श्वेत मञ्जुश्री के काय-वाक्-चित्त में प्रत्येक के गुणों को विषय बनाकर स्तुति की है।



यदि स्तुति करने की प्रक्रिया के भिन्न-भिन्न प्रकार हैं तो प्रस्तुत 'चतुः-स्तव' नामक स्तुतिसंग्रह में किस प्रकार को अपनाकर भगवान् बुद्ध की स्तुति की गई है? यह किस प्रकार के अनुकूल है?

पूर्वोक्त की भाँति इसमें रस और अलंकार आदि के प्रपञ्चों को छोड़कर प्रमुख रूप से भगवान् बुद्ध ने जो सर्वधर्मनिःस्वभावता और प्रतीत्यसमुत्पाद की देशना की है, भगवान् के इस विशेष वाक् गुण से अत्यन्त आकृष्ट एवं प्रभावित होकर आचार्य ने भगवान् के प्रति अवेत्यप्रसाद से आप्नुत होकर उनकी स्तुति की है।

### स्तुति ग्रन्थों पर आचार्य नागार्जुन का प्रभाव

भोट भाषा में उपलब्ध तनग्युर-संग्रह के अन्तर्गत 'स्तोत्रगण' में संगृहीत ७१ स्तोत्रों में प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता आचार्य नागार्जुन के १९ स्तोत्र संगृहीत हैं। इनमें से अधिकांश स्तुतियाँ भगवान् बुद्ध तथा उनके अनेक कर्मगुणों में से परम विशिष्ट वाक्कर्म को प्रमुख बनाकर स्तुति की गई है। जैसे—लोकातीतस्तव आदि चतुःस्तव, स्तुत्यतीतस्तव, प्रज्ञापारमितास्तव, आर्यमञ्जुश्रीपरमार्थस्तुति, निरुत्तरस्तव आदि स्तोत्रों में जिस प्रकार भगवान् तथागत ने शून्यता और प्रतीत्यसमुत्पाद की देशना की है, उससे आश्चर्यचकित होकर उनकी स्तुति की गई है। धर्मधातुस्तव में समस्त सत्त्वों में आदितः विद्यमान प्रकृति गोत्र को आधार बनाकर उसकी स्तुति की गई है। चित्तवज्रस्तोत्र में सभी सास्त्रव सुखों और दुःखों का कर्ता, कर्म और क्लेशों का प्रहायक तथा बुद्धत्वप्रापक जो चित्त है, उसके महत्त्व का आख्यान करते हुए उसकी स्तुति की गई है। इस (चित्तवज्रस्तोत्र) के अभिधेय का तन्त्रयान के पक्ष में भी ग्रहण किया जा सकता है—ऐसा भी प्रतीत होता है।

आर्यमञ्जुश्रीकरुणास्तोत्र, कायत्रयस्तोत्र स्ववृत्ति सहित, सत्त्वाराधनस्तोत्र, अष्टमहास्थानचैत्यस्तोत्र, द्वादशाकारनयस्तोत्र, वन्दनास्तोत्र एवं नरकोद्धारस्तोत्र आदि इन सबके अभिधेय ग्रन्थ के नाम से ही स्पष्ट हैं, किन्तु इन सबमें यह एक तथ्य अवश्य ज्ञातव्य है कि उक्त सभी स्तोत्रों का सम्बन्ध साक्षात् या परम्परया भगवान् बुद्ध से है। अतः ये सभी भगवान् बुद्ध के स्तोत्र ही हैं। इन सबमें बुद्ध के द्वादश चरित्र (लीलाएँ), जहाँ उपदेश किया, वे स्थान, बुद्धस्तूप और उनके कर्मगुण आदि को विषय बनाकर स्तुति की गई है।



पूर्वोक्त सत्त्वाराधन-स्तव में आचार्य नागार्जुन ने भगवान् बुद्ध द्वारा षोडश महाश्रावकों को उपदिष्ट 'बोधिसत्त्वपिटक-ऊपर नदी' नामक सूत्र के भावार्थ को पद्यबद्ध करके स्तुति के रूप में प्रस्तुत किया है। चतुःस्तव के अन्तर्गत संगृहीत 'परमार्थस्तव' और उन्हीं के द्वारा रचित 'आर्यमञ्जुश्रीपरमार्थस्तव' इन दोनों में अत्यधिक साम्य है। कई श्लोक तो अभिधेय और वाक्यरचनाशैली की दृष्टि से नितान्त एक-जैसे दृष्टिगोचर होते हैं। तनग्युर-संग्रह के तन्त्रवर्ग में आचार्य (नागार्जुन) के नाम से 'श्रीमहाकालस्तोत्र अष्टपद' नामक तीन स्तोत्रों का उल्लेख ग्रन्थसूची में निर्दिष्ट है। इनमें से दो का नाम संस्कृत भाषा में 'श्रीमहाकालस्तुति अष्टमन्त्र' दिया गया है। इसके अतिरिक्त 'वज्रमहाकाल-अष्टस्तोत्र' नामक स्तोत्र भी है। इनमें से दो स्तोत्रों में अधिक अन्तर नहीं है। बुस्तोन रिनपोछे की एक तनग्युर-सूची में 'श्रीमहाकालस्तोत्र-अष्टपद' नामक एक स्तोत्र ही उल्लिखित है। इसी प्रकार तनग्युर-संग्रह की सूची में आचार्य नागार्जुन के नाम पर विभिन्न पाँच 'महाकालसाधन' नामक ग्रन्थ उल्लिखित है, किन्तु मूल ग्रन्थ में दो के ऊपर रचयिता का नाम उल्लिखित नहीं है। अतः इस विषय पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता है। हाल ही में प्रकाशित 'बौद्ध स्तोत्रसंग्रह' में आचार्य के नाम से चतुःस्तव के अतिरिक्त संस्कृत भाषा में वज्रदेवीस्तोत्र, वज्रमहाकालस्तोत्र, नरकोद्धारस्तोत्र और सत्त्वाराधनगाथा—ये चार स्तोत्र ही संगृहीत हैं। इनमें से प्रथम (वज्रदेवीस्तोत्र) का अनुवाद सम्भवतः भोट भाषा में नहीं है और तृतीय (नरकोद्धारस्तोत्र) पर रचयिता का उल्लेख नहीं दिया गया है। इनके अतिरिक्त आचार्य द्वारा विरचित 'प्रज्ञापारमितास्तोत्र' भी संस्कृत में बौद्धस्तोत्रसंग्रह में उपलब्ध है तथा अष्टसाहस्रिकाप्रज्ञापारमिता टीका-आलोक के प्रारम्भ में भी आचार्य नागार्जुन की कृति के रूप में संस्कृत में उपलब्ध है। किन्तु बौद्धस्तोत्रसंग्रह में उक्त (प्रज्ञापारमिता-)स्तोत्र को श्रीलक्षाभगवती की कृति बताया गया है, जो विचारणीय है।

### 'चतुःस्तव' नामकरण की समीक्षा

सामान्यतः आचार्य नागार्जुन के नाम पर कुल २४ स्तुतियाँ उपलब्ध होती हैं। इनमें से लोकातीतस्तव, अचिन्त्यस्तव, निरौपम्यस्तव एवं परमार्थस्तव—ये चार स्तव 'चतुःस्तव' के नाम से लोक में विख्यात हैं। यह नाम आचार्य ने स्वयं रखा है या उस काल के अन्य आचार्यों ने रखा है—ऐसा निश्चय नहीं हो पा रहा है। यह नामकरण बाद में किया गया होगा—ऐसा प्रतीत होता है, क्योंकि आचार्य

चन्द्रकीर्ति आदि प्रारम्भिक आचार्यों के ग्रन्थों में इन चार स्तोत्रों के अनेक उद्धरण उपलब्ध होते हैं, किन्तु किसी ने भी 'चतुःस्तव' इस नाम का उल्लेख नहीं किया है। अतः इन चार स्तोत्रों के सम्मिलित नाम 'चतुःस्तव' का सर्वप्रथम उल्लेख किस विद्वान् ने किस प्रयोजन से और क्यों किया है? इन प्रश्नों के समाधान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि वर्तमान में उपलब्ध होना सम्भव नहीं है। सूक्ष्मतया निरीक्षण करने पर अधिकतर ग्रन्थों में इन चार स्तोत्रों से उद्धरण देते समय या तो पृथक् स्तोत्र का उल्लेख किया गया है या 'तथा चोक्तम्', 'उक्तं च' इत्यादि का उल्लेख किया गया है, न कि इनके सामूहिक नाम 'चतुःस्तव' का उल्लेख किया गया है। फिर भी एक, दो ग्रन्थ ऐसे अवश्य हैं, जिनमें उद्धरण देते समय 'चतुःस्तव' नाम का उल्लेख उपलब्ध होता है, किन्तु वह भी सब जगह नहीं है। उदाहरणार्थ आचार्य शान्तिदेव के बोधिचर्यावतार की प्रज्ञाकरमति रचित पञ्जिका तथा वैरोचनरक्षित द्वारा विरचित बोधिचर्यावतारपञ्जिका में 'निरौपम्यस्तव' से उद्धरण देते समय स्पष्ट शब्दों में 'चतुःस्तव' का उल्लेख किया गया है।

उक्त दोनों विद्वानों के ग्रन्थों में प्रदत्त उद्धरणों का सूक्ष्म निरीक्षण करने पर एक विशेष स्थिति दृष्टिगोचर होती है। वह यह कि उक्त दोनों विद्वानों ने अपने ग्रन्थ में उद्धरण देते समय निरौपम्यस्तव के ७वें और ९वें श्लोकों का उद्धरण दिया है और वहाँ पर 'चतुःस्तव' इस नाम का उल्लेख भी किया है। किन्तु अन्य श्लोकों का उद्धरण देते समय 'चतुःस्तव' नाम का उल्लेख दृष्टिगोचर नहीं होता। जबकि प्रज्ञाकरमति ने अपनी बोधिचर्यावतारपञ्जिका में उन स्तोत्रों के लगभग १८ से अधिक श्लोकों के उद्धरण दिये हैं। उन (उद्धरणों) में चारों स्तोत्रों के सामूहिक नाम 'चतुःस्तव' का उल्लेख नहीं किया है और न प्रत्येक स्तोत्र के पृथक्-पृथक् नाम का भी उल्लेख किया है, अपितु 'उक्तं च', 'तदुक्तम्', 'यदाह' इतने मात्र का उल्लेख किया है।

इस तरह दोनों विद्वानों ने एक 'निरौपम्यस्तव' के ही दो श्लोकों का उद्धरण देते समय 'चतुःस्तव' का उल्लेख किया है। शेष उद्धरणों में अनुल्लेख का कारण परस्पर एक-दूसरे का अनुकरण या परस्पर एक-दूसरे पर प्रभाव प्रतीत होता है। इस स्थिति में उन दोनों टीकाकारों में कौन पूर्ववर्ती है, किसने किसको प्रभावित किया, किसने किसको आधार बनाया, अन्य उद्धरणों में न सामूहिक नाम, न प्रति स्तोत्र का पृथक् नाम—इनके पीछे क्या कारण रहा—



इत्यादि विषयों पर विचार करना आवश्यक है। हो सकता है कि ये विषय या ये प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण नहीं हैं, इसलिए इन पर विद्वानों का ध्यान नहीं गया हो।

आजकल संस्कृत में उपलब्ध प्रज्ञाकरमतिकृत बोधिचर्यावतारपञ्जिका में लोकातीतस्तव के १२, १९ एवं २०वें श्लोकों के उद्धरण-स्थलों में 'चतुःस्तव' यह सामूहिक नाम दृष्टिगोचर होता है, किन्तु भोटानुवाद में वह अंश उपलब्ध नहीं है। अतः उस तरह का यह उल्लेख क्या बाद में जोड़ दिया गया है, इस पर भी विचार करना स्वाभाविक होता है, क्योंकि उपलब्ध संस्कृत ग्रन्थ में जो अनेक उद्धरणों के सम्मुख 'चतुःस्तव' नाम का उल्लेख दिखाई देता है, वह बाद में सम्पादक महोदय ने खोजकर जोड़ दिया है—ऐसा प्रतीत होता है। इसी तरह की स्थिति 'लोकातीतस्तव' के उक्त तीन श्लोकों के उद्धरण की भी है—ऐसी सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता।

आजकल मूल संस्कृत में सुरक्षित बुद्धवचनों एवं उनके टीकाग्रन्थों की संख्या जैसे बहुत कम है, ठीक उसी तरह आचार्य नागार्जुन के नाम पर उपलब्ध ग्रन्थों की संख्या भी अल्प ही है। उक्त चारों स्तोत्रों के सामूहिक नाम 'चतुःस्तव' के बारे में यद्यपि अस्पष्टता और अनिश्चय की स्थिति भले ही दिखलाई देती हो तथा उसके उद्धरण देने की प्रक्रिया में भी भले ही विभिन्नता दिखलाई देती हो, फिर भी आचार्य नागार्जुन विरचित 'चतुःस्तव' अपने मूलरूप संस्कृत में अनेक हस्तलिखित पाण्डुलिपियों में सुरक्षित उपलब्ध होता है, यह बड़े सौभाग्य की बात है। इतना ही नहीं, इन स्तोत्रों पर विद्वानों द्वारा लिखित 'चतुःस्तव-समासार्थ' और 'दुरूह शब्दों की टीका' भी संस्कृत में यथाकथञ्चित् प्राप्त है। फलतः उक्त नामकरण की अस्पष्टता एवं अनिश्चितता तथा उद्धरण-प्रक्रिया की विभिन्नता आदि कम महत्त्वपूर्ण बातें यद्यपि अवश्य दिखलाई देती हैं, किन्तु अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तो यह है कि चार स्तोत्रों के संग्रह 'चतुःस्तव' का मूल संस्कृत में उपलब्ध होना। यह एक बड़ी उपलब्धि है।

इस ग्रन्थ के विषय में एक महत्त्वपूर्ण विचारणीय तथ्य यह भी है कि किस दृष्टि से या किस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर इन चार स्तोत्रों को एक साथ 'चतुःस्तव' के नाम से ग्रथित किया गया है?

यह कहा जा सकता है कि अभिधेय की दृष्टि से इन चारों स्तोत्रों को एक-साथ ग्रन्थ के रूप में प्रस्तुत किया गया है, क्योंकि सर्वधर्मनिःस्वभावता और



प्रतीत्यसमुत्पाद की जो भगवान् बुद्ध की अद्भुत देशना है, उस (देशना) के अभिधेय को इन चारों स्तोत्रों में प्रतिपादित किया गया है, इसलिए इन चारों को इस ग्रन्थ में एक साथ रखा गया है। किन्तु यह कथन पूर्णरूप से समीचीन नहीं है, क्योंकि 'स्तुत्यतीतस्तव' का भी यही अभिधेय है, अतः उसे भी इसमें सम्मिलित करना चाहिए था, किन्तु ऐसा नहीं किया गया है। इसी तथ्य को ध्यान में रखर श्री प्रभुभाई पटेल ने अपने तिब्बती से संस्कृत में पुनरुद्धरित 'चतुःस्तव' में 'परमार्थस्तव' के स्थान पर 'स्तुत्यतीतस्तव' को रखा है। उनकी यह योजना समीचीन प्रतीत होती है, क्योंकि अभिधेय की दृष्टि से ये चारों स्तोत्र अधिक अनुकूल प्रतीत होते हैं, जबकि 'परमार्थस्तव' का अभिधेय शेष तीन स्तुतियों के अभिधेय से कुछ भिन्न प्रतीत होता है। क्योंकि उसमें शून्यता के अलावा प्रतीत्यसमुत्पाद के विषय में स्पष्ट प्रतिपादन नहीं है। अतः परमार्थस्तव के स्थान पर 'स्तुत्यतीतस्तव' को रखा होता तो 'चतुःस्तव' नामक यह संग्रह अभिधेय की दृष्टि से अधिक सार्थक होता, क्योंकि इन चारों स्तोत्रों का अभिधेय समान होने के कारण उन्हें एक वर्ग में रखा जाना अत्यन्त समीचीन हो सकता है। इन चारों के अतिरिक्त तुल्य अभिधेयवाला कोई अन्य स्तोत्रसंग्रह दृष्टिगोचर नहीं होता है। बहरहाल इन चार स्तोत्रों के संग्रह के 'चतुःस्तव' इस नामकरण का कोई ठोस कारण उपलब्ध नहीं होता। अतः यह विद्वानों द्वारा एक विचारणीय विषय है।

### चार स्तोत्रों के बारे में मत-मतान्तर

'चतुःस्तव' नाम से प्रसिद्ध संग्रह के अन्तर्गत आनेवाले ग्रन्थों का निश्चय करते समय उद्धरणों के सम्मुख 'चतुःस्तव' इस नाम के उल्लेख की दृष्टि से देखा जाए तो पूर्वोक्त की भाँति 'निरौपम्यस्तव' के अतिरिक्त अन्य स्तोत्रों के सम्मुख इस नाम का उल्लेख दुर्लभ (अर्थात् मिलना कठिन) हो रहा है। फिर भी संस्कृत में इन चारों को एक साथ संकलित कर यह नाम दिया हुआ उपलब्ध होता है। इस प्रकार हस्तलिखित पाण्डुलिपि और प्रकाशित कुल मिलाकर चार से अधिक प्रतिलिपियाँ प्राप्त हुई हैं। किन्तु भोट भाषा में अनूदित 'तनग्युर-संग्रह' में 'चतुः-स्तव' के नाम से कोई पृथक् स्वतन्त्र स्तोत्रगण या स्तोत्रसंग्रह उपलब्ध नहीं है। फिर भी वहाँ उसके अन्तर्गत आनेवाले स्तोत्रगण में ये चार स्तोत्र ७१ स्तोत्रों के बीच-बीच में आगे-पीछे उपलब्ध होते हैं। संस्कृत में एक ग्रन्थ (चतुःस्तव) ऐसा भी उपलब्ध होता है, जो संस्कृत मूल न मिलने के कारण भोट भाषा से संस्कृत में पुनरुद्धार करके प्रकाशित है। इसके पुनरुद्धारकर्ता एवं सम्पादक श्री प्रभुभाई पटेल

हैं। उन्होंने चार स्तोत्रों में परमार्थस्तव की जगह 'स्तुत्यतीतस्तव' को सम्मिलित किया है। पश्चिमी विद्वान् Prof. Louis de la Vallee Poussin ने भोट पाठ को फ्रेंच अनुवाद के साथ रोमने लिपि में प्रकाशित किया है। उसमें 'अचिन्त्यस्तव' के स्थान पर 'चित्तवज्रस्तव' को रखकर चार स्तोत्रों का संग्रह किया है। भारत के विद्वान् अमृतकार द्वारा विरचित 'चतुःस्तवसमासार्थ' नाम की एक रचना जीर्ण-शीर्ण हालत में संस्कृत में उपलब्ध हुई है। उसमें निरौपम्यस्तव, अचिन्त्यस्तव और परमार्थस्तव इन तीन का ही समासार्थ उपलब्ध है, उसमें एक प्रथम स्तोत्र का समासार्थ अनुपलब्ध है। वह एक स्तव कौन होगा? क्या अन्य विद्वानों की भाँति वह 'लोकातीतस्तव' का ग्रहण करते होंगे या नहीं? यह विचारणीय है। अन्य अनेक प्रतिलिपियाँ उपलब्ध हैं, उन सभी में चार की संख्या में कोई भेद नहीं है।

### चतुःस्तव की संस्कृत प्रतिलिपियों की समीक्षा

इस ग्रन्थ की संस्कृत में छः प्रकार की प्रतिलिपियाँ प्राप्त हुई हैं, यथा—

(क) नेपाल के प्रसिद्ध विद्वान् पं० दिव्यवज्र वज्राचार्य ने 'अखिल नेपाल महायान बौद्ध समाज' के माध्यम से इसे प्रकाशित किया है। उसमें संस्कृत मूलपाठ के साथ नेपाली भाषा में अनुवाद तथा प्रत्येक स्तोत्र का सारांश भी संलग्न है।

(ख) इस संस्थान के 'दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध अनुभाग' के उपनिदेशक पं० जनार्दन शास्त्री पाण्डेय द्वारा संकलित एवं प्रकाशित 'बौद्ध स्तोत्र संग्रह' नामक ग्रन्थ में कुल १०८ विभिन्न स्तोत्र सम्मिलित हैं। उन बौद्ध स्तोत्रों के संग्रह में ये चारों स्तोत्र भी सम्मिलित हैं। परन्तु इसमें न तो चतुःस्तव नाम का उल्लेख है और न ही ये चारों स्तोत्र एक-साथ दिये गये हैं। इनके अतिरिक्त इस ग्रन्थ में नागार्जुन के नाम पर अन्य अनेक स्तोत्र भी संगृहीत हैं, यथा—वज्रदेवी स्तोत्र, वज्रमहाकाल स्तोत्र, सत्त्वारोधनगाथा, नरकोद्धारस्तोत्र तथा प्रज्ञापारमितास्तोत्र। प्रथम दो स्तोत्र तन्त्रग्रन्थ-संग्रह के स्तोत्रगण में उपलब्ध नहीं हैं। द्वितीय (वज्रमहाकालस्तोत्र) तन्त्रवर्ग में अवश्य उपलब्ध है। प्रथम (वज्रदेवीस्तोत्र) सम्भवतः भोटानुवाद में उपलब्ध नहीं है। चतुर्थ नरकोद्धारस्तोत्र के रचयिता का नाम उस ग्रन्थ में नहीं दिया गया है। पञ्चम प्रज्ञापारमितास्तोत्र के कर्ता के रूप में आचार्य नागार्जुन का नाम न देकर 'लक्षा भगवती' का नाम दिया गया है।



( ग ) पश्चिमी विद्वान् (CHR. Lendtner) ने आचार्य नागार्जुन के शून्यतासप्तति, बोधिचित्तविवरण आदि अनेक ग्रन्थों पर समीक्षात्मक शोध, अनुवाद एवं सम्पादन आदि कार्य करके Nagarjuniana इस नाम का एक ग्रन्थ १९८७ में प्रकाशित किया है। उसमें चतुःस्तव पर सूक्ष्मता से समीक्षात्मक विश्लेषण भी किया गया है। लोकातीतस्तव और अचिन्त्यस्तव इन दो स्तोत्रों के संस्कृत मूलपाठ और भोटपाठ का सम्पादन किया है तथा अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया गया है और मूलपाठ तथा भोटपाठ को रोमनलिपि में प्रकाशित किया है। चतुःस्तव के चार स्तोत्रों में से यहाँ केवल दो स्तोत्रों को ही ग्रहण करने के पीछे निम्नलिखित कारण प्रदर्शित किया गया है, यथा—ये दो स्तोत्र आचार्य नागार्जुन प्रणीत मूलमाध्यमिककारिका आदि छह ग्रन्थों (षड् युक्तिगण) के अभिधेय से अत्यन्त अनुकूल हैं। उनकी इसी विशेषता को देखकर इन दो पर ही कार्य करके प्रकाशन किया गया है। उस ग्रन्थ के अन्त में चतुःस्तव का संस्कृत मूल तथा आचार्य शिरोमणि द्वारा विरचित शाब्दिक टीका की प्राचीन पाण्डुलिपि का फोटो-प्रिन्ट भी दिया गया है।

( घ ) इटली के प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान् Prof. G. Tucci को तिब्बत की यात्रा करते समय डोर नामक विहार में चतुःस्तव के अन्तर्गत समाविष्ट निरौपम्यस्तव और परमार्थस्तव की मूल संस्कृत में पाण्डुलिपियाँ प्राप्त हुईं। उन्होंने इन दोनों को तिब्बती पाठ के साथ तुलनात्मक समीक्षा करके तथा उनका अंग्रेजी में अनुवाद करके जर्नल ऑफ द रायल एशियाटिक सोसाइटी (Journal of the Royal Asiatic Society 'JRAS') की पत्रिका में १९३२ ई० में प्रकाशित कराया। उसी विहार में उन्होंने महायानविंशक ग्रन्थ भी प्राप्त किया, जिसके साथ आचार्य अमृतकार द्वारा विरचित चतुःस्तवसमासार्थ नामक ग्रन्थ भी संलग्न रूप में प्राप्त हुआ। इसमें निरौपम्यस्तव, अचिन्त्यस्तव एवं परमार्थस्तव इन तीन का समासार्थ उपलब्ध था। परन्तु प्रथम लोकातीतस्तव का समासार्थ उसमें अनुपलब्ध था। इतना ही नहीं, द्वितीय निरौपम्यस्तव के समासार्थ का प्रारम्भिक अंश भी खण्डित था। यह ग्रन्थ अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण अवस्था में था, इसलिए इसका सम्पादन भी अत्यन्त कठिन था। जीर्ण-शीर्णता और अपूर्णता मात्र कारण नहीं थे, अपितु भोट भाषा में उसका अनुवाद भी अनुपलब्ध था। इस ग्रन्थ को प्रो० टुच्ची ने समीक्षात्मक विवेचन और भूमिका के साथ रोमन लिपि में (Minor Buddhist Texts) में छापा है। इस वाल्यूम में आचार्य कमलशील का प्रथम



भावनाक्रम, आचार्य असंग की वज्रच्छेदिका निबन्धनकारिका आदि अनेक ग्रन्थों पर प्रो० टुच्ची ने सम्पादन, समीक्षा, अंग्रेजी-अनुवाद आदि कार्य सम्पन्न किये हैं।

(ङ) इस संस्थान के दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध अनुभाग में कार्यरत शोध-अधिकारी डॉ० ठाकुरसेन नेगी के व्यक्तिगत संग्रह में इस ग्रन्थ की संस्कृत पाण्डुलिपि उपलब्ध है। उसमें चतुःस्तव की एक टीका भी उपलब्ध है, जो आचार्य शिरोमणि द्वारा विरचित 'अकारिटीका' है, जिसमें चतुःस्तव के स्तोत्रों की कारिकाओं की अन्वय के साथ व्याख्या की गई है। यह टीकाग्रन्थ नेवारी लिपि में प्राप्त है। यह ग्रन्थ Nagarjuniana नामक ग्रन्थ में भी फोटो-प्रिन्ट के रूप में दिया गया है। दोनों एक समान हैं। यह पाण्डुलिपि डॉ० नेगी को टोक्यो यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी (Tokyo University Library) से प्राप्त हुई है। यह पाण्डुलिपि काफी पुरानी हालत में है और अनेक स्थानों पर त्रुटित है और अस्पष्ट है। डॉ० नेगी को नेपाल से पूर्ण एवं स्पष्ट पाण्डुलिपि मिलने की सम्भावना है।

हमने प्रस्तुत ग्रन्थ के मूल संस्कृत अंश के पाठ-संशोधन में उसका उपयोग किया है तथा पाठान्तर टिप्पणी में दे दिये हैं। किन्तु अभी तक इस ग्रन्थ का देवनागरी में लिप्यन्तरण नहीं हुआ है। इस टीका ग्रन्थ की दूसरी पूर्ण और स्पष्ट प्रतिलिपि प्राप्त हुए बिना इस पर सम्पादन आदि कार्य करना कठिन प्रतीत हो रहा है, क्योंकि इस ग्रन्थ का भोटानुवाद भी तनग्युर-संग्रह में उपलब्ध नहीं है। डॉ० नेगी के व्यक्तिगत संग्रह से चतुःस्तव की एक और पाण्डुलिपि प्राप्त हुई है, जिसमें केवल मूल संस्कृत ही है, किन्तु वह भी अपूर्ण है। इसका भी हमने प्रस्तुत ग्रन्थ के पाठ-संशोधन में उपयोग किया है। यह प्रतिलिपि डॉ० नेगी को इन्स्टीट्यूट फॉर एडवांस स्टडीज ऑफ वर्ल्ड रिलिजन्स, अमेरिका (Institute for Advance Studies of World Religions America) से प्राप्त हुई है।

(च) इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टरली (Indian Historical Quarterly 'IHQ') के भाग ८ (Vol. VIII) में श्री प्रभुभाई पटेल नामक विद्वान् ने चतुःस्तव के भोट-पाठ से संस्कृत में पुनरुद्धार कर उसका सम्पादन किया है। उन्होंने उस पर कार्य करते समय इन स्तोत्रों के संस्कृत में भी उपलब्ध होने की जानकारी न रहने के कारण भोट-पाठ को आधार बनाकर उसका पुनरुद्धार किया। साथ ही, भोट-पाठ का भी समीक्षात्मक सम्पादन कर रोमन

लिपि में उसका प्रकाशन किया है। उनके चतुःस्तव की एक यह विशेषता अवश्य है कि उन्होंने चतुःस्तव के चार स्तोत्रों में परमार्थस्तव के स्थान पर स्तुत्यतीतस्तव को संगृहीत किया है, जो अन्य तीन स्तोत्रों के अभिधेय की दृष्टि से परमार्थस्तव की अपेक्षा अधिक अनुकूल है। उनका यह कार्य चतुःस्तव के चार स्तोत्रों के पृथक् वर्गीकरण का एक ठोस आधार प्रस्तुत करता है, क्योंकि स्तुत्यतीतस्तव अभिधेय की दृष्टि से शेष तीन स्तोत्रों के समतुल्य है। अतः उनका प्रयास विद्वानों की दृष्टि में सफलता प्राप्त कर सकता है।

पूर्वोक्त विद्वानों द्वारा रचित पुस्तकों एवं निबन्ध संग्रहों की भूमिका आदि में जो उल्लेख मिलते हैं, उसके अनुसार पाश्चात्य फ्रेंच (France) विद्वान् प्रो० लोविस्-दि-ला-वेली-पूसें (Prof. Louis de la Vallee Poussin) ने भी चतुःस्तव पर कार्य किया है। किन्तु उन्हें भी उसका संस्कृत मूल उपलब्ध नहीं हुआ। फलतः उसके भोट-पाठ को ही आधार बनाकर फ्रेंच भाषीय अनुवाद को भोट-पाठ के साथ सन् १९१४ में प्रकाशित किया। फिर भी यूरोप में द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारम्भ हो जाने के कारण उसका उनके कार्य पर विपरीत असर पड़ा, इसका उन्होंने स्वयं उल्लेख किया है। उनके ग्रन्थ में चार स्तोत्रों में अचिन्त्यस्तव का परिगणन नहीं किया गया, अपितु उसके स्थान पर चित्तवज्रस्तव को स्थान दिया गया है। इसके पीछे क्या कारण हो सकता है? इसका अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है। जैसे एक तो मूल संस्कृत पाठ का अनुपलब्ध रहना हो सकता है। दूसरा कारण तनग्युर-संग्रह में वर्णित स्तोत्रों के क्रम को आधार बनाना हो सकता है। तनग्युर-संग्रह में निरौपम्यस्तव और लोकातीतस्तव के बाद चित्तवज्रस्तव संगृहीत है। ठीक उसके बाद परमार्थस्तव रखा हुआ है। उनके चतुःस्तव में भी ठीक यही क्रम दिया गया है। तनग्युर-संग्रह में अचिन्त्यस्तव तो उपर्युक्त चार स्तोत्रों के अनन्तर विवरण सहित कायत्रय स्तोत्र मूल आदि अन्य पाँच स्तोत्रों के अनन्तर दिया हुआ है। चतुःस्तव के चार स्तोत्रों की परिगणना में भ्रम का कारण उसके संस्कृत मूल का न मिलना है, न कि उनके प्रतिपाद्य विषय (अभिधेय) आदि की भिन्नता है।

(छ) इस संस्थान के मूलशास्त्र विभाग के प्रो० थुपतन छोगडुप ने जब वे सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में कार्यरत थे, तब उन्होंने वहाँ के श्रमणविद्या संकाय द्वारा प्रकाशित 'संकायपत्रिका' में आचार्य नागार्जुन द्वारा प्रणीत चतुःस्तव के निरौपम्यस्तव एवं परमार्थस्तव इन दो स्तोत्रों को उनके



सारांश के साथ सम्पादित कर प्रकाशित किया है। उनको इन स्तोत्रों की प्रतिलिपि अंग्रेजी अनुवाद के साथ मूल संस्कृत में इटली से प्राप्त हुई थी। निश्चित रूप से यह प्रतिलिपि इटली के प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान् प्रो० टुच्ची (Prof. Giuseppe Tucci) द्वारा प्रकाशित प्रतिलिपि ही होगी। प्रो० टुच्ची ने तिब्बती भाषा में अनूदित इन स्तोत्रों को तिब्बत से लाकर अंग्रेजी अनुवाद के साथ सम्पादन करके छापा था। इसकी चर्चा मैंने ऊपर की है। प्रो० धुपतन छोगडुप ने इन दो स्तोत्रों को संस्कृत मूल पाठ का तिब्बती अनुवाद से मिलान कर तुलनात्मक संशोधन और हिन्दी में उनका सारांश लिखकर संक्षिप्त भूमिका के साथ सन् २००० में श्रमण-विद्या-संकाय पत्रिका में प्रकाशित किया है।

### अनुवाद, भोट-पाठ सम्पादन आदि का विवरण

आचार्य नागार्जुन द्वारा विरचित स्तुतिगण में से जिन स्तोत्रों का सम्मिलित नाम 'चतुःस्तव' रखा गया है, वह नाम तिब्बती विद्वानों में अत्यन्त अप्रसिद्ध और अपरिचित है। यह नाम बाद में रखा गया है—ऐसा प्रतीत होता है। इस ग्रन्थ के भोट-पाठ का सम्पादन करते समय मैंने स्टे-गे संस्करण को आधार बनाया है। स्नरथङ्-संस्करण, पेकिङ्ग-संस्करण और सेर-डिस-संस्करण से उसकी तुलना करते समय जिन पाठभेदों से अर्थ में अन्तर पड़ता है, उन पाठभेदों को पाद-टिप्पणी में दे दिया गया है। इस ग्रन्थ के मूल संस्कृत पाठ और भोट-पाठ के बीच तुलनात्मक समीक्षण करने पर कई स्थलों पर शब्द और अर्थ में भिन्नता दिखती है। इसी तरह अपूर्णता, अशुद्धता आदि अनेक अन्तर भी दिखलाई देते हैं। कुछ श्लोक संस्कृत-पाठ में तो उपलब्ध हैं, किन्तु भोट-पाठ में अनुपलब्ध हैं। ऐसी स्थिति में उन श्लोकों का नये सिरे से भोटानुवाद कर पूर्णता की गई है। इन सबका स्पष्टीकरण सम्बद्ध श्लोक की टिप्पणी में विवरण के साथ किया गया है।

इस तुलनात्मक समीक्षा के बाद संस्कृत मूल और भोट-पाठ को आधार बनाकर हिन्दी भाषा में अनुवाद किया गया है। अनुवाद की इस प्रक्रिया पर विशेष रूप से स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। प्रारम्भ में संस्कृत और भोट दोनों पाठों को आधार बनाकर अनुवाद किया गया था, किन्तु अनुवाद का संशोधन करते समय प्रो० रामशंकर त्रिपाठी जी ने प्रमुखतया संस्कृत को आधार बनाने पर विशेष बल दिया है। इसलिए हिन्दी-अनुवाद के स्वरूप और ग्रन्थार्थ-प्रतिपादन के स्वरूप की दृष्टि से देखा जाए तो अभिधेय के प्रतिपादन का क्रम, शब्द और



वाक्य विन्यास की शैली भोटपाठ की अपेक्षा संस्कृत पाठ के अधिक अनुकूल है, फिर भी आवश्यकतानुसार अनेक स्थलों पर भोट-पाठ का भी आश्रय लिया गया है।

सामान्य तौर पर तनग्युर-संग्रह के अन्तर्गत लघु-आकार के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ विद्यमान हैं। इन ग्रन्थों में से अनेक ग्रन्थ 'जो-वोई-छोस्-छुङ्-ग्यच्चा' नामक संग्रह में विशिष्ट सम्पादन, अनुवाद एवं पाठान्तर के साथ उपलब्ध होते हैं। लेकिन उसमें आचार्य नागार्जुन प्रणीत स्तोत्रगण में से केवल 'निरुत्तरस्तव' ही प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त चतुःस्तव के अन्तर्गत पठित चारों स्तोत्र अविकल रूप से उसमें नहीं हैं। अन्यथा (यदि होते तो) भोटपाठ के सम्पादन में विशिष्टता आ जाती।

चतुःस्तव के अन्तर्गत संगृहीत चारों स्तोत्रों पर भारतीय आचार्यों द्वारा निर्मित टीका-ग्रन्थों के भोटानुवाद प्राप्त नहीं हुए हैं। तिब्बती विद्वान् द्वारा रचित भोट भाषा में केवल एकमात्र टीका प्राप्त हो सकी है। वह (टीका) तिब्बत के विद्वान् 'रोङ्-स्तोन-शाक्य-ग्यल्-छन्' द्वारा लिखित 'परमार्थस्तव' की टीका है। संस्कृत भाषा में तो जैसा पहले कहा गया है आचार्य अमृतकर-रचित 'चतुः-स्तवसमासार्थ' एवं आचार्य शिरोमणि-प्रणीत कठिन शब्दों की टीका 'अकारिका वृत्ति'—ये दो ग्रन्थ प्राप्त हुए हैं। किन्तु ये दोनों ग्रन्थ अपूर्ण हैं और उनका भोटानुवाद भी उपलब्ध नहीं है। इन दोनों में से प्रथम ग्रन्थ की स्थिति तो अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण है। फलतः जब तक कोई स्पष्ट एवं पूर्ण पाण्डुलिपि प्राप्त नहीं होती, तब तक उसका सम्पादन, पुनरुद्धार आदि कार्य करना सम्भव प्रतीत नहीं होता। हमने इस ग्रन्थ के सम्पादन में पाठभेद आदि के लिए उसका उपयोग अवश्य किया है, किन्तु उसे प्रस्तुत ग्रन्थ के परिशिष्ट के रूप में देना सम्भव नहीं हो पाया है। भविष्य में इस ग्रन्थ के द्वितीय संस्करण के अवसर पर इन सब पर यथाशक्ति शोधात्मक कार्य करने की प्रबल इच्छा है।

॥ शुभमस्तु सर्वजगताम् ॥



## ग्रन्थ-सारांश

( पृष्ठभूमि )

गम्भीर और उदार अभिधेयों से समृद्ध इन स्तोत्रों के सारांश का प्रतिपादन करते समय विद्वानों में व्यापक रूप से प्रसिद्ध इस कथन का स्मरण आ जाता है कि “भारतीय आचार्यों के मूलशास्त्र महार्थ होते हैं।” अर्थात् उनमें शत-शत-मत प्रतिपादन करने का सामर्थ्य होता है अथवा उनका शत-शत (सैकड़ों) प्रकार से व्याख्यान किया जा सकता है। इस स्थिति में उन स्तोत्रों का सारांश लिखते समय जहाँ तक अपनी बुद्धि का सामर्थ्य है, उसी के अनुसार यथासम्भव स्तोत्रों के गम्भीर अभिधेयों पर विचार प्रस्तुत किया जा रहा है, क्योंकि आचार्य (नागार्जुन) के वास्तविक अभिप्राय को यथावत् समझ पाना अत्यन्त दुरूह है, फिर भी अपने बुद्धिबल के अनुरूप ग्रन्थ के सारांश का निरूपण किया जा रहा है। जब ग्रन्थगत शब्दों या वाक्यों के अभिप्राय को प्रकाशित करने का प्रयास किया जाता है, तब प्रत्येक शब्द या वाक्य से अनेक अर्थ निकलने की गुंजाइश प्रतीत होने लगती है।

सामान्यतः तथागत के प्रवचनों के अभिप्राय को प्रकट करते समय अनुत्तर गुह्यमन्त्र की स्थिति में वह षड् (छह) अन्त और चार नयों से मुद्रित है कि नहीं? यह देखना होता है तथा सूत्रपक्ष (पारमितानय) की स्थिति में नेयार्थ एवं नीतार्थ, चार अभिप्राय और चार अभिसन्धि तथा वर (उत्तम) एवं अवर (निम्न) सिद्धान्तमान्यता आदि को दृष्टि में रखकर अभिप्रायनिर्माण अर्थात् अर्थव्याख्यान करने की अनेक पद्धतियों का अवलम्बन करना होता है। लेकिन ये स्तोत्र तो बुद्धवचन न होकर शास्त्रवचन हैं, अतः इनके व्याख्यान के अवसर पर भले ही बुद्धवचनों की भाँति नेयार्थ-नीतार्थ आदि का विचार न करना पड़े, फिर भी ये सभी शास्त्र (स्तोत्र) प्रासङ्गिक माध्यमिक मान्यता के अनुसार निर्मित हैं, जो समस्त धर्म प्रतीत्यसमुत्पन्न और शून्य हैं—इस अद्भुत दृष्टि का प्रतिपादन करते हैं। उस श्रेष्ठ सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में आर्य अक्षयमतिनिर्देशसूत्र के अनुसार जो सूत्र परमार्थ तत्त्व का निर्देश करते हैं, उन्हें नीतार्थ तथा जो सूत्र संवृति का प्रतिपादन करते हैं, वे नेयार्थ कहे जाते हैं। उसी की भाँति यहाँ भी परमार्थ तत्त्व का ग्रन्थ के मुख्य अभिधेय के रूप में प्रतिपादन किया गया है, इस दृष्टि से इस ग्रन्थ को नीतार्थ का प्रतिपादन करने वाले ग्रन्थों के पक्ष में रखा जा सकता है। फिर भी अनेक



स्थलों पर सांवृतिक धर्म, जो निषेध्याकार अर्थात् शब्दशः अस्वीकार्य हैं, उन्हें भी कहा गया है, अतः उनका अभिप्राय प्रकट करते समय निषेध्य के साथ 'परमार्थतः' या 'स्वभावतः' आदि शब्द का योग करना आवश्यक हो जाता है। जैसे मूलमाध्यमिककारिका के मङ्गलाचरण में निरोध, उत्पाद आदि आठ विशेषणों से रहित प्रतीत्यसमुत्पाद का निर्देश किया गया है, उसकी वृत्ति करते समय आचार्य चन्द्रकीर्ति विरचित प्रसन्नपदा और आचार्य चोंखापा विरचित महाटीका दोनों में व्यावहारिक धर्मों का निषेध करते समय 'परमार्थतः' या 'स्वभावतः' शब्द जोड़े बिना निषेध करना युक्त नहीं है—ऐसा कहा गया है। ऐसी ही स्थिति यहाँ भी एक समान है। अतः यहाँ भी अनेक जगहों पर शब्दशः अर्थ ग्रहण न करके विशेषण योग के माध्यम से अन्य अर्थ की ओर ले जाने (आनीत) की आवश्यकता होती है।

चतुःस्तव के अभिधेय का सामान्यतः मर्मस्थल तो समस्त धर्मों की शून्यता और प्रतीत्यसमुत्पन्नता से भिन्न (अतीत) नहीं है। अतः उसे ही आधार मानकर आगे चलना है। अर्थात् सारांश संकलन आदि कार्य करना है। किन्तु प्रत्येक श्लोक का सारांश लिखते समय जैसे पहले कहा गया है कि "संस्कृत मूलशास्त्र महार्थता से युक्त होता है। अर्थात् उसमें अनेक अर्थों के प्रतिपादन की क्षमता होती है और उसके अनेकविध व्याख्यान किये जा सकते हैं।" इसका अपलाप करना सम्भव नहीं है। किन्तु वर्तमान में स्थिति यह है कि सर्वप्रथम तो संस्कृत मूल पाठ भी अनेक स्थानों पर भ्रष्ट है या अस्पष्ट है तथा पाण्डुलिपियों में अत्यधिक भिन्नता है। इतना ही नहीं, प्राचीनकाल में भोट भाषा में अनुवाद करते समय भी लोचावा और पण्डितों ने अपनी बुद्धि के अनुसार मूल का और उद्धृत वचनों का अनुवाद किया है। अतः उनमें भी अत्यधिक भिन्नता देखने को मिलती है। विशेषतः जिन मूल ग्रन्थों की अनेक टीकाएं हैं, उनकी टीकाकारों द्वारा व्याख्या करते समय मूल की व्याख्या करने में या उनके अर्थ प्रदर्शित करने की प्रक्रिया में अपनी-अपनी स्वतन्त्र बुद्धि का उपयोग किया गया है। इस कारण उनके द्वारा मूल रचयिता आचार्य के अभिप्राय को शत-प्रतिशत ठीक-ठीक प्रकट कर पाना प्रायः असम्भव ही होता है। फलतः सारांश लिखते समय हमारे द्वारा भी इन मुश्किल परिस्थितियों से निर्लिप्त रह पाना सम्भव नहीं है।

प्रस्तुत ग्रन्थ (चतुःस्तव) के चार स्तोत्रों में एक को छोड़कर बाकी के तीन स्तोत्रों की भोट-भाषा में अनूदित भारतीय टीका या भोटदेशीय पण्डित की



कोई टीका प्राप्त नहीं हो सकी। अतः ग्रन्थ का अभिधेय जिस विद्वान् या जिस यान और जिस सिद्धान्त से सम्बद्ध है तथा ग्रन्थ के अभिधेय का जो सामान्य मर्मस्थल है, इन सबका उल्लंघन न करते हुए अपने बुद्धि, विवेक की शक्ति के अनुसार यथासम्भव सारांश का निष्पादन किया गया है। इसलिए पूर्व महारथियों द्वारा जो बुद्धवचनों के अभिप्राय प्रकट किये गये हैं या टीका आदि लिखे गये हैं, उनके समकक्ष हमारे सारांश का होना सम्भव ही नहीं है। उन चार ग्रन्थों के विषय में किसी प्रामाणिक विद्वान् से आगम-परम्परा लेना तथा उनके (विद्वानों के) पास बैठकर ठीक-ठीक अध्ययन करना भी सम्भव नहीं हो पाया है। फलतः सारांश लेखन में अपने ज्ञान के प्रयोग से ही सन्तुष्ट होना पड़ा है। बाद में दूसरे संस्करण के अवसर पर यदि सम्भव हुआ तो आवश्यकता के अनुरूप यथासम्भव संशोधन और परिवर्धन किया जाएगा।

## १. लोकातीतस्तव का सारांश

हे सम्यक्संबुद्ध, आपने सभी प्रपञ्चों से रहित ज्ञानधर्मकाय सम्यक् रूप से प्राप्त किया है तथा आप समस्त लौकिक व्यवहारों एवं लौकिक ज्ञान के व्यापारों से पूर्णतया अतिक्रान्त हैं। सभी लोकोत्तर विशेषणों से सुसम्पन्न भगवान् तथागत की वन्दना करके लोकातीत आपके प्रति अवेत्यप्रसाद से युक्त होकर आचार्य (नागार्जुन) ने इस प्रकार स्तुति की है—

महाकृपालु भगवान् तथागत आपने असंख्येय और अपरिमेय समस्त संसार के प्रति आद्यन्तरहित एकान्त महाकरुणा से दीर्घकालपर्यन्त चिन्तन किया है। अतः यद्यपि सामान्य लोगों की दृष्टि में आप खेद से युक्त प्रतीत हो सकते हैं, किन्तु आपने अनाह्लादकारी वेदनाओं के उत्पाद का अवसर सर्वथा सर्वदा के लिए ध्वस्त कर दिया है।

अनुत्तर शास्ता आपके मतानुसार स्वभावतः सिद्ध धर्म (पदार्थ) बिलकुल नहीं हैं, अतः सत्त्वों की स्थिति (परमार्थतः) स्कन्धों पर आश्रित भी नहीं है, फिर भी व्यवहारतः प्रतीत्यसमुत्पन्न स्कन्ध सापेक्ष सत्त्वों के हितार्थ निरन्तर चेष्टावान् आप अनाभोग और अविच्छिन्न कर्म करते हुए यावत्संसार विद्यमान रहेंगे। निर्वाणसंज्ञी श्रावक की भाँति निरोधसमापत्ति में आप कभी भी स्थित नहीं रहते।

उक्त अपेक्षित स्कन्ध भी माया, मरीचि, गन्धर्वनगर एवं स्वप्न की भाँति हैं—ऐसा आपने प्रत्ययतामात्र नय के माध्यम से प्रेक्षवान् विनेयजनों को बोधित किया है।

जो धर्म हेतु-प्रत्ययों की अपेक्षा से उत्पन्न होते हैं और हेतु-प्रत्ययों के बिना जिनका उत्पाद सम्भव नहीं है, उनकी विद्यमानता प्रतिबिम्ब, प्रतिश्रुत्क आदि की भाँति कल्पना द्वारा प्रज्ञप्तिमात्र क्यों नहीं है? अर्थात् उनकी प्रज्ञप्तिमात्र सत्ता ही है।

रूप आदि बाह्य धर्मों के आरम्भिक आधार परमाणु हैं। यदि वे (परमाणु) चक्षु द्वारा ग्राह्य नहीं हैं तो उनसे निर्मित (आरब्ध) रूप आदि कैसे चक्षुर्ग्राह्य हो सकते हैं। अर्थात् नहीं हो सकते। यहाँ रूप आदि के अग्राह्य होने का जो प्रतिपादन किया गया है, वह रूप आदि की स्वभावसत्ता को देखने वालों के अभिनिवेश की निवृत्ति के लिए किया गया है। उसी प्रकार वेदनीय विषय शब्द आदि स्वभावतः सत् नहीं हैं, ऐसी स्थिति में उन (शब्द आदि) के ग्राहक और उनको इष्ट या अनिष्ट रूप में जानने वाले विषयी विज्ञान की भी स्वभावतः सत्ता नहीं है। यदि संज्ञा (नाम) और उसका अर्थ ये दोनों अभिन्न हैं, उदाहरणार्थ 'अग्नि' यह नाम और ऊष्मा उसका अर्थ ये दोनों अभिन्न हैं, अर्थात् उनमें व्यावृत्तिः भी भिन्नता नहीं है तो अग्नि इस नाम के उच्चारण मात्र से मुखदाह का प्रसङ्ग होगा। यदि ये नाम और अर्थ दोनों असम्बद्ध रहते हुए सर्वथा भिन्न हैं तो अग्नि नाम (संज्ञा) का उच्चारण करने पर भी उसके अर्थ ऊष्मा का बोध न होने का प्रसङ्ग होगा। अतः उन दोनों का स्वरूप एक होना और व्यावृत्तिः भिन्न होना तथा प्रतीत्यसमुत्पन्न होने के कारण माया की भाँति होना, हे सत्यवादिन् तथागत आपने प्रदर्शित किया है।

यदि विषय रूपादि का स्वरूप इस प्रकार का है तो इन (रूप आदि) के उपभोक्ता और ज्ञाता का स्वरूप क्या है?

हे शास्ता, आपने कर्ता और कर्म दोनों की स्थिति (विद्यमानता) परस्परापेक्षित होने के कारण उन (दोनों) की व्यवहारमात्र में विद्यमानता कही है। हेतुस्वरूप पाप (अकुशल) और पुण्य (कुशल) कर्मों के कर्ता तथा उनके फल सुख, दुःख आदि के भोक्ता यद्यपि स्वभावतः सदा और सर्वथा नहीं हैं, फिर भी हेतुभूत पाप और पुण्य से प्रतीत्यसमुत्पाद नियम के अनुसार सुख, दुःख आदि



फल उत्पन्न होते हैं। इन (हेतुफल) के नियत और भ्रान्तिरहित होने पर भी इन सब (पाप, पुण्य, सुख, दुःख, कर्ता, भोक्ता आदि) का स्वभावतः उत्पाद सर्वथा नहीं है, क्योंकि जो हेतु-प्रत्यय से उत्पन्न (प्रतीत्यसमुत्पन्न) होता है, वह वस्तुतः उत्पन्न नहीं होता—ऐसा चार प्रतिसंविदों के वशी अर्थात् प्रतिसंविदों को वश में रखने वाले वाक्पति आपने सुभाषित किया है।

कहाँ किया है? ऐसा प्रश्न होने पर 'अनवतसहदापसंक्रमण सूत्र में कहा है। तथाहि—

यः प्रत्ययैर्जायति स ह्यजातो

न तस्य उत्पादु समावतोऽस्ति।

(प्रसन्नपदा में उद्धृत, पृ० १०५)

[ अर्थात् जो हेतु-प्रत्यय से उत्पन्न होता है, उसका स्वभावतः उत्पाद नहीं होता—इत्यादि ]।

विषय रूप आदि को जाननेवाले विषयी ज्ञान की विना अपेक्षा किये उसके प्रमेय (रूप आदि) की स्थापना शक्य नहीं है, उसी तरह प्रमेय (विषय) की विना अपेक्षा किये उसको जाननेवाले विषयी विज्ञान की भी स्थापना शक्य नहीं है। इसलिए ज्ञान और ज्ञेय दोनों के सिद्धि परस्परापेक्षिकी है। अतः वे दोनों स्वभावतः सिद्ध नहीं हैं। हे भगवन्, ऐसा आपने कहा है।

यदि स्वभावतः सिद्ध लक्ष्य और लक्षण स्वरूपतः भिन्न हैं तो लक्ष्य निश्चय ही लक्षण से रहित हो जाएगा और इसी तरह वे दोनों यदि व्यावृत्तितः भी भिन्न नहीं हैं तो दोनों की परस्परापेक्षित व्यवस्था करना असम्भव हो जाएगा। अतः कोई भी धर्म स्वभावतः सिद्ध लक्ष्य, लक्षण, अभिधान, अभिधेय आदि नहीं होता, फिर भी प्रतीत्यसमुत्पाद के नियमानुसार माया की भाँति इन सबकी विद्यमानता आपने ज्ञानचक्षु के द्वारा देखी है, उसी प्रकार उपदेश देकर असंख्य प्राणियों की सन्तान में विद्यमान सबीज आवरणद्वय से उत्पन्न क्लेश और सन्ताप को आपने शान्त किया है। अतः ऐसे शास्ता की मैं स्तुति करता हूँ।

स्वभावतः सिद्ध वस्तुओं का उत्पाद कदापि नहीं होता। हेतु-प्रत्ययों से अनिर्मित अथवा हेतु-प्रत्यय से निरपेक्ष उत्पाद सम्भव नहीं है। अतः सभी वस्तुओं की न तो स्वतः सिद्ध सत्ता है और न उनका अत्यन्ताभाव ही है। उसी प्रकार हेतु



की अवस्था में जिस हेतु में अनभिव्यक्त रूप से कार्य विद्यमान होता है, उस हेतु से न तो स्वतः उत्पाद सम्भव है और न ही स्वभावतः सिद्ध पर अर्थात् अन्य हेतु से स्वभावतः सिद्ध अन्य फल उत्पन्न होता है। स्वतः और परतः पृथक्-पृथक् उत्पाद न होने पर उभयतः अर्थात् स्व और पर दोनों से उत्पाद होना भी सम्भव नहीं है। ऐसी स्थिति में प्रश्न है कि स्वभावसत्ता मानने वालों के पक्ष में उत्पाद की व्यवस्था किस प्रकार की है? अर्थात् उत्पादव्यवस्था असम्भव है।

यदि कोई धर्म स्वभावतः सत् (विद्यमान) या स्थितिमान् है तो उसमें स्थिति होना भले ही युक्त हो, किन्तु हेतु-प्रत्ययों के द्वारा उसकी हानि (विनाश) या उसका लाभ होना किसी तरह युक्त न होगा। उसी प्रकार जिसका अत्यन्ताभाव (शशशृङ्गवत्) है, उसमें 'अस्थिति' (स्थित होना) भले ही युक्त हो, किन्तु उसका उच्छेद या विनाश होना कथमपि युक्त नहीं होगा। अर्थात् उनमें (सत् और असत् दोनों में) उत्पाद-विनाश की व्यावहारिक व्यवस्था किसी भी तरह सम्भव नहीं है।

भाव (वस्तु) और उसका विनाश दोनों असम्बद्ध होकर भिन्न अथवा अत्यन्त अभिन्न (एक) नहीं माने जाते। अन्यथा (यदि असम्बद्ध होकर भिन्न होंगे तो) भाव (वस्तु) नित्य हो जाएगा तथा दोनों अभिन्न (एक) होंगे तो भाव (वस्तु) का अत्यन्ताभाव हो जाएगा। वस्तुतः ये दोनों (भाव और उसका विनाश) व्यावृत्तितः भिन्न होने पर भी स्वभावतः अभिन्न या एक हैं। अतः वस्तुओं के उत्पाद और विनाश होते रहने की व्यवस्था युक्तियुक्त होती है। यदि इन दोनों में असम्बद्ध रहते हुए भिन्नता होगी, तो भाव का परिवर्तनशील या विनाशशील होना असम्भव हो जाएगा तथा यदि दोनों अभिन्न या एक होंगे तो भाव का विनाश उपपन्न होगा।

स्वभावतः विनष्ट हेतु से फल का उत्पाद युक्त नहीं है, उसी प्रकार स्वभावतः अविनष्ट हेतु से भी फल का उत्पाद सम्भव नहीं है। इसलिए अविनष्ट या विनष्ट हेतु से जो फलोत्पाद की प्रक्रिया चली आ रही है, वह सब हे भगवन्, आपके मतानुसार माया या स्वप्न की भाँति प्रतीत्यसमुत्पाद नियम के अनुसार होती है। फलतः सभी संस्कृत धर्मों का स्वरूप इसी प्रकार का है। इन सब तथ्यों को यथावत् देख कर अद्भुत शास्ता आपने सम्पूर्ण जगत् का उत्पाद व्यवहार में कल्पना द्वारा प्रज्ञप्तिमात्र कहा है। अपरिवर्तनशील नित्य धर्मों में ही केवल संसार,

निर्वाण आदि की समस्त व्यवस्था असम्भव है, अपितु परिवर्तनशील अनित्य धर्मों में भी स्वभावतः सिद्ध संसार आदि की व्यवस्था सर्वथा युक्त नहीं है। अतः सम्पूर्ण जगत् में जो भी आभासित या समुत्पन्न धर्म हैं। अर्थात् संसार और निर्वाण की जो भी स्थितियाँ हैं, उन सबका माया की भाँति प्रज्ञप्तिमात्र के रूप में होना आपने कहा है। इस तथ्य से वे अतीत नहीं हैं। दुःखद फल देने वाले हेतु (समुदय) अर्थात् कर्म और उनके फल का उपभोग आदि अविसंवादात्मक रूप से होते हैं। अर्थात् उन कर्मों को संचित करनेवाले जो कर्ता हैं, उन दुष्कर्मों के परिणाम से वे अतीत नहीं हैं। फिर भी इस नियम (धर्मता) से विमुख कुछ तैर्थिक (बौद्धेतर) तार्किक लोग उनका निर्हेतुक उत्पाद या सृष्टिकर्ता (ईश्वर) द्वारा उत्पाद मानते हैं। अतिविशिष्ट शास्ता आपने तो उनका परस्पर की अपेक्षा अर्थात् प्रतीत्यसमुत्पाद नियम से उत्पन्न होना कहा है। जो प्रतीत्यसमुत्पन्न हैं, वे सब पूर्णतया स्वभावतः सिद्धि से शून्य हैं। फलतः किसी भी धर्म में स्वभावतः सिद्ध धर्मता अणुमात्र भी नहीं है—ऐसा हे अद्वितीय शास्ता आपने दशों दिशाओं में निर्भय होकर अतुलनीय सिंहनाद (उद्घोष) किया है।

सत्यतः सिद्ध के रूप में अभिनिवेश करनेवाले संकल्पों (वितर्क, विचार आदि) के समस्त प्रपञ्चों का परित्याग (प्रहाण) करने के लिए उनके प्रतिपक्ष के रूप में आपने अमृतरूपी गम्भीर शून्यता का विस्तार के साथ उपदेश दिया है। यदि उस प्रतिपक्ष शून्यता के प्रति भी स्वतः सिद्ध के रूप में अभिनिवेश किया जाता है तो औषधि के विष हो जाने जैसा अथवा जल में उष्णता हो जाने जैसा होगा और ऐसी शून्यतादृष्टि अचिकित्स्य अर्थात् जिसका निवारण करना कठिन है—ऐसी दृष्टि हो जाएगी। ऐसी दृष्टि सर्वथा गर्हणीय एवं परित्याज्य कही गई है। आचार्य (नागार्जुन) ने भी अन्यत्र कहा है—

शून्यता सर्वदृष्टीनां प्रोक्ता निःसरणं जिनैः ।

येषां तु शून्यतादृष्टिस्तानसाध्यान् बभाषिरे ॥१९

[ अर्थात् जिन तथागतों ने सभी दृष्टियों के परित्याग करने के लिए शून्यता का उपदेश किया है। जिनमें उस शून्यता के प्रति भी स्वभावतः सिद्ध दृष्टि है, वे लोग सर्वथा असाध्य (जिनका उद्धार करना कठिन है—ऐसे) हैं। ]



गौण (निरीह) एवं निर्जीव बाह्य वस्तुएं तथा आभ्यन्तर क्लेश और कर्मों के वशीभूत सत्त्व—ये सभी स्वभावतः शून्य होने पर भी माया की भाँति प्रतीत्यसमुत्पन्न होते हैं। इसलिए संक्षेप में आपने बाह्य और आन्तरिक समस्त धर्मों को स्वभावतः असिद्ध प्रदर्शित किया है। तत्त्व की स्थिति का नये सिरे से निर्माण कर भगवान् ने प्रतिपादन नहीं किया है। जो तथता या वस्तु की यथार्थ स्थिति है, उसका उत्पाद करना या उसका अपलाप करना किसी के द्वारा भी सम्भव नहीं है। पूर्व तथागतों ने भी उसी का यथावत् अनुष्ठान किया, उसी को यथावत् जाना और उसी का विनेय जनों को अविपरीत उपदेश किया। ठीक उसी प्रकार भगवान् शाक्यमुनि ने भी उसी को यथावत् जानकर दूसरों को उपदेश दिया है। जैसे कि भगवान् ने कहा है—

“अपितु खलु पुनः कुलपुत्र, एषा धर्माणां धर्मता; उत्पादाद् वा तथागतानाम् अनुत्पादाद् वा स्थितैवेषा धर्मता धर्मधातुस्थितिः, यदिदं सर्वधर्मशून्यता सर्वधर्मानुपलब्धिः”<sup>१</sup>

[ अर्थात् कुलपुत्र, यह धर्मों की धर्मता है। तथागत का उत्पाद हो अथवा न हो धर्मों की यह धर्मता तो स्थित ही है, जो कि धर्मधातुस्थिति है। यही सभी धर्मों की शून्यता और सभी धर्मों की अनुपलब्धि है। ]

पृथग्जनभूमि से उत्कृष्ट आर्यभूमि में स्थित लोगों को भी भावनामार्ग के अभ्यास की अपेक्षा किये विना निर्निमित्त (शून्यता) अर्थ का ज्ञान भले ही हो जाए, किन्तु उसका परिपूर्ण ज्ञान नहीं हो पाता है, तब साधारण पृथग्जनों के बारे में तो कहना ही क्या है?। अतः इस विशिष्ट नय (महायान) में सत्यग्राह के प्रपञ्चों से रहित शून्यता और निर्निमित्त के मार्ग की भावना का अभ्यास किये विना मोक्ष पद की प्राप्ति सम्भव नहीं है। अतः अनुत्तर शास्ता आपके द्वारा इस अग्रयान (महायान) में गम्भीर और उदार मार्ग की सम्पूर्ण व्यवस्था का प्रतिपादन किया गया है और इसके द्वारा विनेय जनों की अभिलाषा की पूर्ति की गई है। इसी प्रकार आचार्य विरचित रत्नावलि आदि ग्रन्थों में भी कहा गया है।

सम्पूर्ण मार्गव्यवस्था के उपदेशक, स्तुति एवं सत्कार के उत्तम भाजन परम शास्ता भगवान् तथागत की शून्यता और प्रतीत्यसमुत्पाद के उपदेष्टा के रूप

१. द्र०-दशभूमकसूत्र, अष्टमी भूमि, पृ० ४३ (मिथिला विद्यापीठ, दरभंगा, १९६७)।



में आचार्य ने महाश्रद्धा से युक्त होकर स्तुति-रचना की है। इस शुभ कार्य से जो पुण्यसम्भार और ज्ञानसम्भार अर्जित हुआ है, उससे सम्पूर्ण जगत् सत्यग्राह रूपी बन्धन से मुक्त हो—ऐसी अन्त में परिणामना और प्रणिधान करते हुए स्तुति का समापन किया है।

## २. निरौपम्यस्तव का सारांश

यावत् एवं यथावत् के समस्त धर्मों की वास्तविक स्थिति को यथावत् जाननेवाली सम्यग्दृष्टि से जो विपन्न है तथा अविद्या रूपी तिमिर पटल से जिनकी नेत्ररूपी बुद्धि आच्छन्न है, ऐसे जगत् के हित के लिए सर्वदा समुद्यत अनुत्तर शास्ता, जो सत्यतः सिद्ध वस्तु के सर्वथा अभाव अर्थात् निःस्वभावता तत्त्व को यथावत् जाननेवाले हैं और जो उपमा (तुलना) एवं प्रतिपुद्गल से रहित है, उनकी ग्रन्थारम्भ में आचार्य (नागार्जुन) अवेत्यप्रसाद से युक्त होकर स्तुति एवं वन्दना करते हैं। तत्पश्चात् आचार्य ने किस तत्त्व का प्रतिपादन किया है, इस प्रश्न के बारे में आगे कहा जा रहा है।

जैसे कि सूत्रों में अनेकधा कहा गया है कि 'अदृष्टं तु परमं दृष्टम्' अर्थात् (स्वभावतः) न देखना ही श्रेष्ठ देखना है, तदनुसार जिस शास्ता ने स्वभावतः सिद्ध किसी वस्तु को नहीं देखा है, उस शास्ता (आप) की दृष्टि ही सर्वश्रेष्ठ दृष्टि है, क्योंकि यही समस्त धर्मों की वास्तविक स्थिति को यथावत् जानती है। निरपेक्ष एवं परमार्थतः नित्य और कूटस्थ कोई बोद्धव्य नहीं है तथा बोद्धा भी नहीं है। अतः इनकी व्यवस्था बिलकुल युक्त नहीं है। सापेक्ष एवं कृत्रिम बोद्धव्य धर्म तो अनन्त हैं। इन सबमें से परम दुर्बोध स्थल शून्यता के अर्थ को आश्चर्यजनक ढंग से बुद्धों ने साक्षात् रूप से जाना है।

हे शास्ता, आपने न किसी स्वभावसत् धर्म का उत्पाद किया है और न उसका निरोध किया है। सभी धर्म निःस्वभाव होने में समान हैं। उस निःस्वभावतामूलक समता का आपने यथावत् अधिगम किया है। फलतः आपने अनुत्तर प्राप्तव्य बुद्धत्व नामक परम पद को प्राप्त किया है।

हे शास्ता, आपने पहले मार्गाभ्यास की अवस्था में भी दुःखों से पीड़ित सांसारिक जीवों की उपेक्षा कर केवल स्वयं की मुक्ति की अभिलाषा नहीं की। इस तरह आपमें हीन निर्वाण की इच्छा कभी उत्पन्न नहीं हुई। सांसारिक स्थान,

काय, उपभोग्य वस्तु आदि के प्रति अभिनिवेश के हेतु सभी निमित्त-आलम्बनों को दूर हटाकर आपने शान्त अप्रतिष्ठित निर्वाण का यथावत् अवबोध किया है। अतः संक्लेश और व्यवदान से सम्बद्ध सभी धर्म परमार्थतः धर्मता के गर्भ में एकरस हैं। धर्मधातु से अभिन्न उस प्रकृष्ट स्थिति को जिस ज्ञान ने जान लिया है, उस ज्ञान के अतिविशुद्ध और प्रपञ्चरहित होने में सन्देह ही क्या है।

हे प्रभो, आपने किसी देश और किसी काल में सत्यतः सिद्धस्वभाव धर्म को नीतार्थतः तो क्या व्यवहारतः (संवृतितः) भी एक अक्षर के परिमाणमात्र से भी नहीं कहा है, फिर भी आवश्यकता और प्रयोजन के अनुरूप विनेयजनों को मुक्तिमार्ग पर आरूढ करने के लिए नेयार्थतः और नीतार्थतः सद्धर्मों की महती वर्षा से पूर्णतया तृप्त किया है।

आकाश के समान विशाल चित्तवाले जिस शास्ता में स्कन्ध, आयतन और धातु में संगृहीत किसी भी धर्म के प्रति लेशमात्र भी आसक्ति नहीं है, उनमें हीन सास्त्रव धर्मों के प्रति अपेक्षा या उन पर निर्भरता बिलकुल भी नहीं है। उसी प्रकार जैसी सत्त्व संज्ञा (निमित्तग्रहण) राग, प्रतिघ एवं अविद्या आवरणों से युक्त प्राणियों में होती है, वैसी सत्त्वसंज्ञा की प्रवृत्ति आपमें सदा के लिए सर्वथा नहीं है, फिर भी त्रिविध दुःखों से दुःखित सत्त्वों के प्रति एकान्त महाकरुणा से युक्त होकर आप जगत्कल्याण के कार्य में अनाभोग और अविच्छिन्न कर्म करने से कभी विमुख नहीं होते।

हे प्रभो, लौकिक सुख-दुःख, आत्मा की सत्ता-असत्ता, नित्य-अनित्य आदि कल्पनाजन्य दोषों से आपकी बुद्धि सर्वथा निर्लिप्त है। धर्मों के परमार्थ स्वरूप को सम्यग्-रूप से जाननेवाले आपने सभी धर्मों को यथार्थतः गमन, आगमन, संचय आदि सभी सांवृतिक प्रपञ्चों से रहित जाना है और स्पष्टतया कहा है। आप सर्वत्र (सभी धर्मों में) अनुगत हैं, फिर भी सत्त्वों की धातु, आशय, अधिमुक्ति आदि के अनुरूप प्राणियों की अर्थसिद्धि (हित) के लिए लोक में जन्म आदि ग्रहण करते हैं, फिर भी सत्यतः सिद्ध, निरपेक्ष, कूटस्थ के रूप में वह उत्पाद नहीं होता है। वस्तुतः (परमार्थतः) उत्पाद नहीं ही होता। अनेक लोकों में जन्म लेना, धर्मकाय प्राप्त करना आदि आपकी प्रतीत्यसमुपपन्न लीलाएं वस्तुतः अचिन्त्य हैं। प्रतिश्रुत्का के समान यह जगत् स्वभावतः सिद्ध के रूप में एक, अनेक, उत्पाद, भङ्ग, स्तुति, निन्दा आदि का आधार नहीं बन सकता है। उसी



प्रकार शाश्वत, उच्छेद, लक्ष्य, लक्षण आदि से भी यह (जगत्) रहित है। आपने संसार और उसके क्रियाकलापों को स्वप्न, माया आदि के रूप में जाना है।

क्लेश और दोषों की मूल अविद्या और उसके द्वारा स्थापित बीजों का आपने समूल प्रहाण किया है। विशेषतः गम्भीर वज्रयान के उपायकौशल्य पर आश्रित होकर आपने क्लेशप्रकृति (स्वरूप) से भी विशिष्ट विषयी सहजज्ञान रूपी अमृत को अर्जित किया है। हे शास्ता, जिसके दर्शन से कभी तृप्ति नहीं होती, ऐसा लक्षणों और अनुव्यञ्जनों से विभूषित आपका काय भी सभी प्रपञ्च निमित्तों से रहित है तथा वस्तुतः वह (काय) अरूप के समान मनोमय (ज्ञानरूपी) काय के रूप में विशुद्ध मायाकाय है, जो मात्र आर्यों के ज्ञानचक्षु का ही गोचर होता है। यद्यपि साधारण जनों के आभास में वह (काय) रूपवान् की भाँति दृष्टिगोचर होता है, इतने मात्र से उन्हें शास्ता के विशुद्ध मायाकाय का साक्षात् दर्शन तो नहीं ही होता है, फिर भी लोकव्यवहार में 'दर्शन हुआ है'—ऐसा कहा जाता है। वस्तुतः आपके द्वारा प्रतिपादित सर्वाकारवरोपेत सद्धर्म के गम्भीर तत्त्व (प्रतीत्यसमुत्पाद या धर्मकाय) को अविपरीत देखने से ही तथागत आप देखे जाते हैं। फिर भी धर्मता या शून्यता की वास्तविक स्थिति द्वायाभासी बुद्धि द्वारा यथावत् ज्ञात नहीं होती। जैसे आर्यशालिस्तम्बसूत्र में कहा गया है—“यो भिक्षवः, प्रतीत्यसमुत्पादं पश्यति, स धर्मं पश्यति, यो धर्मं पश्यति, स बुद्धं पश्यति”<sup>१</sup>।

[ अर्थात् हे भिक्षुओं, जो प्रतीत्यसमुत्पाद को देखता है, वह धर्म को देखता है। जो धर्म को देखता है, वह बुद्ध को देखता है ]।

आचार्य नागार्जुन द्वारा विरचित अपने पञ्चक्रम ग्रन्थ में विशुद्ध मायाकाय की स्तुति जिस प्रकार की गई है, ठीक उसी प्रकार इस (प्रस्तुत) स्तोत्र में भी की गई है। जैसे—हे वज्रधर, आपके काय में सुषिरता बिलकुल नहीं है और कर्मविपाक जनित मांस, अस्थि एवं रुधिर (रक्त) भी नहीं है। यद्यपि आपका मनोमय काय (ज्ञानकाय) अरूपी (रूपरहित) और सर्वत्र अप्रतिहत है, फिर भी आकाश में इन्द्रधनुष की भाँति आपने उसे (काय को) लक्षणों और अनुव्यञ्जनों से विभूषित के रूप में उसे प्रदर्शित किया है।

१. द्र०-शालिस्तम्बसूत्र, पृ० १०१, महायानसूत्रसंग्रह प्रथम भाग (दरभंगा-संस्करण, १९६१)।



आपके काय में त्रिदोषजनित ४०४ रोगों में से कोई भी रोग नहीं है। काय के नव (९) द्वारों से प्रवाहित होनेवाली कोई भी गन्दगी (अशुचि) आपके शरीर में नहीं है तथा उसमें भूख और प्यास से उत्पन्न अनाह्लादकरी वेदना भी नहीं है। इन सबके नहीं होने पर भी हे शास्ता, आपने स्वयं द्वारा दृष्ट सम्यग् मार्ग पर समस्त लोक को आरूढ करने के लिए लोकव्यवहार के अनुकूल पिण्डपात के लिए जाना, औषधि-सेवन करना आदि लौकिक क्रियाओं का प्रदर्शन किया है।

हे पापरहित, आपने यद्यपि कर्म और क्लेशों के आवरणों का और उनकी वासनाओं का सर्वथा प्रहाण कर दिया है, फिर भी असमर्थ और पीड़ित प्राणियों पर अनुग्रह करने के लिए आपने छह वर्ष पर्यन्त कठोर तप करना, मानों हेय क्लेशों का शेष होना तथा उसके प्रतिपक्ष के रूप में मार्ग की भावना करना आदि अनेक लीलाएँ प्रदर्शित की हैं।

धर्मधातु जो नीतार्थ है, उसमें सर्वथा भेद नहीं है, अतः इस दृष्टि से तीनों यानों का भेद भी नहीं है, फिर भी संवृति जो नेयार्थ है, उसकी दृष्टि से उत्तम, मध्यम और अधम विनेय जनों को सद्धर्म (बुद्धशासन) में क्रमशः आरूढ करने के लिए हे तथागत, आपने तीन यानों की व्यवस्था का प्रतिपादन किया है।

हे तथागत नीतार्थ की दृष्टि से आपका धर्मकाय नित्य (अक्षय), स्थिर, अप्रतिहत एवं शिव (प्रपञ्चरहित) है, जिसमें विसदृश परिवर्तन और उच्छेद सदा सर्वथा नहीं होते, फिर भी नेयार्थ की दृष्टि से विनेय जनों के आशय की अपेक्षा से उपायकौशल्य के रूप में नित्यग्राह से ग्रस्त विनेय जनों पर अनुग्रह करने के लिए आपने सम्प्रति परिगृहीत कायमण्डलव्यूह का विघटन कर महापरिनिर्वाण प्रदर्शित किया है।

हे भगवन्, असंख्य और अपरिमित अन्य-अन्य लोकधातुओं में जन्मग्रहण, अभिसम्बोधि, धर्मचक्रप्रवर्तन, परिनिर्वाण आदि निर्माणकाय की द्वादश लीलाएँ आपके द्वारा विनेय जनों के सम्मुख प्रदर्शित की जाती हैं। संसार और दुर्गति से त्राण पाने के अभिलाषी जनों तथा शास्ता और शासन के प्रति श्रद्धा और आदर रखने वाले विनेय जनों की दृष्टि का विषय बनाने के लिए ही इन लीलाओं का प्रदर्शन किया जाता है तथा जिस (विनेय जन) के लिए जो, जब और जिस प्रकार हितावह हो, उसे आप परिपूर्ण करने के लिए अचिन्त्य कर्म का प्रदर्शन करते हैं।

हे जगन्नाथ, आप संख्या और परिमाण से रहित अप्रमेय सत्त्वों के हित के लिए काय, वाक् और चित्त के द्वारा जो भी कर्म करते हैं, उसके पीछे आपके भीतर कोई विकल्प और प्रयत्न सर्वथा लेशमात्र भी नहीं होते। धर्मता (तत्त्व) में समाहित रहते हुए आप से जगत् के हित के लिए २७ बुद्ध कृत्य अनाभोग और अविच्छिन्न रूप से सर्वदा (अपने-आप) प्रवृत्त होते रहते हैं।

इस प्रकार शास्ता, भगवान् तथागत के अचिन्त्य, अप्रमेय, अनभिलाष्य गुणों के द्वारा परम श्रद्धा के साथ उनकी स्तुति और सत्कार रूपी पुष्प विकीर्ण किये गये हैं, उससे जो पुण्य कर्म निष्पन्न हुआ है, उस कुशलमूल से समस्त प्राणी भगवान् बुद्ध द्वारा उपदिष्ट परम गम्भीर एवं दुर्बोध शून्यता और प्रतीत्यसमुत्पाद के पात्र (भाजन) बन जाँएँ। इस प्रकार प्रणिधान और परिणामना करते हुए आचार्य ने स्तुति का समापन किया।

### ३. अचिन्त्यस्तव का सारांश

जिस शास्ता ने प्रतीत्यसमुत्पन्न होने के कारण सभी धर्मों की जैसी स्वभावतः असिद्ध स्थिति है, वैसा सम्यक् रूप से जाना है, उस शास्ता का ज्ञान निश्चित रूप से अनुत्तर एवं असम है। अर्थात् वैसा ज्ञान अन्य शास्ताओं में नहीं है। उनका ज्ञान साधारण जनों का भी अगोचर है। इस प्रकार के अचिन्त्य एवं असम (अनुपम) गुणों से युक्त शास्ता की आचार्य नागार्जुन ने श्रद्धा से युक्त होकर वन्दना की है। तत्पश्चात् उन्होंने अचिन्त्यस्त्व के अभिधेय का भी इस प्रकार निर्देश किया है, जैसे—हे शास्ता, अपने सभी यानों में श्रेष्ठ महायान मार्ग पर आश्रित होकर जिस प्रकार सभी धर्मों की निरात्मक स्थिति को यथावत् जाना है, ठीक उसी प्रकार करुणा के वशीभूत होकर प्रेक्षावान् विनेय जनों को प्रकाशित भी किया है। इस कारण आपका अधिगम और देशना अद्वितीय हैं। आचार्य चोंखापा ने भी अपने 'प्रतीत्यसमुत्पादस्तुति सुभाषितहृदय' में इसी आशय को प्रकट करते हुए कहा है—

यं ज्ञात्वा भाषमाणस्य ह्ययपूर्वे ज्ञानदेशने१।

१ द्र०-प्रतीत्यसमुत्पादस्तुतिसुभाषितहृदयम्, प्रथम कारिका, पृ० १ (तिब्बतीसंस्थान, सारनाथ-प्रकाशन, १९९४)।



अर्थात् धर्मों की यथवत् स्थिति को देखकर उपदेश करनेवाले (आप) के अधिगम और देशना दोनों ही अपूर्व हैं। अर्थात् आपसे पूर्व न किसी अन्य को ऐसा अधिगम हुआ है और न किसी ने ऐसी देशना की है। हे शास्ता, आपने हेतु-प्रत्यय तथा प्रज्ञाप्य-प्रज्ञापक आदि पर आश्रित होकर जो उत्पाद होता है, वह स्वभावतः अनुत्पाद है—ऐसा कहा है। इस तरह सभी धर्म स्वभावतः अनुत्पन्न होने के कारण प्रकृतितः शून्य हैं—ऐसा आपने प्रकाशित किया है। इसी तथ्य को आचार्य चोंखापा ने इस प्रकार व्यक्त किया है—

यद् यद्धि प्रत्ययायत्तं तत्तच्छून्यं स्वभावतः ।

इत्यस्माद् वचनाच्चित्रः को वा सद्देशनाविधिः<sup>१</sup> ॥

[ अर्थात् जो जो प्रत्यय पर आश्रित होता है, वह सब स्वभावतः शून्य है। आप (भगवान् तथागत) के इस वचन से अधिक आश्चर्यजनक सदुपदेश की विधि अन्य क्या हो सकती है। ]

जिस प्रकार प्रतीत्यसमुत्पन्न शब्द से प्रतिध्वनि उत्पन्न होती है और स्पष्ट सुनाई पड़ती है, उसी प्रकार माया और मरीचि की भाँति संसार निरन्तर प्रवृत्त होते रहता है, स्वभावतः सिद्ध के रूप में कथमपि नहीं प्रवृत्त होता।

यदि स्वप्न एवं माया, मरीचि, गन्धर्वनगर, प्रतिबिम्ब आदि अत्यन्त अजात (अनुत्पन्न) हैं। अर्थात् यदि उनका अत्यन्ताभाव है तो चक्षु, श्रोत्र आदि एवं रूप शब्द आदि सभी वस्तुओं की स्वभावरहितता के निदर्शन के लिए दृष्टान्त का ही अभाव हो जाएगा। अतः वे माया, मरीचि, स्वप्न आदि व्यवहार में प्रतीत्यसमुत्पन्न होकर विद्यमान हैं—ऐसा मानना चाहिए।

हे नाथ, जिस प्रकार आपने हेतु-प्रत्ययों की अपेक्षा से उत्पन्न धर्मों को कृतक (हेतु-प्रत्यय-कृत या संस्कृत) माना है, उसी प्रकार प्रत्ययसापेक्ष (प्रतीत्यसमुत्पन्न) इस सारे विश्व को आपने व्यावहारिक या सांवृतिक (अज्ञानजनित) स्वरूप से अनतीत कहा है। अतः जो भी अज्ञानजनित (सांवृतिक) हैं तथा वस्तुओं की यथार्थस्थिति को न जाननेवाले पृथग्जन भ्रान्तिवश जो कुछ कहते या करते हैं, वह सब कुछ खाली मुट्ठी के समान रिक्त,

<sup>१</sup> ८०-प्रतीत्यसमुत्पादस्तुतिसुभाषितहृदयम्, कारिका-५, पृ० ५ (केन्द्रीय उच्च तिब्बती संस्थान, सारनाथ-प्रकाशन, १९९४)।



तुच्छ एवं निरर्थक (तथ्य से परे) है और वस्तुस्थिति से विपरीत है—ऐसा आपने प्रकाशित किया है।

जब हेतु-प्रत्यय से उत्पन्न वस्तुएं (परमार्थतः) कभी उत्पन्न ही नहीं होतीं, तब इनका वर्तमान काल में स्वभावसत् होना, किसके क्षय (नाश) से अतीत होना और (कारणसामग्री) अपूर्ण होने की वजह से भविष्य में होनेवाली वस्तुओं का किसी कारण सामग्री की अपेक्षा करना आदि सारी व्यवस्थाएं कैसे स्थापित की जा सकती हैं। अर्थात् युक्त नहीं है।

हेतु-प्रत्ययसामग्री से उत्पन्न या संभूयसमुत्पन्न सभी वस्तुएं अपने (स्व) को हेतु बनाकर उत्पन्न नहीं होतीं। उसी प्रकार स्वभावतः सत् 'पर' (अन्य) हेतु से भी स्वभावतः सिद्ध फल के रूप में उत्पन्न नहीं होतीं। स्व एवं पर से पृथक्-पृथक् उत्पाद नहीं होने से उभय (दोनों) से भी उनका उत्पाद सम्भव नहीं है। अतः वस्तुओं का न तो स्वभावसत् हेतु से उत्पाद होता है और न व्यवहारतः असत् (अलीक) हेतु से उत्पाद होता है। अतः उभयात्मक (स्वभावतः सत् और अलीक) हेतु से भी उत्पाद नहीं होता। अहेतुतः भी उत्पाद सम्भव नहीं है। अतः वस्तु न सत् है, न असत् है और न सदसत्। इस तरह वह चतुष्कोटिविनिर्मुक्त है। ऐसी स्थिति में किसका उत्पाद होता है। अर्थात् किसी का भी उत्पाद युक्त नहीं है। इस (चतुष्कोटिक उत्पाद) से विपरीत प्रतीत्यसमुत्पाद अर्थात् मायावद्-उत्पाद की व्यवस्था अत्युत्तम एवं युक्तिसंगत है। चार अन्तों (कोटियों) से रहित धर्मों में व्यावहारिक (सांवृतिक) उत्पाद अर्थात् प्रतीत्यसमुत्पाद युक्त होने पर भी स्वभावतः उत्पाद सदा सर्वथा युक्त नहीं है। व्यावहारिक (प्रतीत्यसमुत्पन्न) 'स्व' होने पर उसकी अपेक्षा से 'पर' (अन्य) और इन (स्व-पर) से अतिरिक्त तथा इनके विपरीत की भी व्यवस्था की जा सकती है, क्योंकि वे सभी परस्पर सापेक्ष प्रतीत्यसमुत्पन्न मात्र ही हैं।

यदि धर्म (वस्तुएं) निरपेक्ष अथवा अकृत्रिम होंगे तो किसी पर आश्रित होकर किसी का उत्पाद अर्थात् हेतु-फल व्यवस्था या प्रज्ञाप्य-प्रज्ञापक आदि सारी व्यवस्था असम्भव हो जाएगी। उदाहरणार्थ अपेक्षा के आधार दीर्घ, स्थूल आदि ही यदि अलीक होंगे तो उनकी अपेक्षा से लघु, सूक्ष्म आदि की स्थापना नहीं की जा सकेगी। ठीक इसी प्रकार सद्-असद्, एक-अनेक, अतीत-अनतीत, संक्लेश-व्यवदान, सम्यक्-मिथ्या, स्व-पर आदि सभी व्यवस्थाओं का

परस्परापेक्षिक के रूप में विद्यमान होना तथा स्वभावतः सिद्ध के रूप में सदा सर्वथा नहीं होना हे नाथ, आपने कहा है। संक्षेप में सभी धर्म प्रारम्भ से सत्यतः सिद्धि आदि सारे प्रपञ्चों से रहित होने के कारण आदिशान्त, प्रकृतिपरिनिर्वृत्त, परमार्थतः (स्वभावतः) अनुत्पन्न हैं। इस कारण समस्त धर्म माया की भाँति प्रतीत्यसमुत्पन्न मात्र के रूप में विद्यमान हैं—ऐसा कहा गया है।

अनुत्तर और अद्भुत बल-बुद्धि से सम्पन्न शास्ता, आपने रूप आदि सभी धर्मों को फेन (झाग), बुद्बुद् (बुलबुले), माया, मरीचि, गन्धर्वनगर एवं कदलीस्तम्भ आदि की अनेक उपमाओं के माध्यम से निःसार, तुच्छ एवं निःस्वभाव प्रकाशित किया है। यदि साधारण बाल-पृथग्जनों को इन्द्रियों के द्वारा जिस प्रकार धर्म अवभासित होते हैं, यदि वही धर्मों की वस्तुस्थिति (तथता) है तो बाल-पृथग्जनों के तत्त्ववित् हो जाने का प्रसङ्ग होगा और आर्यों के सम्यक् प्रत्यवेक्षण ज्ञान के निरर्थक होने का दोष होगा।

पृथग्जनों द्वारा तत्त्व (अर्थ) को न जानने का कारण यह है कि उनकी इन्द्रियाँ जिस प्रकार जड़, अप्रमाण हैं उसी प्रकार वे अव्याकृत और विपरीत ज्ञान पैदा करनेवाली हैं। फलतः पृथग्जन इन्द्रियों के द्वारा धर्मों की यथार्थ स्थिति (तथता) को कैसे जान सकेंगे? अर्थात् नहीं जान सकेंगे। इसलिए यथाभूत को सम्यक् रूप से जाननेवाले शास्ता आपने लोक को अज्ञान आवरण से आवृत सन्तानवाला कहा है।

अनुत्तर शास्ता आपने धर्मों को सत्यतः सिद्ध समझने को शाश्वत दृष्टि तथा व्यवहार में धर्मों को खपुष्वत् अलीक समझने को उच्छेददृष्टि कहा है। इसलिए आपने दोनों (शाश्वत और उच्छेद) अन्तों से रहित सद्धर्म अर्थात् मध्यम मार्ग की देशना की है। इसलिए तथागत, आपने सभी धर्मों को सत्, असत्, सदसत् आदि चारों कोटियों से विनिर्मुक्त कहा है। फलतः उस तात्त्विक अर्थ (तथता) को आर्यज्ञान के अतिरिक्त अन्य साधारण ज्ञान द्वारा यथावत् जान पाना असम्भव है। इसलिए उसे (तथता) को क्लेश बन्धनों से विमुक्त आर्य जनों का गोचर (विषय) कहा गया है। निष्कर्षतः सत्त्व और भाजन अर्थात् स्थिर और चल समस्त जगत् को आपने स्वप्न, इन्द्रजाल और द्विचन्द्रदर्शन के समान उत्पन्न हैं—ऐसा कहा है। उनका स्वभावतः निरपेक्ष और वास्तविक उत्पाद नहीं है—ऐसा आपने यथावत् देखकर ही कहा है।



वस्तुओं का उत्पाद, भङ्ग स्थिति तो स्वप्न में पुत्र के उत्पाद, स्थिति और नष्ट होने की भाँति है। अर्थात् उनका स्वभावतः उत्पाद, स्थिति और भङ्ग नहीं होते। फिर भी भगवन्, आपने लौकिक आशय के अनुरूप नेयार्थ की अभिसन्धि से व्यवहार में उनका विद्यमान होना कहा है। चेतन-सन्तति से अगृहीत बाह्य वस्तुओं में स्वप्न की भाँति उत्पाद, स्थिति, भङ्ग विद्यमान हैं, उसी प्रकार चेतना द्वारा गृहीत सन्तति में दुःख, संसार आदि संक्लेश पक्ष, उनके हेतु (समुदय) कर्म एवं क्लेश एवं इनके प्रतिपक्ष व्यवदान अर्थात् ज्ञान और पुण्य सम्भारद्वय तथा मोक्ष आदि सभी स्वप्न के समान कहे गये हैं।

उत्पाद और अनुत्पाद, गमन और आगमन, बद्ध और मुक्त आदि के प्रति द्वयाभासी बुद्धि द्वारा अभिनिवेश हो सकता है, किन्तु सम्यग् अर्थ के ज्ञाता आर्य के ज्ञान में द्वैताभास होना सम्भव नहीं है। किसी भी विषय का स्वभावतः सिद्ध उत्पाद एवं निरोध नहीं है। सभी धर्म मायागज की भाँति हैं। नीतार्थतः वे सभी आदिशान्त हैं। अतः सभी वस्तुएं संवृति (व्यवहार) में मायागज की भाँति उत्पन्न होती हैं। वस्तुतः उनका अनुत्पाद ही है।

अपरिमित लोकनाथों द्वारा असंख्येय और अप्रमेय पुण्यवान् विनेय जनों को अन्तिम प्राप्तव्य अप्रतिष्ठितनिर्वाण में प्रतिष्ठित किया गया है। अतः उन्होंने किसी भी योग्य विनेय जन को बिना विचारे उपेक्षा की वज्रह से मुक्त (निर्वृत्त) नहीं किया हो—ऐसा सर्वथा नहीं है। हे महामुनि, जो निर्वाण प्राप्त करते हैं, वे सत्त्व सदा और सर्वथा जब स्वभावतः उत्पन्न ही नहीं है, तब किसी के द्वारा कोई सत्त्व परमार्थतः मुक्त ही नहीं किया गया है—ऐसा आपने कहा है। यदि ऐसा नहीं है और सत्त्व स्वभावतः सिद्ध है तो उसके निश्चय ही हेतु-प्रत्यय-निरपेक्ष और अकृत्रिम होने तथा तथागत की कृपा से अतिक्रान्त होने का प्रसङ्ग (सम्भावना) होगा।

जैसे मायाकार द्वारा निर्मित वस्तु (स्वभावतः) शून्य होती हैं, उसी तरह अन्य कृतक (निर्मित) वस्तुएं या वस्तुतः सम्पूर्ण जगत् स्वभावतः शून्य है। इसी तरह विशिष्ट कर्ता (कारक) और उसके कार्य तथा उनके अन्य हेतु सभी स्वभावतः शून्य हैं। उन (वस्तुओं) का व्यवहार में प्रतीत्यसमुत्पन्न के रूप में उत्पाद होता है। अन्यथा उनकी अनन्तता और अनवस्था होने का प्रसङ्ग होगा। सभी धर्म स्वभावतः असिद्ध और नाममात्रतः सिद्ध हैं—ऐसी हे शास्ता, आपने



उच्च स्वर से घोषणा की है। वस्तुतः अभिधान भी स्वभावतः अभिधेय (उसके विषय) से पृथग्भूत नहीं है। सभी धर्म कल्पनामात्र हैं। जिस बुद्धि द्वारा समस्त धर्म शून्य के रूप में अवबोधित होते हैं, वह बुद्धि (कल्पना) भी स्वभावतः सत् नहीं है। सभी धर्म (अर्थात् नाम और कल्पना तथा उनके विषय) कल्पना द्वारा प्रज्ञसमात्र कहे गये हैं। भाव, अभाव, उभय (भावाभाव) और उनसे अतीत अर्थात् अनुभय एवं उनसे अनतीत तथा ज्ञान और ज्ञेय कहीं कुछ भी स्वभावतः सिद्ध नहीं है तथा व्यवहारतः उनका अत्यन्ताभाव भी नहीं है।

कोई भी धर्म (सत्यतः सिद्ध) एक नहीं है और न अनेक है तथा उभय और अनुभय भी नहीं है। सभी धर्म अनाश्रय, अव्यक्त (अस्फुट), अचिन्त्य और अनिदर्शन हैं। अतः ये सभी (धर्म) आकाश की भाँति स्वभाव से विविक्त (रहित) और प्रतीत्यसमुत्पाद के नियम से अतीत नहीं हैं। उसी की भाँति सद्धर्म और उसके उपदेष्टा तथागत भी प्रतीत्यसमुत्पन्न अथ च शून्य हैं। यह स्थिति तो धर्मों की वास्तविक स्थिति और परमार्थ है। यही स्थिति तथता एवं वास्तविक द्रव्य के रूप में विद्यमान है। इस अर्थ में सदा और सर्वथा विसंवाद बिलकुल नहीं है। जिस व्यक्ति ने उस प्रकृष्ट बोद्धव्य का यथावत् बोध कर लिया है, उसे ही बुद्ध कहा जाता है।

बुद्धों की सन्तान में विद्यमान स्वभावकाय और सत्त्वों (प्राणियों) की सन्तान में विद्यमान प्रकृतिगोत्र अर्थात् चित्तधर्मता इन दोनों में नीतार्थतया (वस्तुतः) कुछ भी भेद (अन्तर) नहीं है। इसीलिए अर्थात् इसी तथ्य के मद्देनजर आपके द्वारा स्व और पर में समता मानी गई है। वस्तुओं की प्रकृष्टतम प्रकृति तो शून्यता के अलावा अन्य कुछ नहीं है। शून्यता के बिना वस्तु कथमपि नहीं है। इसलिए आपने प्रतीत्यसमुत्पन्न समस्त भावों (वस्तुओं) को स्वभावतः शून्य कहा है। संवृति तो हेतु-प्रत्यय से उत्पन्न और परतन्त्र है। अतः सभी (हेतु-प्रत्यय से उत्पन्न) धर्म परतन्त्रस्वभाव हैं। यथावस्थित परमार्थ यद्यपि प्रतीत्यसमुत्पन्न (सापेक्ष) है, किन्तु हेतु-प्रत्यय निर्मित नहीं है।

वह परमार्थ (परिनिष्पन्न-)स्वभाव, (सभी धर्मों की) प्रकृति, तत्त्व (तथता) द्रव्य, वस्तु और सत् (विद्यमान) है। कल्पना द्वारा आरोपित परिकल्पित-स्वभाव धर्म बिलकुल ही (सर्वथा) नहीं हैं तथा हेतु-प्रत्यय से समुत्पन्न परतन्त्र-स्वभाव धर्मों की (व्यावहारिक) सत्ता अवश्य होती है। विकल्प

(विपरीत बुद्धि) द्वारा समारोपित अर्थ (वस्तु) की सत्ता मानना शाश्वत-दृष्टि है तथा हेतुभूत कृतपुण्य और कृतपापों के संचय से क्रमशः सुख और दुःख रूपी फल का उत्पाद न मानना उच्छेद-दृष्टि है। तत्त्वज्ञान अर्थात् सम्यग् अर्थबोध हो जाने पर अपवादिका अछेद-दृष्टि और समारोपिका शाश्वत-दृष्टि का प्रहाण हो जाता है। स्थिर और चल अथवा सत्त्व और भाजन समस्त धर्म या सम्पूर्ण जगत् स्वभावतः सत्स्वरूप शाश्वत नहीं है और अत्यन्ताभावस्वरूप उच्छेदस्वभाव भी नहीं है। अर्थात् सम्पूर्ण जगत् वस्तुशून्य और मृगमरीचिकासदृश है।

जिसके मत में किसी धर्म का प्रतीत्यसमुत्पाद अर्थात् सापेक्ष उत्पाद होता है तो उसका उच्छेद (विनाश) भी अवश्य होता है। लोक का यद्यपि पूर्वान्त नहीं है, किन्तु अपरान्त होता है, अतः संसार सान्त होता है। अतः सब कुछ परस्पर सापेक्ष है। ज्ञान (ज्ञापक या विषयी) के होने पर ज्ञेय (ज्ञाप्य या विषय) होता है, उसी प्रकार ज्ञेय होने पर ज्ञान होता है। अतः जब ज्ञान और ज्ञेय दोनों के (स्वभावतः) अनुत्पाद का बोध हो जाता है, तब (उस समय) तात्त्विक दृष्टि की अपेक्षा से ज्ञान, ज्ञेय आदि किसी का भी स्वभावतः अस्तित्व सम्भव नहीं है।

इस प्रकार सम्पूर्ण प्राणियों की चित्तसन्तति में विद्यमान क्लेश (राग, द्वेष) रूपी रोगों का निवारण करने के लिए परम भिषगराज शाक्यसिंह ने सभी धर्मों को माया, मरीचि आदि दृष्टान्त द्वारा निःस्वभाव कह कर जिस सद्धर्म की देशना की है, वह (सद्धर्म) सभी कुदृष्टियों (रोगों) के निवारण हेतु परम औषधि है। भगवान् ने जिस निःस्वभावता की विस्तारपूर्वक देशना की है, वह परम तत्त्व है। अतः भवग्राह (भावाभिनवेश अर्थात् वस्तुओं की सत्ता के प्रति आग्रह) से ग्रस्त लोगों की सन्तति में विद्यमान क्लेशरूपी रोगों की शान्ति की वह उत्तम चिकित्सा है।

इस प्रकार उस तत्त्व (निःस्वभावता) का उपदेश देना त्रिविध दानों में परम विशिष्ट दोषरहित, निर्मल धर्मदान ही है। इसीलिए सर्वदा अविचिच्छन्न रूप से आपने तीनों लोकों में संगृहीत समस्त जगत् के दोषों और क्लेशों को जलाकर समूल उच्छेद करनेवाले धर्मयज्ञ का अनुष्ठान किया है। अतः आप धर्मयाज्ञिक हैं। इसी तरह भवग्राह अर्थात् वस्तुग्राह से भयभीत, व्याकुल लोगों को भय से निर्मुक्त करने वाले और कुतैर्थिक (बौद्ध मत को न मानने वाले) लोगों को भयभीत करनेवाले नैरात्म्य रूपी अद्भुत सिंहनाद का आपने दर्शों दिशाओं में गर्जन किया



है। जागतिक रोग और दुःख को शान्त करने की उपायभूत बुद्धशासनामृत रूपी सद्धर्मसम्पत्ति का बिना भेदभाव आपने वितरण किया है। वह (सद्धर्मसम्पत्ति) तो सभी धर्मों की यथार्थ-स्थिति अर्थात् शून्यता ही है तथा वही नीतार्थ है अर्थात् उसे यथाशब्द (शब्दशः) स्वीकार किया जा सकता है—ऐसा भगवान् ने विनेय जनों को आश्वस्त किया है।

इसी प्रकार बाह्य-आभ्यन्तर सभी धर्मों के उत्पाद, निरोध आदि तथा सत्त्व, जीव आदि की जो देशना है, वह संवृति या व्यवहार के वश से की गई है अर्थात् वह नेयार्थ देशना है। तात्पर्य यह है कि उसका विनेय जनों को संसार से विमुख कर धर्माभिमुख करने के लिए संवृत्या (नेयार्थ के रूप में) प्रतिपादन किया गया है।

नेयार्थ और नीतार्थ धर्मों के उपदेष्टा भगवान् बुद्ध न केवल अतिगम्भीर और उदार इन दो सत्त्यों में या उपाय और प्रज्ञा में अथवा दो सम्भारों में संगृहीत गम्भीर प्रज्ञापारमिता रूपी महासागर से ही पारंगत हैं, अपितु उदार, उपाय या पुण्यसम्भाररूपी गुणरत्नों से भी सुसम्बद्ध हैं। अतः नाथ (भगवान् तथागत) आप दो सम्भारों में संगृहीत समस्त गुणों से पूर्णतया सुसम्पन्न, पारंगत और अद्वितीय (एकमात्र) शरण हैं।

अतः जिसकी तुलना किसी से नहीं की जा सकती, ऐसे अनिदर्शन, जिनके गुणों की इयत्ता साधारण जनों की गोचर नहीं है, इस प्रकार अचिन्त्य और स्तुतियोग्य जगन्नाथ भगवान् तथागत आपकी मेरे (आचार्य नागार्जुन) द्वारा जो श्रद्धा और उत्साह के साथ स्तुति की गई है, उससे जो पुण्य प्राप्त हुआ है, उस (पुण्य) से समस्त जगत् (प्राणिमात्र) सम्यक्सम्बुद्ध के समान हो जाए—ऐसा प्रणिधान और परिणामना की गई है और इसी के साथ ग्रन्थ समाप्त होता है।

#### ४. परमार्थस्तव का सारांश

लोकातीत और लोकान्तर्गत किसी भी धर्म का स्वभावतः सिद्ध न उत्पाद है और न भङ्ग है, अतः हे नाथ, आप भी स्वभावतः अनुत्पन्न और अनिरुद्ध हैं तथा सभी लौकिक उपमाओं से अतीत और शब्द तथा कल्पनाओं की गोचरता से भी सर्वथा (अत्यन्त) अतीत हैं। अतः ऐसी स्थिति में आपकी कैसे स्तुति की जा सकती है? अर्थात् स्तुति करना अत्यन्त कठिन है।



तथागत का यथार्थ स्वरूप जैसा भी हो, उस यथार्थ स्थिति (तथता) के साक्षात् द्रष्टा आचार्य नागार्जुन के अधिगमज्ञान के द्वारा लोक में जैसे प्रज्ञप्ति या व्यवहार किया जाता है, उस अवस्था में स्थित रहते हुए उस तथतास्वरूप तथागत की परम श्रद्धा के साथ स्तुति की जाएगी—ऐसा उपोद्घात किया गया है।

जिस प्रतीत्यसमुत्पाद में सांवृतिक दृष्टि से उत्पाद, भङ्ग, शाश्वतता (निरन्तरता), उच्छेद, नित्यता, अनित्यता, विभिन्नवर्ण, ह्रस्व, दीर्घ आदि परिमाण आदि का यद्यपि ग्रहण किया जाता है, फिर भी निरुत्तर शास्ता भगवान् बुद्ध के अनास्रव समाहित ज्ञान के सम्मुख या उसके विषय की दृष्टि से उत्पाद आदि नहीं होते हैं, अतः अनुत्पाद आदि को उस (प्रतीत्यसमुत्पाद) के विशेषण के रूप में जोड़ा गया है। उस अनास्रव समाहित ज्ञान के विषय को अधिकृत करके हे मुनीन्द्र, आपने गमन, आगमन आदि नहीं हैं—ऐसा कहा है। उसी प्रकार भाव, अभाव, नित्य, अनित्य आदि द्वैत प्रपञ्च भी उस ज्ञान के विषय के रूप में नहीं हैं। उसी प्रकार रक्त, हरित, आदि वर्ण-प्रपञ्च, महान्, ह्रस्व आदि परिमाण (आकार), आकाश, पाताल, संस्कृत, असंस्कृत, संसार, निर्वाण आदि भी परमार्थतः स्थित नहीं हैं।

उपर्युक्त उत्पाद, निरोध आदि ये सब व्यवहार में विद्यमान हैं, अतः 'आर्यज्ञान की दृष्टि से' इस विशेषण को जोड़े विना निषेध करना युक्त नहीं है। 'आर्यज्ञान की अपेक्षा से' जो यह विशेषण जोड़ा गया है, वह मूलमाध्यमिक-कारिका की आचार्य चन्द्रकीर्ति कृत टीका (प्रसन्नपदा) के अभिधेय को जो आचार्य चोंखापा ने अपनी महाटीका में सुस्पष्ट निरूपित किया है, उसी के आधार पर यहाँ उसका उल्लेख किया गया है और उसका अनुसरण किया गया है।

धर्मधातु (शून्यता) से अविचलित, अतिगम्भीर धर्मकाय को प्राप्त हे नाथ, आपको काय, वाक्, चित्त (तीन द्वारों) से आदरपूर्वक नमन करते हुए अनास्रव समाहित ज्ञान के विषय अर्थात् परम गम्भीर परमार्थ के रूप में आपकी स्तुति की जाए अथवा चाहे द्वैताभासी बुद्धि के विषय अर्थात् स्वभावतः सिद्ध के रूप में आपकी स्तुति की जाय। किन्तु द्वैताभासी बुद्धि के स्वतः सिद्ध विषय के रूप में आप विद्यमान नहीं हैं। सभी धर्म शून्य हैं, फलतः कौन स्तुत होता है और किसके द्वारा स्तुति की जाती है? अतः स्वतः सिद्ध के रूप में आपकी श्रद्धावान् किसी स्तुतिकर्ता के द्वारा स्तुति करना सम्भव नहीं है। क्योंकि स्वभावतः सिद्ध के

रूप में उत्पाद, भङ्ग, आदि, मध्य, अन्त, ग्राह्य, ग्राहक, गमन, आगमन आदि द्वैतों से आप रहित हैं।

अथवा प्रसन्नपदा के अभिधेय के अनुसार अनास्रव, समाहित ज्ञान के विषय के रूप में, जो उपर्युक्त सभी द्वैतों से रहित है, उस स्वरूप में स्तुति की जाए, किन्तु अविद्या तिमिर के द्वारा जिनका बुद्धिरूपी चक्षु ग्रस्त है, उन लोगों के द्वारा समुचित रूप से यथावत् स्तुति कर पाना सम्भव नहीं है।

परम गम्भीर तथता के अर्थ को यथावत् जाननेवाले निर्मलज्ञानचक्षुष्क आचार्य नागार्जुन द्वारा परमार्थ अर्थात् यथास्थिति के अनुरूप भगवान् तथागत की जो स्तुति की गई है, उससे प्राप्त पुण्य के द्वारा जगत् का अविद्यातिमिर से ग्रस्त बुद्धि रूपी चक्षु विनष्ट हो जाए और वह तत्त्व का यथावत् बोध कर तथागत लोक में पहुँच जाए—ऐसा प्रणिधान करते हुए परमार्थस्तुति समाप्त होती है।

॥ भवतु सर्वमङ्गलम् ॥



(Abbreviations)

CABATON - Catalogue Sommaire des Manuscrits Sanscrits et Palis de la Bibliotheque Nationale, Par A. Cabaton, Ier Facicule. Manuscripts Sanscrits, Paris 1907.



मूलग्रन्थः गण्डर्वदसगवि।

आचार्य नागार्जुन-प्रणीतः

चतुःस्तवः

( संस्कृत मूल, भोटपाठ एवं हिन्दी अनुवाद सहित )

ॐ। ग्लेक'प'सुव'परि'दवद'प'ल'अव'अ'ग्लेक'द'केक'असुद'गसुद'स'  
परि'ग्लेक'स'ग्लेक'परि'ग्लेक'प'क'अ'प'गवि'  
विष'पु'व'गविष'स॥

अद'प'प'— वदग'केक'केक'प'अदग'स'प'ग्लेक'ग

( ल'प'सु'क'गण्डर्वद'सु'प'द'अद'द'केक'ग्लेक'प'क'सु'स )

अहो बुद्धनयं दिव्यमहो बोधिनयोत्तमम् ।  
अहो धर्मनयं शान्तमहो मन्त्रनयं दृढम् ॥

( गुह्यसमाजतन्त्रम्, पटल-१३, पृ० ४८ )

ཞེ་མའོ་སངས་རྒྱལ་ཚུལ་རེ་བཟང་།     |

ཞེ་མའོ་བྱང་ཆུབ་ཚུལ་གྱི་མཆོག།     |

ཞེ་མའོ་ཚོས་གྱི་ཚུལ་རེ་ཞི།     |

ཞེ་མའོ་ལྷགས་གྱི་ཚུལ་རེ་བདུན།     |

གསང་འདུས་ཅ་རྒྱུ། (རྒྱུ། 'ཅ' ११३)

शास्तारं प्रणिपत्य गौतममहं तद्धर्मतावस्थितान्  
सम्बुद्धान् सकलं जिनात्मजगणं धर्मं च तैर्भाषितम् ।  
चक्षुर्भूतमनन्तबुद्धवचनस्यालोचने देहिनाम्  
योऽमुं मध्यमकं चकार कृपया नागार्जुनस्तं नमो ॥

( चन्द्रकीर्तिकृतायाः प्रसन्नपदाया अन्तिमांशभूता  
मध्यमकशास्त्रस्तुतिः, पृ० १५५ )

རྫོག་པ་གོ་དམ་དང་ནི་དེའི་ཚོས་ལ་ཉུགས་་་

་་་ཇོགས་པའི་སངས་རྒྱལ་མཐའ་དག་དང་།

རྒྱལ་པའི་སྤྲས་པོའི་ཚོགས་དང་དེ་དག་གིས་གསུངས་་་་

་་་ཚོས་ལ་ལྷག་འཆལ་ནས།

སངས་རྒྱལ་གསུང་མཐའ་ཡས་ལ་བལྟ་ཕྱིར་་་

་་་ལུས་ཅན་རྣམས་གྱི་མིག་གྱུར་དབུ་མ་ནི།

གང་གི་ཐུགས་ཐེའི་རྫོགས་མཛད་པའི་་་

་་་ཁྱེ་སྤྱོད་དེ་ལ་བདག་ནི་ལྷག་འཆལ་ལོ།

(དབུ་མ་ཆོག་གསལ་གྱི་མཛད་བྱང་གི་ཆ་གས། དབུ་མ། 'འ' १००)

आचार्यनागार्जुनविरचितः

## चतुःस्तवः

ॐ । वदन्ति ते केशिनां शृङ्गाणां शृङ्गाणां मन्दं पतिं  
वदन्ति ते केशिनां शृङ्गाणां शृङ्गाणां मन्दं पतिं  
वदन्ति ते केशिनां शृङ्गाणां शृङ्गाणां मन्दं पतिं

## लोकातीतस्तवः

नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय

नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय  
नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय  
नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय

लोकातीत! नमस्तुभ्यं विविक्तज्ञान<sup>1</sup>वेदिने ।  
यस्त्वं जगद्धितायैव खिन्नः करुणया चिरम् ॥ १ ॥

नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय ।  
नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय ।  
नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय ।  
नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय ।



हे लोकातीत, विविक्त (शून्यता) ज्ञान को जाननेवाले आपको नमस्कार है। जो आप करुणा की वजह से जगत् के हित के लिए ही हमेशा खिन्न रहते हैं।

स्कन्धमात्रविनिर्मुक्तो न सत्त्वोऽस्तीति ते मतम्<sup>१</sup> ।  
सत्त्वार्थं च परं<sup>२</sup> खेदमगमस्त्वं महामुने ॥ २ ॥

सुद'प्य'उम'लस'स्य'व'पि<sup>३</sup> ।  
सिमस'उक'मेद'पर'सुद'वलेद'पि ।  
सिमस'उक'देक'ललद'मक'स'गले'व'पर ।  
सुव'प'केक'प्य'सुद'देद'लुपस<sup>४</sup> ।<sup>३</sup>

स्कन्धों से निरपेक्ष (कोई) सत्त्व नहीं है—ऐसा आपका मत है, फिर भी महामुनि, आप प्राणियों के हित के लिए अत्यन्त खिन्नता को प्राप्त हैं।

तेऽपि स्कन्धास्त्वया धीमन् धीमदभ्यः सम्प्रकाशिताः ।  
माया-मरीचि-गन्धर्वनगर-स्वप्नसन्निभाः ॥ ३ ॥

सु'लक'सुद'प्य'सुद'दे'पि ।  
सु'म'सि'सु'दे'प'पि ।  
सु'द'सु'र'म'ल'दे'प'लेक'दु ।  
सु'लक'क'स'ल'पर'दु'प'पि ।<sup>३</sup>

- 
१. ख, ग-तेन तम ।
  २. क, ख, घ-परिखेद० ।
  ३. लपस'सु'र'ल'क' "सुद'प्य'उम'लस'क'स्य'व'पि" । लि'स'स'ल'प'पि ।
  ४. प' प'स'र'सि'स' - प'प'स' ।







वेदनीय (अनुभव के विषय) के बिना वेदना नहीं होती। अतः वेदना निरात्मक (निःस्वभाव) है और वह वेद्य (वेदनीय) भी स्वभावतः विद्यमान नहीं है—ऐसा आपका निश्चित मत है।

संज्ञार्थयोरनन्यत्वे मुखं दह्येत<sup>१</sup> वह्निना ।  
अन्यत्वेऽधिगमाभावस्त्वयोक्तं<sup>२</sup> भूतवादिना ॥ ७ ॥

མིང་དང་དོན་དག་པ་དང་མིན།

མེ་ཡིས་ཁ་ཉིད་འཛིག་ཟམ་འགྲུར།

གཞན་ཀྱང་རྟོགས་པ་མེད་འགྱུར་ཞེས།

བདེན་པར་གསུངས་པ་ཁྱོད་ཀྱིས་བསྟན། །ལ

नाम और अर्थ के अभिन्न होने पर अग्नि का उच्चारण करने से मुख जलने लगेगा तथा (नाम और अर्थ के) भिन्न होने पर (सम्बन्ध नहीं रहने से नाम के द्वारा अर्थ के) बोध का अभाव होगा—ऐसा यथार्थवादी आपके द्वारा कहा गया है।

कर्ता स्वतन्त्रः कर्मापि त्वयोक्तं व्यवहारतः<sup>5</sup> ।  
परस्परापेक्षिकी तु सिद्धिस्तेऽभिमतानयोः ॥ ८ ॥

བྱེད་པོ་རང་དབང་ཉིད་ལས་ཀྱང་།<sup>6</sup> །

ཐ་སྙད་དུ་ནི་བྱོད་གྱིས་བསྟན།

1. घ-दह्यते।

2. क, ख-वर्तो ।

3. गङ्गा अरु खेय

4. བོད་འགྱུར་རྒྱམས་སྤྱ ཁྱོད་པ་མེད། ཅེས་གསལ་ཡང་འབྲེགས་སྤྱར་ལྟར་ན་བོད་གསལ་ལྟར་ཡོད།

5. घ-हरितः।

6. ལྷ་ དེ། གསེར་བྱིས། - ཉིད་ལས་ཉིད།

ཕན་ཚུན་ལྟོས་པ་ཅན་ཉིད་དུ། ।

གུལ་པར་ཁྱོད་ནི་བཞིན་པ་ལགས། १ ।

(हे भगवन्) आपने स्वतन्त्र कर्ता और कर्म का भी अस्तित्व व्यवहारतः (ही) कहा है। इन (कर्ता और कर्म) दोनों की सिद्धि परस्पराश्रित है—ऐसा आपको इष्ट है।

न कर्ताऽस्ति न भोक्ताऽस्ति पुण्यापुण्यं प्रतीत्यजम् ।

यत् प्रतीत्य न तज्जातं प्रोक्तं वाचस्पते त्वया ॥ ९ ॥

ཁྱེད་པོ་ཡིད་མིན་སྟོད་པོ་འང་མེད། ।

བསྟོན་ནམས་དེ་མིན་དེན་འབྲེལ་སྟེས། ।

དེན་ནས་སྟེས་ཀྱང་མ་སྟེས་ཞེས། ।

ཆིག་གི་དབང་པོ་ཁྱོད་ཀྱིས་གསུང་ས། ५ ।

(स्वभावतः) कर्ता नहीं है और भोक्ता (भी) नहीं है। पुण्य और पाप (कर्म) हेतु-प्रत्यय की अपेक्षा से उत्पन्न (प्रतीत्यसमुत्पन्न) हैं। जो हेतु-प्रत्यय की

1. ཆིག་གི་དབང་པོ་ཁྱོད་ཀྱི་སྟོད་འབྲེལ་འབྲེལ་པར་ཁྱེད་ཀྱི་ཡིད་མིན་མེད་པ་ལྟར་ན།  
“ཁྱེད་པོ་འང་དབང་པོ་མེད་ཀྱང་ནི། །ཐ་སྟོན་དུ་ནི་ཁྱོད་ཀྱིས་གསུང་ས། །ཕན་ཚུན་ལྟོས་ནས་གུལ་  
པ་ནི། །གཉིས་པོ་དེ་དག་བཞིན་པ་ཡིན།” ཞེས་གསལ་བས་འགྱུར་བྱུང་ཆེ། (དབུ་མ། ‘ལ’  
३३५)
2. བོ། གསེར་བྱིས། — པའང་མེད་
3. ལྟོ། བོ། གསེར་བྱིས། — བདེན་ནས་
4. ལྟོ། — སྟོད་ཅེས་
5. ཆིག་གི་དབང་པོ་ཁྱོད་ཀྱི་སྟོད་འབྲེལ་དུ། “ཁྱེད་པོ་ཡིད་ཅེང་ཟ་བ་མེད། །བསྟོན་ནམས་  
ཡིད་མིན་ཞེན་འབྲེལ་བ། །དེན་ནས་འབྲེལ་བ་མ་སྟེས་ཞེས། །ཆིག་གི་དབང་པོ་ཁྱོད་ཀྱིས་  
གསུང་ས།” ཞེས་གསལ་བས་འགྱུར་བྱུང་ཆེ། (དབུ་མ། ‘ལ’ ३३५)

















इसलिए (हे भगवन्) आपने इस जगत् को विकल्प (कल्पना) से उत्पन्न, असद्भूत (अवास्तविक) एवं (वस्तुतः) अनुत्पन्न (ही) जाना है। (अतः उत्पाद न होने से वह जगत्) नष्ट नहीं होता है। (अर्थात् जगत् का न उत्पाद है और न निरोध होता है)।

नित्यस्य संसृतिर्नास्ति नैवानित्यस्य संसृतिः ।

स्वप्नवत् संसृतिः प्रोक्ता त्वया तत्त्वविदांवर ॥ २० ॥

རྟག་ལ་འཁོར་བ་ཡོད་མ་ཡིན།

མི་རྟག་པ་ལའང་འཁོར་བ་མེད།

དེ་ཉིད་རིག་པའི་མཆོག་ཁྱོད་ཀྱིས།

འཁོར་བ་མི་ལམ་འདྲ་བར་གསུངས།<sup>1</sup> 130

नित्य (वस्तु) का संसरण (गतिशीलता) नहीं होता और न तो अनित्य (वस्तु) का संसरण सम्भव है। इसलिए हे तत्त्वद्रष्टाओं में श्रेष्ठ, आपने संसार को स्वप्न के समान कहा है।

स्वयंकृतं परकृतं द्वाभ्यां कृतमहेतुकम् ।

तार्किकैरिष्यते दुःखं त्वया तूक्तं प्रतीत्यजम् ॥ २१ ॥

ལྷན་པ་ལྟེན་པ་རང་གིས་བྱས་པ་དང་།

གཞན་གྱིས་བྱས་དང་གཉིས་ཀས་བྱས།

ཐུ་མེད་པར་ནི་རྟོག་གི་འདོད།

ཁྱོད་ཀྱིས་དེ་ཀ་ནས་འབྱུང་བར་གསུང་ས།<sup>2</sup> །༣༡

1. ཆིགས་བཅད་འདི་ཡང་རྩོད་འགྲེལ་ལེགས་སྒྲུབ་ཏུ་གསལ་ཡོད་ཀྱང་བོད་འགྱུར་རྣམས་སྐུགས་ལ་  
མེད།

2. ཆིགས་བཅད་འདི་སློབ་དཔོན་ཟླ་བའི་ཆིགས་གསལ་དུ་གསལ་ཡང་འབྱུང་ཁྱད་མི་ཆེ། (དབུ་མ་  
'འ' ༡༥, ༥༠)







हे नाथ, आपने सभी धर्मों को निरीह (तुच्छ) पराधीन, शून्य, माया की भाँति प्रतीत्यसमुत्पन्न एवं निःस्वभाव प्रकाशित किया है।

न त्वद्योत्पादितं किञ्चिन्न<sup>१</sup> किञ्चिच्च निरोधितम् ।  
यथा पूर्वं तथा पश्चात् तथतां बुद्धवानसि ॥ २५ ॥

स्रुद'ग्रीष'तुद'विष'म'पञ्चेद'उद' । ।  
२५२'५८'२५५'प'म'म'कैष'५ । ।  
स्रुद'ग्रीष'तुद'विष'म'पञ्चेद'उद' । ।  
दे'पविद'उद'वि'पुष'स'सु'कुद' । । ॥ २५ ॥

आपके द्वारा (मतानुसार) न कुछ उत्पादित किया जाता है और न कुछ निरुद्ध किया जाता है। जैसे पूर्व में है, वैसे ही पीछे भी है—ऐसी (अविकार-स्वभाव) तथता को आपने जाना है।

आर्यैर्निषेवितामेना<sup>२</sup>मनागम्य हि भावनाम् ।  
ना<sup>३</sup>निमित्तस्य विज्ञानं भवतीह कथञ्चन ॥ २६ ॥

२५५५'प'म'प'कैष'प'२५५'प' । ।  
२५५'प'म'प'कैष'प'२५५'प' । ।

स्रुद'ग्रीष'कैष'कैष'कैष' । २५५'प'म'प'कैष'प'२५५'प' । । विष'म'प'म'प'कैष'प'२५५'प' । ।  
मैक'दु'कै । (२५५'प' २५५) दे'पविद'उद'वि'पुष'स'सु'कुद' । । २५५'प'म'प'कैष'प'२५५'प' । ।  
२५५'प'म'प'कैष'प'२५५'प' । । विष'म'प'म'प'कैष'प'२५५'प' । । २५५'प'म'प'कैष'प'२५५'प' । ।  
मैक'दु'कै । (२५५'प' २५५) दे'पविद'उद'वि'पुष'स'सु'कुद' । । २५५'प'म'प'कैष'प'२५५'प' । ।

१. ग-किञ्चिन्न चा ।
२. ख, ग-०मेताम् ।
३. क, ख, ग-अनिमि० ।





अनिमित्त (शून्यता) की अपेक्षा किए बिना मोक्ष नहीं होता—ऐसा आपने कहा है। इसलिए आपने महायान में उसे विस्तारपूर्वक दिखाया है।

यदवाप्तं<sup>१</sup> मया पुण्यं स्तुत्वा त्वां स्तुतिभाजनम् ।  
निमित्त<sup>२</sup>बन्धनापेतं भूयात् तेनाखिलं जगत् ॥ २८ ॥

पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं ।  
पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं ।  
दशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं ।  
महद्विंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं ॥ २८ ॥

(हे भगवन्) स्तुतियोग्य आपकी स्तुति करके मैंने जो पुण्य अर्जित किया है, उसके फलस्वरूप यह सम्पूर्ण जगत् निमित्त रूपी बन्धनों से रहित (मुक्त) हो जाए।

॥ लोकातीतस्तवः समाप्तः<sup>३</sup> ॥

दशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं ।  
पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं ।  
पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं ।  
पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं पञ्चदशविंशतिं ।

1. ग,घ-यदवाप्तं ।

2. घ-निमित्तं ।

3. घ-प्रथम खण्डे लोकातीतस्तव समाप्तः, ग-इति लोका० ।

निरौपम्यस्तवः

དཔེ་མེད་པར་བསྟོད་པ།

नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय

འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་གཞིན་རྒྱུ་པ་ལ་ཕྱག་འཆལ་ལོ།

निरौपम्य नमस्तुभ्यं निःस्वभावावार्थवादिने ।

यस्त्वं दृष्टिविपन्नस्य लोकस्यैव हितोद्यतः ॥ १ ॥

གང་ཞིག་ལྟ་བུས་ཕྱོང་ས་པ་ཡི།

འཇིག་རྟེན་འདི་ལ་ཕན་བཅུན་བྱིད། །

དངོས་པོ་མེད་པའི་དོན་རིག་པས།<sup>1</sup>     |

དཔེ་མེད་བྱིད་ལ་ཕུག་འཆལ་བསྟོད། །

जो आप दृष्टिविपन्न (मिथ्या दृष्टि वाले) लोक के हित के लिए ही (सदा) तत्पर हैं, हे निरुपम (उपमारहित), (सभी) वस्तुओं को निःस्वभाव कहनेवाले आपको (हमारा) प्रणाम है।

न च नाम त्वया किञ्चिद् दृष्टं बौद्धेन चक्षुषा ।

अनुत्तरा च ते नाथ दृष्टिस्तत्त्वार्थदर्शिनी ॥ २ ॥

ལང་ཞིག་ཁྱོད་ཀྱིས་རུང་ཞིག་ཀྱང་། །

སངས་རྒྱལ་སྤྱན་དྲིས་མ་གཟིགས་པ། །

1. རེགས་ཕྱིར་ལྷུང་ན་ཆེག་རྒྱུ་པ་ “རང་བཞིན་མེད་པའི་དོན་གསུངས་པ།” །ཞེས་གསལ་ཡོད།



पुनः पुनः विचारः यः सः सः सः ।<sup>१</sup> ।

देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि ।<sup>२</sup>

आपने बुद्धचक्षु के द्वारा कुछ (वस्तु) भी (स्वभावतः सत्) नहीं देखा है।  
(इसलिए) हे नाथ, तत्त्व का साक्षात् करनेवाली आपकी दृष्टि (प्रज्ञा) अनुत्तर  
(सर्वश्रेष्ठ) है।

न बोद्धा न च बोद्धव्यमस्तीह परमार्थतः ।

अहो परमदुर्बोधां धर्मतां बुद्धवानसि ॥ ३ ॥

देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि ।

देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि ।

देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि ।

देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि ।

यहाँ (इस लोक में) परमार्थतः न कोई बोद्धा अर्थात् ज्ञाता है और न  
कोई बोद्धव्य अर्थात् ज्ञेय (ज्ञान का विषय) है। आश्चर्य है, अपने परम दुर्बोध  
धर्मता (शून्यता) का अवबोध किया है।

न त्वयोत्पादितः<sup>३</sup> कश्चिद् धर्मो नापि निरोधितः ।

समतादर्शनेनैव प्राप्तं पदमनुत्तरम्<sup>४</sup> ॥ ४ ॥

पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः ।

देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि देहि ।

१. विचारः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः "मार्गः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः" विचारः पुनः पुनः

२. देहि - देहि देहि देहि

३. घ-तं।

४. ख-त्तमम्।

མཉམ་པ་ཉིད་ཀྱི་ལྷ་བ་ཡིས།

སྒྲ་ན་མེད་པའི་གོ་འཕང་བརྟེན།

(हे भगवन्) आपने किसी (स्वभावतः सत्) धर्म का न उत्पाद किया है और न (उसका) निरोध किया है। (सभी धर्मों में विद्यमान इस) समता (निःस्वभावता) के दर्शन के कारण (आपने) अनुत्तर (बुद्धत्व) पद प्राप्त किया है।

न संसारापकर्षेण<sup>१</sup> त्वया निर्वाणमीप्सितम् ।  
शान्ति<sup>२</sup>स्तेऽधिगता नाथ संसारानुपलब्धितः<sup>३</sup> ॥ ५ ॥

འཁོར་བ་སྤངས་པར་གྱུར་པ་ཡིས།

ལྷ་ངན་འདས་ཁྱོད་མི་བཞིན་གྱིས།<sup>4</sup>

འཁོར་བ་མ་དམིགས་པ་ཉིད་ཀྱི།

ཞི་དེ་མགོན་པོ་ཕྱིད་ཀྱིས་རྟོགས། 5 །ཡ

आपने संसार के अपकर्ष (प्रहाण) से निर्वाण की चाह नहीं की है, (अपितु) हे नाथ, संसार की (स्वभावतः) अनुपलब्धि के द्वारा आपने शान्ति (अप्रतिष्ठित निर्वाण) का अधिगम किया है।

त्वं विवेदैकरसतां संक्लेशव्यवदानयोः ।  
धर्मधात्वविनिर्भेदाद् विशुद्धश्चासि सर्वतः ॥ ६ ॥

ཁྱེད་ཀྱིས་ཀློན་ནས་ཉོན་མོངས་དང་།

རྒྱལ་གུང་འོ་གཅིག་གྲུར་རིག་པས།

1. क, ख, घ-संसारात्प्रकर्षेण ।

2. घ-शान्त० ।

3. क, ख, घ-संसारानपराधितः।

4. ਨਿ ਓ - ਮੇ

5. ཆིགས་བཅད་འདིའི་ལེགས་སྤྱར་སྐད་འཁོར་ལཱ་གིས་ཁག་གསུམ་ནང་མ་དག་པ་རྒྱུན་ཆིག་ཡོད།





हे प्रभो, आपने (कहीं भी) कुछ भी, एक अक्षर भी नहीं कहा है, फिर भी आपने सम्पूर्ण विनेयजनों को धर्म (उपदेश) की वर्षा से तृप्त किया है।

न तेऽस्ति सक्तिः स्कन्धेषु न धात्वायतनेषु च ।  
आकाशसमचित्तत्वं सर्वधर्मेषु निश्चितः<sup>१</sup> ॥ ८ ॥

आमरन्दं मङ्गलं पतिं सुवर्णं मन्दं प्रियं ।  
धुन्दं पितृमन्त्रं दन्दं श्लोकं मन्दं ॥  
कर्मणं पदं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥  
कर्मणं कर्मणं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥<sup>२</sup> ॥५॥

(हे नाथ) आपकी (पाँच) स्कन्धों, (बारह) आयतनों एवं (अठारह) धातुओं में (कुछ भी) आसक्ति नहीं है। आप सभी धर्मों में आकाश के समान (निर्विकार) चित्त वाले होते हुए आश्रित हैं।

सत्त्वसंज्ञा च ते नाथ सर्वथा न प्रवर्तते ।  
दुःखात्तेषु<sup>३</sup> च सत्त्वेषु त्वमतीव कृपात्मकः ॥ ९ ॥

मर्मणं प्रियं सौम्यं उक्तं मन्दं मन्दं ॥  
मन्दं पदं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥

1. भोट पाठे-अनिश्चितः।

2. श्लोकं मन्दं पदं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥ "कर्मणं कर्मणं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥" श्लोकं मन्दं पदं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥ "कर्मणं कर्मणं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥" श्लोकं मन्दं पदं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥ "कर्मणं कर्मणं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥" श्लोकं मन्दं पदं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥ "कर्मणं कर्मणं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥" श्लोकं मन्दं पदं गुरुं पदं मन्दं मन्दं ॥

3. ग-दुःखात् तेषु।









यह जगत् एकत्व (अभेद) और अन्यत्व (भेद) से रहित है, प्रतिश्रुत्का (प्रतिध्वनि) के समान है तथा (परमार्थतः) संक्रान्ति (उत्पत्ति) और नाश (क्षय) से रहित है—ऐसा हे अनिन्दित, आपने जाना है।

शाश्वतोच्छेदरहितं लक्ष्य<sup>१</sup>लक्षणवर्जितम् ।  
संसारमवबुद्धस्त्वं स्वप्नमायादिवत् प्रभो ॥ १४ ॥

५५० ५५० ५५० ५५० ५५० ।  
५५० ५५० ५५० ५५० ५५० ।  
५५० ५५० ५५० ५५० ५५० ।  
५५० ५५० ५५० ५५० ५५० ।

यह संसार स्वप्न और माया के समान शाश्वत (नित्य) और उच्छेद—इन दोनों अन्तों से रहित है तथा लक्ष्य और लक्षण से विरहित है—ऐसा हे प्रभो, आपने जाना है।

वासनामूलपर्यन्ताः<sup>४</sup> क्लेशावद्या<sup>५</sup> विनिर्जिताः<sup>६</sup> ।  
क्लेशप्रकृतितश्चैव त्वयामृतमुपार्जितम् ॥ १५ ॥

१. ग-लक्ष।
२. ५५० ५५० ५५० ५५० ५५० । “५५० ५५० ५५० ५५० ५५०” ५५० ५५० ५५० ५५० ५५० । ५५० ५५० ५५० ५५० ५५० । ५५० ५५० ५५० ५५० ५५० । ५५० ५५० ५५० ५५० ५५० ।
३. ५५० ५५० ५५० ५५० ५५० । “५५० ५५० ५५० ५५० ५५०” ५५० ५५० ५५० ५५० ५५० । ५५० ५५० ५५० ५५० ५५० । ५५० ५५० ५५० ५५० ५५० । ५५० ५५० ५५० ५५० ५५० ।
४. घ-पर्यन्तोः।
५. ग-क्लेशास्तेनद्या।
६. ग,घ-निर्जिताः।

ཉེན་མོངས་སྤྲིག་པའི་གཞིར་གྱུར་པའི། ।

མཐར་ཐུག་བག་ཆེད་ཀྱན་ལས་སྒྲུལ༥ ।

ཉེན་མོངས་ཉིད་ཀྱི་རང་བཞིན་ཡང་། ।

ཁྱོད་ཀྱིས་བདུད་ཅི་ཉིད་དུ་བསྒྲུབས༥ । १॥

क्लेश और अवद्य को मूलभूत वासना के साथ (आपने) पराजित (प्रहाण) कर दिया है। क्लेश के स्वभाव से भी आपने अमृत ग्रहण कर लिया है।

अलक्षणं त्वया धीर<sup>२</sup>दृष्टं रूपमरूपवत् ।

लक्षणोज्ज्वलगात्रश्च दृश्यसे रूपगोचरे ॥ १६ ॥

དཔའ་པོ་ཁྱོད་ཀྱིས་འགྲུགས་ནམས་ཀྱི། ।

མཆན་མ་མེད་མཐོང་གཟུགས་མེད་བཞིན༥ । १॥

1. བོད་འགྱུར་སྤྲིག་པ་ནམས་སུ་ཆེག་ཀྱང་དང་པོ་གཉིས་ “བག་ཆགས་གཞིར་གྱུར་མཐར་ཐུག་པའི༥ ཁྱོད་ཀྱིས་ཉེན་མོངས་སྤྲིག་པ་སྤངས༥” ཞེས་གསལ་ཡང་ལྷགས་སྒྲུར་ལྟར་ན་གོང་གསལ་ལྟར་བཞོད་དགོས་པར་མངོན་ནོ། །ཆེགས་བཅད་འདི་མཁན་ཆེན་ཞི་བ་འཆོའི་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་གྱུ་པ་ཞེས་བྱ་བའི་རབ་དུ་བྱེད་པ་ལས་ “མགོན་པོ་ཁྱོད་ཀྱིས་ཉེན་མོངས་པ༥ །བག་ཆགས་ཅུ་བའི་མཐར་སྤངས་པ༥ །ཉེན་མོངས་རང་བཞིན་ཉིད་ལས་ནི༥ །ཁྱོད་ཀྱི་བདུད་ཅི་ཉིད་བར་བསྒྲུབས༥” ཞེས་གསལ་བས་འགྱུར་ཁྱོད་ཆེ་ཞིང་གོ་དོན་ཆེས་བཟང་དོ། (རྒྱུད་ ‘ཅུ’ २॥)

2. ग-धीर।

3. ལྷ༥ པལ༥ གསེར་བྱིས༥ - ཁྱོད་ཀྱི

4. ཆེག་ཀྱང་དང་པོ་གཉིས་ “དཔའ་པོ་ཁྱོད་ཀྱིས་གཟུགས་མེད་བཞིན༥ །གཟུགས་ཀྱང་མཆན་ཉིད་མེད་པར་གཟིགས༥” ཞེས་ཀྱང་བཞོད་ཆེག་པར་མངོན་སྤང་བས་དཔྱད་པར་བྱའོ། །བོད་དཔེ་ནམས་སུ་ ‘མཆན་མ་མེད་མཐོང་’ ཞེས་གསལ་ཡང་ལྷགས་སྒྲུར་དུ་ ‘མཆན་ཉིད་མེད་མཐོང་’ ཞེས་གསལ་ཡོད།





षेदं श्वेदं प्रेदं ग्रीष्मं लं भेदं ।  
 पदं दसं पदं पदं भेदं गृहं ।<sup>१</sup>  
 क्कं भवति दसं पदं पदं पदं भेदं गृहं ।<sup>२</sup>  
 प्रेदं ग्रीष्मं क्कं श्वेदं पदं भेदं गृहं ।<sup>३</sup> ॥ १५ ॥

आपके काय (शरीर) में सुषिरता (खोखलापन) नहीं है और न (उसमें) मांस, अस्थि (हड्डी) और रुधिर (खून ही) है। (फिर भी) आकाश में इन्द्रधनुष की तरह आपने (माया) काय को दिखलाया है।

नामयो<sup>४</sup> नाशुचिः काये<sup>५</sup> क्षुत्तृष्णासम्भवो न च ।  
 त्वया लोकानुवृत्त्यर्थं दर्शिता लौकिकी क्रिया ॥ १९ ॥

श्वेदं पदं पदं भेदं पदं भेदं गृहं ।<sup>६</sup>  
 पदं पदं पदं भेदं पदं भेदं गृहं ।  
 प्रेदं क्कं भेदं पदं भेदं पदं भेदं गृहं ।  
 भेदं पदं भेदं पदं भेदं पदं भेदं गृहं ।<sup>७</sup> ॥ १९ ॥

१. श्वेदं पदं पदं भेदं गृहं - गृहं भेदं
२. क्कं भवति दसं पदं पदं भेदं गृहं "क्कं भवति दसं पदं पदं भेदं गृहं" [विशेषणार्थं]
३. क्कं भवति दसं पदं पदं भेदं गृहं "क्कं भवति दसं पदं पदं भेदं गृहं" [विशेषणार्थं]
४. पञ्चक्रम-या।
५. घ-कायो।
६. श्वेदं पदं पदं भेदं गृहं - पदं पदं पदं भेदं गृहं
७. भेदं पदं - पदं (विशेषणार्थं)
८. श्वेदं पदं पदं भेदं गृहं - पदं पदं पदं भेदं गृहं
९. क्कं भवति दसं पदं पदं भेदं गृहं "क्कं भवति दसं पदं पदं भेदं गृहं" [विशेषणार्थं] (कुट्टं भेदं पदं)







हे जिन (विजेता), आपका धर्मकाय नित्य (अक्षय), ध्रुव (स्थिर) एवं शिव (प्रपञ्चरहित) स्वरूप है, फिर भी, विनेयजनों के कल्याण के लिए आपने परिनिर्वाण का प्रदर्शन किया है।

लोकधातुष्वसंख्येषु त्वद्भक्तैः पुनरीक्ष्यसे<sup>1</sup> ।

च्युतिजन्माभिसम्बोधिचक्रनिर्वृतिलालसैः ॥ २३ ॥

གྲངས་མེད་འཛིག་རྟེན་ཁམས་རྣམས་སུ།

འདས་དང་བཟུམས་དང་མཛོན་གྱང་ཆུབ།

འཁོར་བར་<sup>2</sup>ཐར་བར་མེས་རྒྱལ་སྐྱེ།

ཁྱེད་ལ་གུས་རྒྱལ་གྱིས་ཀྱང་མཐོང་། ། ༣༣

असंख्य लोकधातुओं में च्युति (परिनिर्वाण) जन्म, अभिसम्बोधि, (आदि) संसारचक्र से निर्वृत्ति के अभिलाषी आपके भक्तों के द्वारा (ये सब) देखे जाते हैं (अर्थात् आप ये सब लीलाएँ उन्हें दिखाते हैं)।

न तेऽस्ति मन्यना नाथ न विकल्पो न चेद्भ्रना ।

अनाभोगेन ते लोके<sup>४</sup> बुद्धकृत्यं प्रवर्तते ॥ २४ ॥

མགོན་པོ་སེམས་པ་མི་མངའ་ཞིང་།

རྒྱལ་རྟོག་གཡོ་བ་མི་མངའ་ཡང་།

1. घ-क्षसे।

2. ५५। ॐ - नमो भगवते वासुदेवाय ।

3. རྩེ་ འོ་ - རྩེ་ཡང་།

4. घ-लोकै ।







ཉེ་ཀླ་རི་ཀླ་ཡི་རུང་ཚུ་འདེབས་པ་ནས།  
ས་སྤ་ཇ་ཡི་བདེན་གཉིས་དབྱེར་མེད་བར།  
མདོ་སྤགས་བཅུ་དྲུག་ཆ་ཤས་ལས་གྱི་ལུས།  
དཀྱིལ་འཁོར་གཅིག་ཏུ་ཇོགས་ཏེ་སྤགས་མཁར་གསལ།

སྤྱུ་ལུས་སྤྱུ་མའི་སྤང་པོ་བཞིན་གྱུར་ཅིང་།  
འོད་གསལ་འོད་སྤང་ཡལ་བར་ཚོམ་པ་ན།  
ཟུང་བྱ་སྤྱེལ་ཏེ་ཟུང་འཇུག་གནད་དང་བཅས།  
དོ་ཇེ་འཆང་དབང་དོ་ཇེ་འི་ཆོག་གིས་བཀྱལ།  
(རྗེ་གྲང་ཐང་གི་གསུང་འཇམ་མགོན་ཆུལ་བའི་བསྟོད་པ། ཡོད། 'ཇ' 400, 404)

བདེན་གཉིས་གཉིས་སུ་མི་ཕྱིད་སྤྱུ་ལུས་དང་།  
འོད་ཟུང་ཟུང་བྱ་འཇུག་པའི་སྤྱུ་འཕྱལ་གྱིས།  
ཀྱན་བྱལ་བྱལ་བདག་དཔལ་ལྷན་དོ་ཇེ་འཆང་།  
ལེགས་ཐོབ་ཐོབ་བྱའི་འབྲས་བུ་མཐར་ཐུག་ཡིན།

ཀྱན་མཁྱེན་མཁྱེན་རབ་རབ་གསལ་ཉི་མའི་འོད།  
གང་སྤགས་སྤགས་ཇེས་ཇེས་ཆགས་ཆེ་བའི་ཟེར།  
བསྟོད་དབྱངས་དབྱངས་སྒྲོན་སྒྲོན་དབྱར་འཕྱོལ་བ་ཡིས།  
འཕྲོ་ཀྱན་ཀྱན་མཁྱེན་མཁྱེན་བཅའི་དཔལ་ཐོབ་ཤོག།  
(རྗེ་གྲང་ཐང་གི་གསུང་། ཡོད། 'ཇ' 400, 404)

अचिन्त्यस्तवः

བསམ་གྱིས་མི་ཁྱབ་པར་བསྟོད་པ།

नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय

འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་གཞིན་རྒྱུ་པ་ལ་ཕྱག་འཆལ་ལོ།

प्रतीत्यजानां भावानां नैःस्वाभाव्यं जगाद यः ।

तं <sup>१</sup>नमामि सदा<sup>२</sup> बुद्धमचिन्त्य<sup>३</sup>मनिदर्शनम् ॥ १ ॥

གང་ཞིག་དངོས་པོ་རྟོག་འབྱུང་རྣམས། །

ངོ་བོ་མེད་པ་ཉིད་དུ་གསུངས།

ཡེ་ཤེས་མཉམ་མེད་བསམ་མི་བྱེད།

དཔེ་མེད་དེ་ལ་ཕྱག་འཆལ་ལོ། ༡༧

जिसने प्रतीत्यसमुत्पन्न भावों (पदार्थों) की निःस्वभावता का कथन किया है, उस अचिन्त्य और अनुपम (अनिदर्शन) ज्ञान वाले (बुद्ध) को मैं हमेशा नमस्कार करता हूँ।

यथा त्वया महायाने धर्मनैरात्म्यमात्मना<sup>5</sup> ।

विदितं देशितं<sup>६</sup> तद्वत् धीमद्भ्यः करुणावशात् ॥ २ ॥

1. ख-तत्रमामि ।
2. ग-समज्ञानं ।
3. क-त्यनि० ।
4. ཏེ་ཡོད་ཀྱི་ལེགས་སྒྱུར་གྱི་དཔེ་རེ་རྒྱུང་ནང་ 'ཡེ་ཤེས་མཉམ་མེད་' ཅེས་པའི་ཐད་དུ་ 'ནྟག་ཏུ་' ཞེས་པ་གསལ་ཡོད།
5. क,ख-नैरात्म्यं महात्मना ।
6. क,ख-संदेशितं तद् बुद्धि ।



ई'ल्लर'सुँद'गुि'स'घे'क'क'ल्य ।

ॐ'द'गुि'स'क'स'ल'व'द'ग'म'द'द'ग'स' ।

दे'व'कि'क'सुँ'द'द'ल'क'क'स'ल' ।

सु'ग'स'ह'रे'द'व'द'ग'स'व'ल'क'प'र'म'द' । ॥३॥

जैसे भगवन्, स्वयं आपने महायान में धर्मनैरात्म्य को जाना है, (ठीक वैसे ही) करुणा के वशीभूत होकर आपने (उत्तम) बुद्धिमानों के लिए देशना की है।

प्रत्ययेभ्यः समुत्पन्नमनुत्पन्नं त्वयोदितम् ।

स्वभावेन न<sup>१</sup> तज्जातमिति<sup>२</sup> शून्यं प्रकाशितम् ॥ ३ ॥

गु'क'क'स'ल'स'के'द'सुँ'द'ग' ।

म'ल्ल'स'ल'ग'स'प'र'सुँ'द'ग'स'ग'स'द'स' ।

दे'व'ॐ'द'ग'स'दे'म'ल्ल'स' ।

दे'सुँ'द'सुँ'द'प'र'प'र'द'ग'स' । ॥३॥

हेतु-प्रत्ययों से जो उत्पन्न है, उसे आपने अनुत्पन्न कहा है। वह स्वभाव से उत्पन्न नहीं है, इसलिए उसे (आपने) शून्य प्रकाशित किया है।

यद्वत् प्रतीत्यजाच्छब्दात्<sup>३</sup> प्रतिशब्दसमुद्भवः ।

मायामरीचिवच्चापि त्वया भवसमुद्भवः ॥ ४ ॥

ई'ल्लर'दे'क'द'सुँ'द'सुँ'द'ल'स'के' । ॥४॥

सु'ग'ॐ'गु'क'द'सुँ'द'प'र' ।

१. ख-च।

२. ग-तद् जातमिति।

३. ग,घ-यद्वत्च्छब्दं प्रतीत्यजा।

४. दे'द'सुँ'द'सुँ'द'प'र'म'ल्ल'स'सु "ई'ल्लर'दे'क'द'सुँ'द'सुँ'द'ल'स'के" वि'स'ग'स'ल'स' । वि'स'ग'स'ल'स'सुँ'द'सुँ'द'प'र'म'ल्ल'स'सुँ'द'सुँ'द'ल'स'के" ॥



६. ॥ २. ॥ ३. ॥ ४. ॥ ५. ॥ ६. ॥ ७. ॥ ८. ॥ ९. ॥ १०. ॥  
 ११. ॥ १२. ॥ १३. ॥ १४. ॥ १५. ॥ १६. ॥ १७. ॥ १८. ॥ १९. ॥ २०. ॥  
 २१. ॥ २२. ॥ २३. ॥ २४. ॥ २५. ॥ २६. ॥ २७. ॥ २८. ॥ २९. ॥ ३०. ॥  
 ३१. ॥ ३२. ॥ ३३. ॥ ३४. ॥ ३५. ॥ ३६. ॥ ३७. ॥ ३८. ॥ ३९. ॥ ४०. ॥

जिस प्रकार हेतु-प्रत्यय से उत्पन्न (धर्मों को) आपने कृत्रिम (कृतक) माना है, उसी प्रकार हेतुप्रत्यय से उत्पन्न सारे विश्व को आपने हे नाथ, सांवृत (अज्ञानसमुत्पन्न कृत्रिम) कहा है।

अतस्तत्कर्तृकं<sup>२</sup> सर्वं यत् किञ्चिद् बाललापनम् ।  
 रिक्त<sup>३</sup>मुष्टि<sup>४</sup> प्रतिका<sup>५</sup>शमयथार्थं प्रकाशितम् ॥ ७ ॥

१. ॥ २. ॥ ३. ॥ ४. ॥ ५. ॥ ६. ॥ ७. ॥ ८. ॥ ९. ॥ १०. ॥  
 ११. ॥ १२. ॥ १३. ॥ १४. ॥ १५. ॥ १६. ॥ १७. ॥ १८. ॥ १९. ॥ २०. ॥  
 २१. ॥ २२. ॥ २३. ॥ २४. ॥ २५. ॥ २६. ॥ २७. ॥ २८. ॥ २९. ॥ ३०. ॥  
 ३१. ॥ ३२. ॥ ३३. ॥ ३४. ॥ ३५. ॥ ३६. ॥ ३७. ॥ ३८. ॥ ३९. ॥ ४०. ॥

जो उस (अज्ञान या संवृति) के द्वारा किया गया है और जो कुछ बाल-पृथग्जन कहते हैं, वह सब खाली मुठ्ठी के समान है और अयथार्थ है—ऐसा (आपने) प्रकाशित किया है।

१. ॥ २. ॥ ३. ॥ ४. ॥ ५. ॥ ६. ॥ ७. ॥ ८. ॥ ९. ॥ १०. ॥ ११. ॥ १२. ॥ १३. ॥ १४. ॥ १५. ॥ १६. ॥ १७. ॥ १८. ॥ १९. ॥ २०. ॥ २१. ॥ २२. ॥ २३. ॥ २४. ॥ २५. ॥ २६. ॥ २७. ॥ २८. ॥ २९. ॥ ३०. ॥ ३१. ॥ ३२. ॥ ३३. ॥ ३४. ॥ ३५. ॥ ३६. ॥ ३७. ॥ ३८. ॥ ३९. ॥ ४०. ॥
२. क-०कृतकं, घ-कृतवान्, ग-अस्त्येतत्।
३. ख, ग, घ-रक्त।
४. घ-मुक्ति।
५. ख-प्रती०।
६. ॥ ७. ॥ ८. ॥ ९. ॥ १०. ॥ ११. ॥ १२. ॥ १३. ॥ १४. ॥ १५. ॥ १६. ॥ १७. ॥ १८. ॥ १९. ॥ २०. ॥ २१. ॥ २२. ॥ २३. ॥ २४. ॥ २५. ॥ २६. ॥ २७. ॥ २८. ॥ २९. ॥ ३०. ॥ ३१. ॥ ३२. ॥ ३३. ॥ ३४. ॥ ३५. ॥ ३६. ॥ ३७. ॥ ३८. ॥ ३९. ॥ ४०. ॥



कृतकं वस्तु नो जातं तदा किं वार्तमानिकम् ।  
कस्य नाशादतीतं स्यादुत्पित्सुः किमपेक्ष्यते<sup>1</sup> ॥ ८ ॥

གང་ཆེ་བྱས་པའི་དངོས་མ་སྟེས། །

དེ་ཆེ་ད་ལྟ་ཁྱིལ་ལྟར་འགྱུར།

གང་ཞིག་ཟད་པས་འདས་པར་འགྱུར།<sup>2</sup> །

མ་འོངས་པ་ཡང་ཇི་ལྟར་ལྟོས།

(हेतु-प्रत्ययां द्वारा) कृत (निर्मित) वस्तु (परमार्थतः) उत्पन्न ही नहीं है, तब (वह) कैसे वर्तमानकालिक होगी और किसके नाश से वह अतीत होगी तथा भविष्य में उत्पन्न होनेवाली वस्तु किसकी अपेक्षा करती है। अर्थात् अनुत्पन्न किसकी अपेक्षा करेगा?

स्वस्मान्न जायते भावः परस्मान्नोभयादपि ।  
न सन्नासन्न सदसन्<sup>३</sup> कुतः कस्योद्भवस्तदा<sup>४</sup> ॥ ९ ॥

རང་ལས་དངོས་པོ་སྐྱེ་བ་མིང།

གཞན་དང་གཉིས་ཀ་ལས་མ་ཡིན།

ཡོད་མིན་མེད་མིན་ཡོད་མེད་མིན།

དེ་ཆེ་གང་ལས་གཞན་ཞིག་འབྱུང་།<sup>5</sup> །

1. क-पेक्ष्यते, ख-क्षयसे, घ-क्षत।
2. བོད་འབྱུང་རྣམས་སུ་ཆིག་རྒྱུ་པར་པ་གཉིས་ “དེ་ཆེ་ད་ལྟར་བྱུང་བ་ཡི། །གང་ཞིག་པས་མ་  
འདས་པར་འབྱུང་།” ཞེས་གསལ་ཡང་འགས་སྐུར་དུ་བོད་གསལ་ལྟར་ཡོད་ཅིང་། ཆིག་རྒྱུ་  
གསུམ་པར་ “གང་ཞིག་བསམ་ན་” པའི་ཆ་གསུམ་གྱི་ “བསམ་” ཞེས་པ་བད་མིང་ཟད་པའི་དོན་དུ་སྒྲུང་  
ཡང་། ལྷུ་མཆན་ཆོན་པའི་ཆིག་དང་རྟོར་ཉེན་ཆེ་བས་བོད་གསལ་ལྟར་བཞོད་དོ།
3. क-सत्।
4. ग-उदयस्तदा।
5. འགས་སྐུར་དུ་ཆིག་རྒྱུ་ཐ་མ་ “དེ་ཆེ་གང་ལས་ཅི་ཞིག་འབྱུང་།” ཞེས་གསལ་ཡོད། “གཞན་”  
ཞེས་པའི་སྐད་དོད་གསལ་ཡོད། ཆིགས་བཅད་འདི་མཐུན་ཆེན་ཞི་འཛོའི་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་བསྐྱུང་།



རང་ཉིད་ཡོད་ན་གཞན་ཡོད་འགྱུར།

གཞན་ཉིད་ཡོད་ན་རང་ཉིད་ཡོད།

དེ་དག་ཡ་འོལ་ཚུ་འོལ་བཞིན།

ལྷོས་པ་ཅན་དུ་བྱུང་པར་གསུངས། 1 122

‘स्व’ होने पर ‘पर’ होता है और ‘पर’ होने पर ‘स्व’ माना जाता है। इन स्व और पर दोनों की सिद्धि (नदी के) ‘इस पार’ और ‘उस पार’ की भाँति परस्पर की अपेक्षा से कही गई है।

यदा नापेक्ष्यते किञ्चित् कुतः किञ्चित्तदा भवेत् ।

यदा नापेक्ष्यते दीर्घं कुतो<sup>२</sup> ह्रस्वादिकं तदा ॥ १२ ॥

གང་ཆེ་ཅི་ལའང་མི་ལྟོས་པ།

དེ་ཆེ་གང་ཡལ་ས་ཅི་ཞིག་འདུང་།

གང་ཆེ་རིང་ལ་མི་སྟོས་པ།

དེ་ཆེ་ཐུང་སྟགས་གལ་མཆིས།      | ༡༣

जब किसी की अपेक्षा ही नहीं की जाती, तब किस (हेतु) से क्या (फल या कार्य) उत्पन्न होगा। जब दीर्घ की अपेक्षा नहीं की जाएगी, तब कैसे ह्रस्व आदि सम्भव होंगे।

1. ཚིག་ཀང་ཐ་མ་གཉིས་པོད་འབྱུང་རྣམས་སུ་ “དེ་དག་གློས་པ་ཅན་དུ་གྱུབ། །མ་རྩོལ་ཆུ་རྩོལ་བཞིན་དུ་གསུངས།” ཞེས་གསལ་ཡང་། དཀྱུག་བསྐྱུར་གྱི་དབང་དུ་བྱས་ན་གོང་གསལ་ལྟར་བཞོད་ཚིག་པར་མངོན་ནོ། །
2. ཀ-ཀུམ་།
3. མེད་ག་མོགས་ ‘སྤྲ་གང་ལ་གང་ཞིག་’ ཅེས་གསལ་ཡོད།





गुक्कसं श्रुक्कं मंदसं कृक्कं पृदं दश ।

अदं दशं लिंशं पदं रदं लसं उ॥<sup>१</sup> ॥१८

(उसी तरह) एकत्व और अनेकत्व आदि, अतीत और अनागत आदि तथा संक्लेश और व्यवदान स्वतः (स्वतन्त्र रूप से) सम्यक् या मिथ्या कैसे हो सकते हैं?

स्वत एव हि यो नास्ति भावः सर्वोऽस्ति कस्तदा ।

पर इत्युच्यते योऽयं न विना स्व<sup>२</sup>स्वभावतः ॥ १५ ॥

ददं संपदं रदं लसं मं मकिंशं क॥ ।

देकं प्रमसं उदं उं लिंशं मकिंशं । ।

मकिंशं लिंशं पदं पदं लसं लं । ।

रदं शिं रदं पकिंशं मंदं कं मिक॥ ॥१५

(एक भी वस्तु) जब स्वतः से ही (स्वभावतः सत्) नहीं है, तब सब (भाव) कैसे स्वभावतः सत् होंगे (अर्थात् एक-एक की अपेक्षा से ही 'सब' होता है। अतः 'सब' भी सत् नहीं है)। जो (लोक में) यह 'पर' (दूसरा) कहा जाता है, वह भी अपने निजी स्वभाव के बिना नहीं हो सकता। (अर्थात् जब स्व नहीं है, तब 'पर' भी नहीं हो सकता)।

1. केषां पदं रदं पदं लसं मं मकिंशं क॥ "देकं प्रमसं उदं उं लिंशं मकिंशं क॥ ।" लिंशं पदं पदं लसं लं । ।  
 रदं शिं रदं पकिंशं मंदं कं मिक॥ ॥१५

2. ग-सस्व० ।





गदँदः मः श्रिदः कः सः विः सुः प॥ १ ।  
 रदः वः विः कः श्रीसः गृदः सुः दः कः रदः स॥ ।  
 यदः दः वः पः रः कः मः श्रिदः सः प॥ ।  
 देः सः दः कः सः कः मः सः सुः दः गृदः श्रीसः वः सुः दः स॥ १२

इसलिए भगवान्, आपने सभी धर्मों को आदि से शान्त, स्वभाव से परिनिर्वृत एवं परमार्थतः अनुत्पन्न ही कहा है।

निःस्वभावास्त्वया धीमन् रूपाद्याः सम्प्रकाशिताः ।  
 फेन-बुद्बुदमायाभ्रमरीचिकदलीसमाः ॥ १८ ॥

श्रिः सुः कः सुः दः गृदः श्रीसः वः सुः दः स॥ ।  
 दः सः श्रिदः मः दः पः रः वः सुः कः प॥ ।  
 दः सुः वः कः सुः रः सुः प॥ सः स॥ २  
 श्रीसः सुः कः सुः मः दः रदः वः प॥ स॥ १३

हे प्रज्ञावान्, आपने रूप (वेदना) आदि सभी धर्मों को निःस्वभाव के रूप में प्रकाशित किया है। वे सब (धर्म) फेन के समान, बुलबुले के समान, माया, गन्धर्वनगर, मृगमरीचि एवं कदली (केले के वृक्ष) के समान (निःसार एवं तुच्छ) हैं।

इन्द्रियैरुपलब्धं यत्तत्तत्त्वेन भवेद् यदि ।  
 जातास्तत्त्वविदो बालास्तत्त्वज्ञानेन किं तदा ॥ १९ ॥

1. केषां कदः ददः सः सः दः सुः रः सुः मः कः मः सुः प॥ "गदँदः मः श्रिदः कः सः विः सुः प॥" विः सः प॥ यदः । विः सः सुः रः सुः मः कः मः सुः प॥
2. विः सः सुः रः सुः मः कः मः सुः प॥ "दः सुः वः कः सुः रः सुः प॥" विः सः प॥ यदः ।



आपने (हे भगवन्) इन्द्रियों की जडरूपता, अप्रमाणता, अव्याकृतता (अर्थात् उनका कुशल, अकुशल न होना) तथा (उनके द्वारा) विपरीत रूप से ज्ञान होना कहा है।

अज्ञानेनावृतो येन यथावन्न प्रदृश्यते<sup>१</sup> ।  
लोकस्तेन यथाभूतमिति मत्वा त्वयोदितम् ॥ २१ ॥

मद्विषयैर्विषयैर्ह्यव्यक्तम् ।  
अदृश्यं हि विदुः सुखं कुरुते ।  
देवैर्न हि विदुः कुरुते ।  
वसन्मृगिणोऽपि वसन्मृगिणोऽपि<sup>२</sup> ॥ २१ ॥

अज्ञान से आवृत होने के कारण यह लोक (सत्त्व एवं भाजनलोक) यथावत् (जैसा वस्तुतः है, वैसा) नहीं दिखलाई पड़ता। ऐसा आपने यथाभूत (ठीक-ठीक) जानकर कहा है।

अस्तीति शाश्वती दृष्टिर्नास्तीत्युच्छेददर्शनम् ।  
तेनान्तद्वयनिर्मुक्तो<sup>३</sup> धर्मोऽयं देशितस्त्वया ॥ २२ ॥

अदृश्यं हि विदुः कुरुते ।  
देवैर्न हि विदुः कुरुते ।

१. ग-प्रदृश्यते।

२. वसन्मृगिणोऽपि वसन्मृगिणोऽपि । “अदृश्यं हि विदुः कुरुते । देवैर्न हि विदुः कुरुते ।” अदृश्यं हि विदुः कुरुते । देवैर्न हि विदुः कुरुते ।

३. घ-निर्मुक्तः।



དེས་ན་མཐའ་གཉིས་བྲལ་བ་ཡི།

ཆོས་དེ་ཁྱོད་ཀྱིས་བསྟན་པར་མཛད། 1 | 33

‘अस्ति’ (सत्) ग्रहण करना शाश्वत (नित्य) दृष्टि है और ‘नास्ति’ (असत्) ग्रहण करना उच्छेद दृष्टि है, इसलिए हे भगवन्, आपने दोनों (शाश्वत और उच्छेद) अन्तों से रहित इस धर्म की देशना की है।

चतुष्कोटिविनिर्मुक्तास्तेन धर्मास्त्वयोदिताः ।

विज्ञानस्याप्य<sup>२</sup>विज्ञेया जाता विमुक्तगोचराः<sup>३</sup> ॥ २३ ॥

དེས་ན་ཆོས་རྣམས་མྱ་བཞི་དང་།

བྲལ་བ་ཁྱོད་ཀྱིས་བཀའ་སྤྱལ་ལགས།

རྒྱལ་གྱི་ཕྱི་ལོ་ལྟ་བུ་ལྟར་མ་ལགས་ལ།

རྒྱལ་པར་གྲོལ་བའི་སྤྱིད་ཡུལ་ལགས། 4 | 33

इसलिए (हे भगवन्) आपने सभी धर्मों को चतुष्कोटि (सत्, असत्, सदसत् [उभय] और अनुभय) [सत् और असत् दोनों से रहित] इन चारों (कोटियों) से रहित कहा है। (ये धर्म) विज्ञान द्वारा भी अविज्ञेय हैं और (अविद्या और तृष्णा से) विमुक्त (केवल आर्य लोगों के ही) गोचर हैं।

1. ཚིགས་བཅད་འདི་འདི་བཞིན་གྲུབ་ལྷན་རྒྱལ་ཕྱོགས་འདྲ་བ་ཞིག་དབུ་མ་རྩ་བ་ཤེས་རཤ་བྱ་ཡང་  
 “ཡོད་ཅེས་གྲུབ་ནག་པར་འཛིན། མེད་ཅེས་གྲུབ་ཆད་པར་ཞུ། འདི་ཕྱིར་ཡོད་དང་མེད་པ་ལ།  
 ལམས་པས་གནམ་པར་མི་བྱའོ།” ཞེས་གསལ་ཡོད། (རབ་བྱེད། ༥༥, ཚིགས་བཅད་༡༠)

2. क, ख-व्यप्य ।

3. चतुर्थचरण, भोट पाठे नास्ति।

4. བོད་འབྲུག་ཤར་མ་རྒྱུ་ལྟ་ཞིག་པཅད་འདྲི་ཆིག་ཀར་ཤ་མ་ཆར་མེད་པས། །དེ་ལྟམས་  
ཤར་ལ་གཞི་བྱས་ནས་ཁ་བསྐར་བྱངས་ཆར་བཅོས་པའི་ཆིག་ཚུར་གོད་གསལ་ལྟར་པོ།



स्वप्न में जैसे पुत्र उत्पन्न होता है, स्थित रहता है और नष्ट होता है, (लेकिन वस्तुतः) न उत्पन्न होता है, न स्थित होता है और न नष्ट होता है, फिर भी हे भगवन्, आपने लोकहित के लिए (इन सबका व्यवहार में) विद्यमान होना कहा है।

हेतुतः<sup>१</sup> सम्भवो दृष्टो यथा स्वप्ने तथेततः ।

सम्भवः सर्वभावानां विभवोऽपि तथा मतः<sup>२</sup> ॥ २६ ॥

हेतुः स्वप्नो दृष्टो यथा स्वप्ने तथेततः ।

सम्भवः सर्वभावानां विभवोऽपि तथा मतः ।

हेतुः स्वप्नो दृष्टो यथा स्वप्ने तथेततः ।

सम्भवः सर्वभावानां विभवोऽपि तथा मतः ॥ २६ ॥

स्वप्न में जैसे हेतु (कारण) से उत्पाद देखा गया है, उसी तरह वैसा ही (स्वप्न से) भिन्न (जाग्रत अवस्था में) सभी वस्तुओं का उत्पाद है और नाश भी वैसा (स्वप्नवत्) ही है—ऐसा आपने माना है।

रागादिकं तथा<sup>३</sup> दुःखं दुःखं<sup>४</sup> संक्लेशसंसृतिः<sup>५</sup> ।

सम्भारपूरणान्मुक्तिः<sup>६</sup> स्वप्नवद् भाषितं त्वया<sup>७</sup> ॥ २७ ॥

रागादिकं तथा दुःखं दुःखं संक्लेशसंसृतिः ।  
सम्भारपूरणान्मुक्तिः स्वप्नवद् भाषितं त्वया ॥ २७ ॥

1. क, ख-को नाशः, ग, घ-कारणात् ।
2. मतस्तथा (अयं श्लोकः भोटपाठे नास्ति पूर्णः) ।
3. ग-रागादिजं यथा ।
4. दुःख-‘ग’ पाठे नास्ति ।
5. ग-संसृति तथा, घ-संसृताः ।
6. क, ख-मोक्तिः ।
7. ग-भाषितां त्वया, घ-भाषितस्त्वया ।



देवविक्कं कण्ठस्यैव स्युष्यं वसुधायं ५८ ।  
 अत्रैव स्युष्यं वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ५९ ।  
 कौण्डिन्यस्यैव स्युष्यं वसुधायं ६० ।  
 अत्रैव स्युष्यं वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ६१ । ॥३८॥

राग (द्वेष) आदि और दुःख, उसी तरह दुःख और क्लेशों का संसरण (परम्परा) तथा सम्भार (ज्ञान सम्भार और पुण्यसम्भार) की पूर्ति से मुक्ति (मोक्ष) सभी कुछ को हे भगवन्, आपने स्वप्न की भाँति कहा है।

जातं तथैव नो जातमागतं गतमित्यपि ।  
 मुक्तो बद्धस्तथा<sup>३</sup> ज्ञानी द्वयमिच्छेन्न तत्त्ववित् ॥ २८ ॥

देवविक्कं श्लेषं ५८ मं श्लेषं ५९ ।  
 अत्रैव स्युष्यं वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ६० ।  
 देवविक्कं वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ६१ ।  
 गुरुं श्रेष्ठं वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ६२ । ॥३९॥

उत्पाद और अनुत्पाद, गमन और आगमन तथा बद्ध और मुक्त—ये सब द्वैत अज्ञानी देखता है, तत्त्वविद् नहीं देखता।

१. कौण्डिन्यस्यैव स्युष्यं वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ५९ मं श्लेषं ५९ । "स्युष्यं वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ५९ मं श्लेषं ५९ ।" श्लेषं वसुधायं ५९ ।
२. अत्रैव स्युष्यं वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ६० । "कौण्डिन्यस्यैव स्युष्यं वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ६० ।" श्लेषं वसुधायं ६० ।
३. ग-बद्धो मुक्तस्तथा ।
४. कौण्डिन्यस्यैव स्युष्यं वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ६१ । "वसुधायं गुरुं श्रेष्ठं ६१ ।" श्लेषं वसुधायं ६१ ।

उत्पत्तिर्यस्य नैवास्ति तस्य का<sup>१</sup> निर्वृतिर्भवेत् ।

मायागजप्रकाशत्वादादिशान्तत्वमर्थतः ॥ २९ ॥

གང་ལས་སྐྱེས་པ་ཡོད་མ་ལགས། ।

དེ་ལ་མྱ་ངན་འདས་གང་ཡོད། ।

སྐྱེ་མའི་སྐྱང་པོ་འདྲ་བས་ན། ।

དོན་དུ་གཞོན་ནས་ཞི་བ་ཉིད།<sup>२</sup> । ३९

जिसकी उत्पत्ति नहीं है, उसकी निर्वृत्ति (निर्वाण) भी कैसे है? मायिक गज की भाँति आभासित होने के कारण (सभी धर्म) वास्तव में आदिशान्त हैं।

उत्पन्नोऽपि न चोत्पन्नो<sup>३</sup> यद्वन्मायागजो मतः ।

उत्पन्नं च तथा विश्वं न वोत्पन्नं<sup>४</sup> च तत्त्वतः ॥ ३० ॥

སྐྱེས་པ་ཉིད་ནའང་མ་སྐྱེས་པ། ।

སྐྱེ་མའི་སྐྱང་པོ་ཇི་བཞིན་བཞིད། ।

དེ་བཞིན་ཐམས་ཅད་སྐྱེས་པ་འཇམ། ।

ཡང་དག་པར་ནི་མ་སྐྱེས་ལགས། । ३०

उत्पन्न होते हुए भी (वस्तु) आपके मतानुसार मायागज की भाँति (स्वभावतः) अनुत्पन्न है। इसी तरह सारा विश्व उत्पन्न है, किन्तु तत्त्वतः (परमार्थतः) अनुत्पन्न ही है।

1. क, ख-तस्मात्का।

2. ཚིགས་བཅད་འདི་མེར་འཕུང་སྤྱོད་འགྲེལ་དུ། “གང་ལས་སྐྱེ་བ་ཡོད་མིན་ཉིད། དེ་ལ་མྱ་ངན་འདས་གང་ཡོད། །འགྲོ་བ་སྐྱེ་མར་གསལ་བའི་ཕྱིར། །དང་པོ་ནས་གཞི་འབད་མེད་པར།” ཞེས་གསལ་བས་འགྲུར་ཁྱད་ཆེ། (དབུ་མ། ‘ལ’ ३५७)

3. क, ख-वोत्प०।

4. ग-मनुत्पन्नं।

अमेयैश्चाप्रमेयाणां प्रत्येकं निर्वृतिः कृता ।  
लोकनार्थैर्हि सत्त्वानां न कश्चिन्मोचितश्च तैः<sup>१</sup> ॥ ३१ ॥

འཇིག་རྟེན་མགོན་པོ་དཔག་མེད་ཀྱིས། །

སེམས་ཅན་དཔག་དྲ་མ་མཆིས་པ། །

སྟོ་སྟོར་བྱ་ངན་འདས་མཛད་ཀྱང་། །

དེ་དག་གིས་ཀྱང་གང་མ་བརྟུན།

अमेय (असीमित) लोकनाथों के द्वारा अप्रमेय (असंख्य) सत्त्वों में से प्रत्येक को निर्वाण में प्रतिष्ठित किया गया। फलतः उनके द्वारा कौन मुक्त नहीं किया गया?

ते च सत्त्वाश्च नो जाता ये निर्वान्ति<sup>२</sup> न ते स्फुटम् ।  
न कैश्चि<sup>३</sup>न्मोचितः कश्चिदिति प्रोक्तं महामुने ॥ ३२ ॥

ཐུབ་ཆེན་གང་ཕྱིར་སེམས་ཅན་རྣམས། །

རང་ལས་མ་སྐྱེས་དེ་ཡི་ཕྱིར།<sup>4</sup>

གང་ཡང་གང་གིས་མ་བརྒྱུལ་ཞིས།

དེ་སྐད་ཕྱིད་ཀྱིས་གསལ་བར་གསུངས། །༣༣

जो निर्वाण प्राप्त करते हैं, वे सत्त्व (वस्तुतः) स्पष्टतया उत्पन्न ही नहीं हैं, इसलिए किन्हीं के द्वारा कोई (स्वभावतः) मुक्त ही नहीं किया गया है—ऐसा हे महामुनि, आपने कहा है।

1. घ-चितचतैः।

2. क.ख-येनैव तेन ।

3. ग-न कश्चित् ।

4. ལེགས་སྤྱར་ལ་ “རང་ལས” ཞེས་པའི་གསལ་ཁ་མེད།





कारक (कर्ता) भी अन्य के द्वारा किया गया है, ऐसी स्थिति में वह (अन्य) भी किसी अन्य के द्वारा किया गया है, फलतः इस कर्तृत्व-प्रक्रिया का अन्त नहीं होगा। अर्थात् अनवस्था दोष होगा। अथवा यदि कारक अपने ही उत्पाद की क्रिया करता है तो कर्म और कर्ता के एकत्व का प्रसङ्ग होगा।

नाममात्रं जगत् सर्वमित्युच्चैर्भाषितं त्वया ।  
अभिधानात् पृथग्भूतमभिधेयं न विद्यते ॥ ३५ ॥

འདི་དག་གམས་ཅད་མིང་ཙམ་ཞེས། ¹ |  
 ཁྱོད་ཀྱིས་གསང་²ནི་བསྟོད་དེ་གསུངས། |  
 བརྟོད་པ་ལས་ནི་གཞན་གྱུར་པ། |  
 བརྟོད་པར་བཀྱི་བ་ཡོང་མ་མཆིས། |³⁴

यह सम्पूर्ण जगत् नाममात्र है—ऐसा आपने उद्घोष (सिंहनाद) किया है। अभिधान (नाम) से पृथग्भूत (अतिरिक्त) अभिधेय अर्थात् उसका विषय (अर्थ) भी नहीं है।

कल्पनामात्रमित्यस्मात् सर्वधर्माः प्रकाशिताः ।  
कल्पनाऽप्यसती प्रोक्ता यया शून्यं विकल्प्यते ॥ ३६ ॥

དེ་ཕྱིར་ཆོས་རྣམས་ཐམས་ཅད་ནི། །  
རྟོག་པ་ཙམ་ཞེས་ཁྱོད་གྱིས་གསུང་ས། 3 །

1. ཚིག་རྒྱུ་དང་པོ་ལེགས་སྒྱུར་ལྟར་ན་ “འཇིག་རྟེན་ཐམས་ཅད་མིང་ཙམ་ཞེས།” །ཞེས་གསལ་ཡོད།
2. ལྷོ - གཞུང་ནི།
3. ལེགས་སྒྱུར་ལྟར་ན་ཚིག་རྒྱུ་གཉིས་པ་ “རྟེན་པ་ཙམ་ཞེས་གསལ་བར་མཇེད།” །ཅེས་གསལ་ཡོད།





यन्न चैकं न चानेकं नोभयं न च नोभयम् ।

अनालयमथाव्यक्तमचिन्त्यमनिदर्शनम् ॥ ३८ ॥

གང་ཡང་གཅིག་མིན་དུ་མཁང་མིན།     |

གཉིས་ཀ་མ་ཡིན་གཉིས་མེད་མིན། 1 ।

གཞི་མེད་པ་དང་མི་གསལ་དང་།

བསམ་མི་བྱ་དང་དཔེ་མེད་དང་།<sup>2</sup> 134

जो न एक है, न अनेक है, न उभय (एक और अनेक दोनों) है तथा न तो अनुभय (अर्थात् जिसमें एक और अनेक दोनों स्वभाव नहीं हो—ऐसा कोई भाव) ही है। (सभी) अनालय (निराश्रय), अव्यक्त (अस्फुट) अचिन्त्य (ज्ञान के अविषय) और अनिदर्शन (वस्तुतः उपमारहित) हैं।

यन्नोदेति न च व्येति नोच्छेदि न च शाश्वतम् ।

तदाकाश<sup>३</sup>प्रतीकाशं नाक्षरज्ञानगोचरम् ॥ ३९ ॥

གང་ཡང་མི་སྟེ་མི་འགག་དང་། །

ཆད་པ་མེད་ཅིང་རྟག་མེད་པ། །

1. བོད་འབྲུང་ཁ་ཅིག་དུ་ “གཉིས་ཀ་མ་ཡིན་ཅི་ཡང་མེད།” །ཅེས་གསལ་ཞིང་སྒྲུར་ཐང་སྒྲུར་མ་  
སོགས་སུ་ “གཉིས་ཀ་མ་ཡིན་གཅིག་ཀྱང་མེད།” །ཅེས་གསལ་ཡོད། ལེགས་སྒྲུར་དུ་གོང་  
གསལ་ལྟར་ཡོད་པ་འཕམ་ཆེ་བར་མངོན་ནོ།
2. ལེགས་སྒྲུར་དུ་ཆིག་རྐང་བཞི་པ་ “བསམ་མི་བྱུང་དང་བསྒྲུན་མེད་དང་།” །ཞེས་གསལ་ཡོད།  
ཆིགས་བཅད་འདི་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་ཀྱི་སྡིང་པོ་བསྒྲུས་པར། “གང་ཞིག་གཅིག་མིན་དུ་མ་མིན།  
གཉིས་མིན་གཉིས་མིན་པ་ཡང་མིན། །གནས་མེད་གསལ་བ་མེད་པ་དང་། །བསམ་དུ་མེད་ཅིང་  
བསྒྲུན་དུ་མེད།” །ཅེས་གསལ་བས་འབྲུང་བྱང་ཆེ། (རྒྱུད། ‘ཙུ’ ༩༩)
3. क-न चाकाशं, ख-न चाकाशं, ग,घ-तदाकाशं।



तत्तत्त्वं परमार्थोऽपि तथता द्रव्यमिष्यते ।  
भूतं तदविसंवादि तद्बोधाद् बुद्ध उच्यते ॥ ४१ ॥

དེ་ནི་དེ་ཉིད་དོན་དང་ནི། 1 |

དེ་བཞིན་ཉིད་དང་རྩལ་སྤྱུ་བཞིད། 2 |

དེ་ནི་ཡང་དག་མི་བསྐྱུ་བ། |

དེ་རྟོགས་པ་ས་ན་སངས་རྒྱས་བརྗོད། 3 |༥༡

वही तत्त्व (शून्यता) परमार्थ भी है, तथता और द्रव्य (वास्तविक) भी वही माना जाता है। वही वास्तविक और अविस्मरणीय है। उसी का बोध होने से 'बुद्ध' कहा जाता है।

बुद्धानां सत्त्वधातोश्च तेनाभिन्न<sup>४</sup>त्वमर्थतः ।  
आत्मनश्च परेषां<sup>५</sup> च समता तेन ते मता ॥ ४२ ॥

1. ལེགས་སྐྱར་ལྷར་ན་ཆེག་རྒྱུ་དང་པོ་ “དེ་ནི་དེ་ཉིད་དོན་དམ་དུ་འདྲ་།” །ཞེས་གསལ་ཡོད།  
སྤྱི་འགྲེལ་དུ་བྲངས་པ་དེར་ “དེ་ནི་དེ་ཉིད་དོན་མེད་པ་འདྲ་།” །ཞེས་དགག་པའི་རྣམ་ཅན་དུ་  
བསྟོད་པ་ཇི་ལྟར་འཐད་དཔྱད་པར་གྱུ་ལོ། །
2. ཆེག་རྒྱུ་དང་པོ་གཉིས་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་ཀྱི་སྤྱིར་པོ་བསྐྱས་པར། “དེ་ནི་དེ་ཉིད་དོན་དམ་པ། །དེ་  
བཞིན་ཉིད་ཀྱི་དངོས་པོར་འདོད།” ཅེས་གསལ་ཡོད།
3. ཆེགས་བཅད་འདི་ཤེར་འབྱུང་སྤྱི་འགྲེལ་དུ། “དེ་ནི་དེ་ཉིད་དོན་མེད་པ་འདྲ་། །དེ་བཞིན་  
ཉིད་ཀྱི་རྒྱུ་སྐྱེས་པ་བཞེད། །ཡང་དག་དེ་ནི་མི་བསྐྱེད། དེ་རྟོགས་པ་ནི་མངས་རྒྱས་བརྗོད།” ཅེས་  
གསལ་བས་འབྱུར་བྱད་ཆེ་ཞིང་། ཆེག་རྒྱུ་ཐ་མ་འདིར་གསལ་བ་ལྟར་ལེགས་སྐྱར་དང་མཐུན་  
ཆེ་བས་དེ་ཉིད་དཀྱུས་སྐྱེས་བཞག་གོ། (དབུ་མ། ལ་ ༣༣༦) ཟླ་དགེ་མོགས་སྐྱེ་ “དེ་རྟོགས་  
པས་ན་སངས་རྒྱས་བརྗོད།” །ཅེས་གསལ་ཡོད། །
4. ཀ,ཁ-भिन्नस्त्व० །
5. ཀ-परेषांश्च །





हेतुप्रत्ययसम्भूता परतन्त्रा च संवृतिः ।  
परतन्त्र इति प्रोक्तः<sup>१</sup> परमार्थस्त्वकृत्रिमः<sup>२</sup> ॥ ४४ ॥

श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः ।  
श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः ।  
श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः ।  
श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः ।

संवृति हेतु और प्रत्ययों से उत्पन्न और परतन्त्र (कृत्रिम) है। इसलिए (सभी हेतु-प्रत्यय से उत्पन्न धर्म) परतन्त्र (-स्वभाव) कहे गये हैं। परमार्थ तो अकृत्रिम (हेतु-प्रत्यय के बिना) है।

स्वभावः प्रकृतिस्तत्त्वं द्रव्यं वस्तु सदित्यपि ।  
नास्ति वैकल्पितो<sup>३</sup> भावः परतन्त्रस्तु विद्यते ॥ ४५ ॥

श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः ।  
श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः ।  
श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः ।  
श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः ।

१. क, ख-परतन्त्रमिति प्रोक्तम्।

२. ग-कृत्रिमः।

३. क, ख-वैकल्पिको।

४. श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः "श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः" श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः

५. श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः "श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः" श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः

(वही परमार्थ परिनिष्पन्न) स्वभाव है, प्रकृति है, तत्त्व, वस्तु एवं सत् भी है। (विकल्प द्वारा निर्मित) परिकल्पित-भाव नहीं है, किन्तु परतन्त्र (हेतु-प्रत्यय समुत्पन्न) तो विद्यमान है।

अस्तीति कल्पिते भावे समारोपस्त्वयोदितः ।

नास्तीति कृतकोच्छेदादुच्छेदश्च प्रकाशितः ॥ ४६ ॥

चत्वेदं पञ्चमं पञ्चि ।

क्षेत्रज्ञेन्द्रियस्य चक्षुःश्रोत्रं चेत्येव ।

सुखं च कष्टं च भेदं चेत्येव ।

कष्टं च चक्षुःश्रोत्रं चेत्येव । ॥ ८७ ॥

कल्पित (असद्) वस्तु में 'यह 'अस्ति' है' (इस प्रकार के अभिनिवेश को) हे भगवन्, आपने 'समारोप (शाश्वत) अन्त' कहा है। कृत (हेतु-प्रत्ययसमुत्पन्न) का नाश होने से वह सर्वथा 'नास्ति' (नहीं है)—इस प्रकार के कथन को (आपने) 'उच्छेद अन्त' प्रकाशित किया है।

तत्त्वज्ञानेन <sup>२</sup>नोच्छेदो न च शाश्वतता <sup>३</sup>मता ।

वस्तुशून्यं जगत् सर्वं मरीचिप्रतिमं मतम् ॥ ४७ ॥

अद्वैतस्य चक्षुःश्रोत्रं चेत्येव ।

क्षेत्रज्ञेन्द्रियस्य चक्षुःश्रोत्रं चेत्येव । <sup>४</sup> ।

१. क्षेत्रज्ञेन्द्रियस्य चेत्येव ।

२. क, ख-चोच्छेदो, घ-वोच्छेदो ।

३. घ-शाश्वतते ।

४. क्षेत्रज्ञेन्द्रियस्य चक्षुःश्रोत्रं चेत्येव । "क्षेत्रज्ञेन्द्रियस्य चक्षुःश्रोत्रं चेत्येव ।" । क्षेत्रज्ञेन्द्रियस्य चेत्येव ।



ॐ नमो भगवते वासुदेवाय १ ।

देवदेव भगवन् ॐ नमो भगवते वासुदेवाय २ ॥ ८८ ॥

तत्त्वज्ञान (सम्यग्ज्ञान) के द्वारा न तो उच्छेद अन्त माना जाता है और न ही शाश्वत अन्त माना जाता है। हे भगवन्, यह सम्पूर्ण जगत् वस्तुतः (स्वभावतः) शून्य और मृगमरीचिका के समान आपने माना है।

मृगतृष्णाजलं यद्वन्नोच्छेदि न च शाश्वतम् ।  
तद्वत् सर्वं जगत् प्रोक्तं नोच्छेदि न च शाश्वतम् ॥ ४८ ॥

देवदेव भगवन् ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ३ ॥ ८९ ॥

कन्दर्पदेव भगवन् ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ४ ॥ ९० ॥

देवदेव भगवन् ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ५ ॥ ९१ ॥

कन्दर्पदेव भगवन् ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ६ ॥ ९२ ॥

जिस प्रकार मृगतृष्णा का जल न तो उच्छिन्न है और न ही शाश्वत है, उसी प्रकार सम्पूर्ण जगत् न तो उच्छिन्न है और न ही शाश्वत है—ऐसा आपने कहा है।

1. कर्मण्येवाङ्गिरसो वदन्ति ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८८ ॥
2. कर्मण्येवाङ्गिरसो वदन्ति ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८९ ॥
3. कर्मण्येवाङ्गिरसो वदन्ति ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९० ॥



इति मायादिदृष्टान्तैः स्फुटमुक्त्वा भिषग्वरः<sup>१</sup> ।  
देशयामास सद्धर्मं सर्वदृष्टिचिकित्सितम्<sup>२</sup> ॥ ५१ ॥

དེ་ལྟར་སྒྲུབ་པ་ལོ་སོགས་དཔེ། |  
སྒྲུབ་པའི་མཆོག་གིས་གསལ་བསྐྱན་ནས། |  
ལྷ་པ་ཐམས་ཅད་འགོག་བྱེད་པའི། |  
དམ་པའི་ཆོས་ནི་བསྐྱན་པ་ལགས། 3 |ཡ

एतत्तत् परमं तत्त्वं निःस्वभाव<sup>४</sup>त्वदेशना ।  
भावग्रहगृहीतानां चिकित्सेयमनुत्तरा ॥ ५२ ॥

ངོ་བོ་མེད་པ་ཉིད་བསྟན་པ།  
དེ་ནི་ཡང་དག་དམ་པ་ལགས།

- [illegible]



ददं स'पि'पदं'पु'स'वे'क'क'स'गु' १ ।

प'स'प'दे'के'स'क'मे'द' । ॥ ५३ ॥

जो भगवान् द्वारा प्रदत्त निःस्वभावता की देशना है, वह परम तत्त्व है। यह (देशना) भावाभिनवेश (वस्तुसत्ता के प्रति आग्रह) से ग्रस्त लोगों के लिए अनुत्तर (सर्वश्रेष्ठ) चिकित्सा है।

धर्मयाज्ञिक, तेनैव धर्मयज्ञं<sup>२</sup> निरन्तरम्<sup>३</sup> ।

अभीष्टमीजे<sup>४</sup>त्रैलोक्ये निष्कषाये निरन्तरम्<sup>५</sup> ॥ ५३ ॥

दे'स'क'क'स'गु'म'क'द'सु'क'प' ।

सु'क'प'प'दे'म'मे'द'प'प'स' ६ ।

म'क'द'सु'क'दे'म'प'स'द'प'स'गु' ।

॥ ५३ ॥

1. केषां'पु'प'प'दे'क'स'गु'द'प'द'प'प'स'गु' "ददं स'पि'पदं'पु'स'वे'क'क'स'गु' ॥"
2. ग-यज्ञो ।
3. ग,घ-निरन्तरः ।
4. ग-अभीष्टमिष्ट, घ-अभिष्टमिष्ट ।
5. ग-निष्कषातो निरदालः ।
6. केषां'पु'प'प'दे'क'स'गु'म'क'द'सु'क'प' "दे'स'क'क'स'गु'म'क'द'सु'क'प'प'दे'म'मे'द'प'प'स' ६"
7. प'स'प'दे'के'स'क'मे'द'प'प'स' "॥ ५३ ॥"

इसीलिए हे धर्मयाज्ञिक (धर्मयज्ञ करने वाले), आपने निष्कषाय (दोषरहित) तीनों लोकों में इष्ट धर्मयज्ञ का निरन्तर यजन किया है।

वस्तुग्राहभयोच्छेदी कुतीर्थ्यमृगभीकरः ।

नैरात्म्यसिंहनादोऽयमद्भुतो नदितस्त्वया ॥ ५४ ॥

དངོས་འཛིན་འཛིགས་པ་གཙོད་བགྱིད་ཅིང་། །

ལྷ་སྒྲེགས་ཀྱི་དྲགས་འཛིགས་བགྱིད་པ།

བདག་མེད་སེངྒེའི་ང་ལོ་ལྔ།

ལྷན་བྱུང་དེ་ནི་བྱོང་གིས་གསུངས།

वस्तुग्राह रूपी भय का उच्छेद (नाश) करने वाले, कुतैर्थिक (गलत अबौद्ध मत को मानने वाले) रूपी मृगों को भयभीत करने वाले नैरात्म्य (शून्यता) रूपी इस अद्भुत सिंहनाद का हे भगवान्, आपने नदन (गर्जन) किया है।

शून्यताधर्मगम्भीरा धर्मभेरी पराहता ।

नैःस्वाभाव्यमहानादो धर्मशंखः प्रपूरितः ॥ ५५ ॥

སྟོང་པ་ཉིད་དང་ཆེས་ཟབ་པའི།

ཆོས་ཀྱི་ང་ཆེན་བརྟུངས་པ་འཕགས། །

ང་ལོ་ཉིད་མེད་སྒྲ་<sup>2</sup>ལོ་ཆེད།

ཆོས་གྱི་དྲང་ནི་བྱས་པ་ལགས། ། ༥༥

(हे भगवन् आपने) गम्भीर शून्यता धर्म (का उद्घोष करने) वाली धर्मभेरी को बजाया तथा निःस्वभावता का महानाद करने वाले धर्मशंख को पूरित किया। (अर्थात् शंखनाद किया)।

1. ལྷ་ དེ་ བསེར་ - བརྟན་བ་

2. ལྷོ - དབྱ་པོ་ཆེ་





दे'के'व'ग्रे'दे'क'गु'क'है'व'नु। ।

म'ग्रे'क'प'सु'द'ग्रे'स'व'ग्रे'क'प'व'ग्रे'स' 1 । ५७

उत्पाद, निरोध आदि तथा सत्त्व, जीव (पुरुष, पुद्गल) आदि की जो देशना है, वह (देशना) नेयार्थ मानी गई है। हे नाथ, आपने उस देशना को 'संवृति' कहा है।

प्रज्ञापारमिताम्बोधेर्योऽत्यन्तं पारमागतः<sup>2</sup> ।

स पुण्यगुणरत्नाढयस्त्वद्गुणार्णवपारगः ॥ ५८ ॥

मे'स'र'व'स'र'व'सु'क'म'कै'यी। ।

स'र'व'स'र'व'सु'क'मे' 3 ।

व'सु'द'क'म'स'र'व'सु'क'मे'क'के'क'सु'ग'। ।

म'ग्रे'क'सु'द'स'र'व'सु'क'मे' ५८

जो प्रज्ञापारमिता रूपी सागर के अत्यन्त पार चला गया है, वह पुण्य एवं गुण रूपी रत्नों से समृद्ध (सम्पन्न) है और आपके (बुद्ध के) गुण रूपी सागर के भी पार चला गया है।

इति स्तुत्वा जगन्नाथमचिन्त्यमनिदर्शनम् ।

यदवाप्तं मया पुण्यं तेनास्तु त्वत्समं जगत् ॥ ५९ ॥

“सु'द'क'म'स'र'व'सु'क'मे'क'के'क'सु'ग'। । म'ग्रे'क'प'सु'द'ग्रे'स'व'ग्रे'क'प'व'ग्रे'स' ॥ म'ग्रे'क'प'सु'द'ग्रे'स'व'ग्रे'क'प'व'ग्रे'स' ॥ म'ग्रे'क'प'सु'द'ग्रे'स'व'ग्रे'क'प'व'ग्रे'स' ॥” । म'ग्रे'क'प'सु'द'ग्रे'स'व'ग्रे'क'प'व'ग्रे'स' ॥

1. क'ग्रे'क'प'सु'द'ग्रे'स'व'ग्रे'क'प'व'ग्रे'स' ॥ “दे'के'व'ग्रे'दे'क'गु'क'है'व'नु। । गु'क'है'व'नु। ।” । म'ग्रे'क'प'सु'द'ग्रे'स'व'ग्रे'क'प'व'ग्रे'स' ॥

2. ग-परमागतः।

3. क'ग्रे'क'प'सु'द'ग्रे'स'व'ग्रे'क'प'व'ग्रे'स' ॥ “मे'स'र'व'स'र'व'सु'क'मे' ५८” । म'ग्रे'क'प'सु'द'ग्रे'स'व'ग्रे'क'प'व'ग्रे'स' ॥

दे'ल्लर'दये'खेद'वसम'मि'सुवा ।  
 लक्ष्मी'वलि'मर्क'पि'वज्रद'प'यिषा ।  
 वदम'विष'वस'द'कम'स'म'स'व'देसा ।  
 लक्ष्मी'व'सुद'द'म'कुद'स'प'र'म'पिषा ॥ ५९

इस प्रकार अचिन्त्य, अनिदर्शन जगन्नाथ (भगवान् बुद्ध) की स्तुति करके  
 मैंने जो पुण्य अर्जित किया है, उस (पुण्य) से यह सम्पूर्ण जगत् (प्राणी मात्र)  
 आप (बुद्ध) के समान हो जाएं। अर्थात् बुद्धत्व पद को प्राप्त हो जाए।

॥ इति अचिन्त्यस्तवः समाप्तः ॥

वसम'मि'सुव'प'र'वज्रद'प'सुव'द'पि'क'पि'ल्ल'सुव'गु'ल्ल'सु'  
 क'स'म'द'प'ह'स'स' ॥



## परमार्थस्तवः

དོན་དམ་པར་བསྟོད་པ།

नमो मञ्जुश्रिये कुमारभूताय

འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་གཞིའི་རྒྱུ་པ་ལ་ཕུག་འཆལ་ལོ།

कथं स्तोष्यामि ते [ तं ] नाथमनुत्पन्नमनालयम् ।  
लोकोपमामतिक्रान्तं वाक्पथातीतगोचरम् ॥ १ ॥

སྟེ་བ་མེད་ཅིང་གནས་མེད་པ། ।

འཇིག་རྟེན་དཔེ་ལས་ཤིན་ཏུ་འདས། ।

ངག་གིས་བཟོད་པའི་སྟོད་ལུལ་མིན། <sup>1</sup> ।

མགོན་ཁྱོད་ཇི་ལྟར་བསྟོད་པར་བགྱི། <sup>2</sup>

अनुत्पन्न, अनालय (आसक्तिरहित), लौकिक उपमाओं से अतिक्रान्त (अर्थात् जिन्हें लोक की कोई उपमा नहीं दी जा सकती, जो सभी उपमाओं से ऊपर हैं) एवं जो वाक्पथ (अभिधान) के गोचर (विषय) नहीं हैं, उस नाथ (भगवान् बुद्ध) की मैं कैसे स्तुति (गुणों का आख्यान) करूँ?

तथापि यादृशो वाऽसि तथतार्थेषु गोचरः ।  
लोकप्रज्ञसिमागम्य स्तोष्येऽहं भक्तितो गुरुम् ॥ २ ॥

དེ་ལྟར་ཡང་གང་འདྲ་བས། ।

དེ་བཞིན་ཉིད་དོན་སྟོད་ལུལ་གྱི། ।

1. ཆིག་རྟེན་གསུམ་པ་ལེགས་སྟར་ལྟར་ན་ “ངག་ཆིག་སྟོད་ལུལ་ལས་འདས་ཤིང་།” |ཞིས་གསལ་  
ཡོད།

2. སྟེ། དེ། གསེས། - བཟོད་པར་བགྱི།



ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

गुणः पञ्चैकः सः सः सः सः सः सः । १ । ३

आप जैसे भी हों, (चाहे आप) तथता के अर्थों (परमार्थ) में ही गोचर (विषय) हों, फिर भी लोकव्यवहार का आश्रय करके भक्तिपूर्वक मैं गुरु (भगवान् बुद्ध) की स्तुति करूँगा।

अनुत्पन्नस्वभावेन उत्पादस्ते न विद्यते ।

न गतिर्नागतिर्नाथ अभावाय<sup>२</sup> नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

शुद्धः सः सः सः सः सः सः ।

शुद्धः सः सः सः सः सः सः ।

शुद्धः सः सः सः सः सः सः ।

शुद्धः सः सः सः सः सः सः । ३

(स्वभावतः) अनुत्पन्न होने के कारण आपका उत्पाद नहीं है, न कहीं से आगमन और न कहीं गमन है। हे नाथ, अभावस्वरूप आपको मेरा नमस्कार है।

न भावो नाप्यभावोऽसि नोच्छेदो नापि शाश्वतः ।

न नित्यो नाप्यनित्यस्त्वमद्वयाय नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

शुद्धः सः सः सः सः सः सः ।

शुद्धः सः सः सः सः सः सः ।

१. विषयः शुद्धः सः सः सः सः सः सः "गुणः पञ्चैकः सः सः सः सः सः सः" उक्तं गुरुवाच्यम् ।

२. ग-स्वभावाय न ।

མི་རྟག་མ་ལགས་རྟག་མ་ལགས།

གཉིས་མི་མངའ་ལ་ཕྱག་འཆལ་འདྲད། ༡༥

न तो आपका भाव (स्वभावतः) अस्तित्व है और न ही अभाव (संवृतिः) अभाव है। न आपका उच्छेद (सन्तति का उच्छेद) है और न आप शाश्वत (निरपेक्षतः सत्) हैं, न आप नित्य हैं और न अनित्य हैं। इस तरह अद्वय-स्वरूप आपको मेरा नमस्कार है।

न रक्तो<sup>1</sup> हरितमाञ्जिष्ठो वर्णस्ते नोपलभ्यते ।

न पीतः शुक्लः कृष्णो वा अवर्णाय नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

དམར་དང་ལྗང་དང་བཙོད་མདོག་མིན། །

ཐེང་དང་གནག་<sup>2</sup>དང་དཀར་མ་ལགས། །

བྱེད་ལ་ཁ་དྲིལ་ཡོང་མི་དམིགས།

མདོག་མི་མངའ་ལ་ཕྱག་རེའལ་འདྲད། །ལ

न रक्त, न हरा, न माञ्जिष्ठ (मजीठ), न पीत, न शुक्ल (सफेद), न कृष्ण (आशय यह है कि) कोई भी वर्ण आपका उपलब्ध नहीं होता है। इस तरह वर्णरहित आपको (हे नाथ) मेरा नमस्कार है।

न महान् नापि ह्रस्वोऽसि न दीर्घः परिमण्डलः ।

अप्रमाणगतिं प्राप्तोऽप्रमाणाय नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥

ཆེན་པོ་མ་ལགས་རྒྱུ་མ་ལགས།

འིང་དང་ལྷམ་པ་<sup>3</sup>མ་ལགས་ལ།

1. क, ख-रक्ते ।

2. ལྷ། དེ། བསེས། - སེར་དང་ནག

3. ଶ୍ରୀ ପା ମାଧେୟା - ସୁଖ ପଥା

ཆད་མེད་པ་ཡི་དངོས་བརྟེན་པ། ।

ཆད་མི་མངའ་ལ་ཕྱག་འཆལ་འདུད། ॥ १५

न आप महान् (बृहदाकार) हैं और न सूक्ष्म (अत्यन्त छोटे) हैं। न लम्बे और गोलाकार हैं। आप (किसी भी) माप (नाप) से रहित स्वरूप वाले हैं। इस तरह अमेय स्वभाव आपको (हे नाथ) मेरा नमस्कार है।

न दूरे नापि चासन्ने नाकाशे नापि वा क्षितौ ।

न संसारे न निर्वाणे अस्थिताय नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥

རིང་མིན་ཉི་པ་མ་ལགས་ཤིང་། ।

ནམ་མཁའ་མ་ལགས་ས་མ་ལགས། ।

འཁོར་མིན་མྱ་ངན་འདས་མ་ལགས། ।

གནས་མི་མངའ་ལ་ཕྱག་འཆལ་འདུད། १ ॥ १०

न आप दूर में, न समीप में, न आकाश में न पृथ्वी में, न संसार में और न निर्वाण में स्थित हैं। इस तरह अस्थित (कहीं भी स्थित नहीं) स्वभाव वाले आपको मेरा नमस्कार है।

अस्थितः<sup>२</sup> सर्वधर्मेषु धर्मधातुगतिं गतः ।

परां गम्भीरतां प्राप्तो गम्भीराय नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥

ཆོས་རྣམས་ཀྱང་ལ་མི་གནས་པས། ।

ཆོས་ཀྱི་དབྱིངས་ཀྱི་དངོས་གཏུར་ཅིང་། ।

१. ཆོགས་བཅད་འདི་སྟབ་དཔོན་ཆོས་ཀྱི་དབང་པོའི་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་ཀྱི་སྡིང་པོ་བསྐྱས་པ། “ཉི་པར་མ་  
ཡིན་རིང་བར་མིན། །ནམ་མཁའ་མ་ཡིན་སར་ཡང་མིན། །འཁོར་དང་མྱ་ངན་འདས་པར་  
མིན། །གནས་མེད་ཁྱེད་ལ་ཕྱག་འཆལ་ལོ།” ཅིས་གསལ་ཡོད། (བྲ) ‘ཅུ’ ༩༩)

२. ग-अस्थितं।



མཆོག་དུ་ཟབ་པ་ཉིད་འབྱེས་པ། 2 །

ཟབ་མོ་བྱིད་ལ་ཕྱག་རམ་ལ་རད་ད། 3 ། ༥

हे भगवान्, आप सभी धर्मों में अस्थित (अर्थात् किसी भी धर्म में आश्रित नहीं), धर्मधातु (शून्यता) के स्वरूप को प्राप्त तथा परम गम्भीरता को प्राप्त हैं। इस तरह गम्भीर (स्वरूप) आपको मेरा नमस्कार है।

एवं स्तुते<sup>4</sup> स्तुतो भूयादथवा किमुत<sup>5</sup>स्तुतः ।

शून्येषु सर्वधर्मेषु कः स्तुतः केन वा स्तुतः ॥ ९ ॥

དེ་ལྟའི་བསྟོད་པས་བསྟོད་བགྱི་ལམ།

ཡང་ན་འདིར་ཆེ་ཅི་ཞིག་བསྟོད།

ཆོས་རྣམས་ཐམས་ཅད་སྟོང་པ་ལ།

གང་ལ་བསྟོད་ཅིང་གང་གིས་བསྟོད། 7 །༩

इस प्रकार (के स्तोत्र से) स्तुति करने पर (आप) स्तुत (जिनकी स्तुति की गई है) होंगे अथवा कैसे स्तुत होंगे? (अर्थात् नहीं होंगे, क्योंकि) सभी धर्मों के शून्य होने पर कौन स्तुत होता है और किसके द्वारा स्तुति की गई है?

1 གྲོལགོ་སྤར་མར་ “མཚོག་ཏུ་བཟང་པ་གཉིས་” ཞེས་གསལ་ཡང་། འཇགས་སྤྱར་དང་བོད་  
འགྱུར་གཞུང་དཔོན་གསལ་ལྟར་གསལ་ཡོད་པ་འཕྲད་ཆེ།

2. ལྷ་ ཡེ་ བསེར། - བརྟེན་པས།

3. གྲོ་ཤིང་པོ་ཅི་ཉི་ལྔ་མར་ “ཕྱག་འཁོལ་བརྗོད།” ཅེས་གསལ་ཡང་། ལེགས་སྤྱར་དང་  
བོད་འགྲུར་གཞན་དགོང་གསལ་ལྟར་ཡོད།

4. ग-स्तुतः, घ-स्तुतेः।

5. क, ख-किं वत्, घ-वतः।

6. ལྟཱ། དེ། གསེར། = ༡༥་མི།

7. ལེགས་ལྷན་མ། ཚིག་རྒྱུ་ཐ་མ་ “གང་ལ་བསྟོན་དམ་གང་གིས་བསྟོན།” ཅེས་གསལ་ཡོད།

कस्त्वां शक्नोति संस्तोतुमुत्पादव्ययवर्जितम् ।  
यस्य नान्तो न मध्यं वा ग्राहो ग्राह्यं<sup>१</sup> न विद्यते ॥ १० ॥

श्लो० ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥  
५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥  
५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥  
५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥

जो उत्पाद और भङ्ग से रहित है, जिसका न अन्त है और न मध्य है तथा न ग्राहक है और न ग्राह्य है, उस भगवान्, आपकी कौन स्तुति करने में समर्थ है? अर्थात् कोई नहीं।

न गतं नागतं स्तुत्वा सुगतं गतिवर्जितम् ।  
तेन पुण्येन लोकोऽयं व्रजतां सौगतीं गतिम् ॥ ११ ॥

५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥  
५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥  
५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥  
५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥

जिसका न गमन है और न आगमन है, उस गतिरहित सुगत (भगवान् बुद्ध) की स्तुति करके (जो मैंने पुण्य अर्जित किया है) उस पुण्य से यह संसार

- 
1. क, ख-ग्राह्यग्राहो, घ-ग्राह्यग्राहं ।
  2. श्लो० ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥
  3. श्लो० ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥
  4. श्लो० ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥ ५८ ॥

(समस्त प्राणी) सुगत (बुद्ध) की अवस्था को प्राप्त करें। अर्थात् बुद्धत्व पद प्राप्त करें।

॥ इति परमार्थस्तवः समाप्त ॥

कृतिराचार्यनागार्जुनपादानामिति<sup>1</sup> ।

རོན་དམ་པར་བསྟོན་པ་སྟོབ་དཔོན་འཕགས་པ་སྐུ་སྐྱེ་བ་ཀྱིས་  
མཇེན་པ་ཇོགས་སོ། ॥

भवतुसर्वमङ्गलम्



1. घ-चतुर्थ खण्डे परमार्थस्तवः समाप्तम्।



तापाच्छेदाच्च निकषात् सुवर्णमिव पण्डितैः ।

परीक्ष्य भिक्षवो ग्राह्यं मद्रचो न तु गौरवात् ॥

तुलनीय- श्रीमहाबलतन्त्रराज ( स्वे-दगे संस्करण 'ग' पृ० २१६ )

བསྐྱེགས་བཅད་བདར་བའི་གསེར་བཞིན་དུ॥

ཡོངས་སུ་བརྟགས་ནས་ང་ཡི་བཀའ॥

སྤང་བར་བྱ་ཡི་མོས་པའམ॥

གཞན་གྱིས་མཁས་པ་འཇུག་མི་བྱ॥

(དཔལ་སྟོབས་པོ་ཆེའི་རྒྱད་ཀྱི་རྒྱལ་པོ། ཤེ། བཀའ་རྒྱུད། 'ག' ३१६)

ཇི་ལྟར་འཇིག་རྟེན་ལས་དང་ཉོན་མོངས་...

རྒྱུར་བཅས་བྱེད་རྒྱུར་ལྟར་འབྱུང་དང་॥

ལས་དང་ཉོན་མོངས་པ་དག་ལྟོག་རྒྱུ་...

དེ་ཡང་འབྲེན་བས་རབ་ཏུ་གསུངས॥

གང་ན་སྟེ་དང་ག་དང་རྒྱད་པའི་...

སྐྱབས་བསྐྱེད་པའི་པར་མི་གནས་པ॥

ཐར་པའི་མཆོག་དེ་སྐྱབས་བའི་བྱ་མཆོག་...

དེ་ཡིས་རང་གིས་མཁྱེན་རྟེན་གསུངས॥

(འདུས་པ་རིན་པོ་ཆེ་ཏོག་གི་གཟུངས། མདོ། 'ན' १५५)

परिशिष्ट भाग

( १-५ )

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་སྡེ་ཚོ།

( ༡-༥ )

༥ ཆེག་གི་སྤེབ་སྤྱོད་སྤྱོད་པའི་ཚུལ་ལ་...

...ཚུལ་བཞིན་ཤེས་པའི་ཤེས་ལྡན་ཞིང་།

དོན་གྱི་རིན་ཆེན་ཆེན་པོའི་ཆེན་པོས་...

...ཆེས་ཆེར་མངའ་བའི་སྤྱོད་སྤྱོད་ཆོགས་ཀྱི།

གང་སྤྱོད་ཁང་མངའ་མངའ་པར་རབ་སྤྱོད་...

...སྤྱོད་པས་སྤྱོད་པའི་ཡིད་དབང་ཕྱིར།

གཞན་གྱི་སྤྱོད་དང་གས་ངག་གི་དཔལ་འཕྲོག་...

...འཕྲོག་བྱེད་ཡིད་རབ་འཕྲོག་པ་སྤྱོད།

བསྟོད་འོས་རྣམས་ལ་བསྟོད་དབང་སྤྱོད་པའི་སྤྱོད། |

བསྟོད་པའི་དགེ་བ་གང་དེས་ལུས་ཅན་ཀྱན། |

བསྟོད་བྱར་གྱུར་ནས་དེ་དག་རྣམས་ལ་བདག |

བསྟོད་བྱེད་སྤྱོད་དང་གས་མཁན་དབང་འགྱུར་བར་ཤོག |

(འབྲོ་མགོན་ཆོས་རྒྱལ་གྱི་གསུང་བསྟོད་དབང་སྤྱོད་ཆོས་སྤྱོད་དང་གས་

རིན་པོ་ཆའི་རྒྱན་རྣམ་པར་བཀྲ་བ། ཡོད། 'བ' ༡༠༩)



ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་དང་པོ།

प्रथम परिशिष्ट

བཀའ་བསྟན་ནང་བཞུགས་བསྟོད་ཚོགས་རྒྱས་པའི་ངོ་སྟོན།

विस्तृत स्तोत्रगण का परिचय

༡༡། །བསྟོད་ཅིང་བཟླགས་འོས་ཀྱི་ཞིང་མཚོག་དུ་གྱུར་པ་རྒྱལ་བ་དོན་མེ་  
འཆང་དང་ངོ་བོ་དབྱེར་མ་མཆིས་པའི་སྤྲུལ་ཡི་དམ་དང་། སངས་རྒྱས་བྱང་  
སེམས་སོགས་ལ། བསྟོད་པ་མཛད་པ་པོ་ཡང་ཆེ་བའི་ཆེས་མཚོག་སངས་རྒྱས་  
དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་སོགས་འཕགས་ཡུལ་གྱི་ཆད་མར་གྱུར་པའི་སྐྱེས་  
མཚོག་གསེར་གྱི་རི་བོ་མཆར་དུ་མངར་བ་ལྟ་བུ་བྱོན་པ་དེ་དག་གིས་མཛད་པའི་  
བསྟོད་ཅིང་བཟླགས་པའི་བརྒྱམས་ཚོས་ཆེས་མཛད་དུ་བྱུང་ཞིང་། རྒྱ་ཆེ་ལ་རྣམ་  
གྲངས་མང་དག་ཅིག་བཀའ་དགོངས་འབྱེལ་དང་བཅས་པའི་མདོ་ཟླགས་ཀྱི་གསུང་  
རབ་རྣམས་སུ་ཇི་ལྟར་གསལ་བའི་བསྟོད་པ་རྣམས་ཆེ་འོང་རགས་པ་ནས་ཕྱོགས་  
བསྐྱུད་དང་འབྱེལ། རང་གསེས་ཕྱི་ནས་གསལ་ཁ་དོད་པོས་མཆན་བྱང་བཞོད་  
དགོས་གལ་ཆེ་བར་མཐོང་སྟེ། བསྟོད་པའི་སྐོར་གྱི་ཆོས་ཆན་རྣམས་སྤྱིར་བཀའ་  
བསྟན་གཉིས་སུ་བྱེ་ཞིང་། དེ་དག་རེ་རེ་ལ་ཡང་མདོ་ཕྱོགས་དང་ཟླགས་ཕྱོགས་  
གཉིས་སུ་བྱེ་ནས་བཞོད་ཡོད།

དེ་གཉིས་ལས་དང་པོ་བཀའ་འགྱུར་ནང་བཞུགས་བསྟོད་པའི་སྐོར་ལ་ཆ་  
མཚོན་ན་མདོ་ཟླགས་གཉིས་ཀྱི་ནང་ཆོས་ཆན་རང་མཆན་པ་བསྟོད་པའི་སྐོར་

ཡིན་པའི་ཞལ་གསལ་དངོས་སུ་འཁོད་པ་དང་། དེ་ལྟར་མིན་ཡང་ལེའུའི་ནང་  
གསེས་སུ་བསྟན་པའི་སྒྲུབ་ཡིན་པའི་གསལ་ཁ་འཁོད་པ་དང་། དེ་དག་ལ་འགྲེལ་  
པ་ཡོད་པ་ཁག་གི་གསལ་ཁ་དང་། དེ་དག་ལས་གཞན་པའི་བསྟན་པའི་ཞལ་  
གསལ་གང་རྟེན་རྣམས་ཀྱི་གསལ་ཁ་རེ་རེ་བཞིན་བཏོད་ཡོད།

གཉིས་པ་བསྟན་འགྱུར་ནང་བཞུགས་བསྟན་པའི་སྒྲུབ་ལ་སྤྱིར་དཔྱད་  
བསྟན་འགྱུར་སྤྱིར་མ་ཆང་མའི་དབྱར་བསྟན་ཆོགས་ཞེས་སྤེམ་ཆན་གཅིག་ཟུར་དུ་  
བཏོད་ཡོད། འོན་ཀྱང་དེ་དག་དུ་འཁོད་པའི་བསྟན་ཆོགས་ཀྱི་ཕྱག་དཔེ་རྣམས་ནི་  
མདོ་ཕྱགས་རྒྱུད་པའི་བསྟན་ཆོགས་ཀྱི་ཚུལ་དུ་ཡོད་པ་ལས། མདོ་ཕྱགས་གསུང་  
རབ་དགོངས་འགྲེལ་དང་བཅས་པར་གསལ་བའི་བསྟན་པའི་སྒྲུབ་མཐུན་དག་པ་  
དང་། ཆ་ལག་ཡོངས་སུ་ཐོགས་པ་གསལ་མེད་པས་བསྟན་ཆོགས་ཕྱགས་རེ་  
བའི་ཚུལ་དུ་ཡོད། དེ་དག་དུ་གསལ་བའི་བསྟན་ཆོགས་རྣམས་དཀར་ཆག་ཁག་  
དུ་གསལ་བ་ལྟར་ཆོས་ཆན་རང་མཆན་པའི་ཚུལ་དུ་གསལ་ཁ་འཁོད་པའི་བསྟན་  
པའི་སྒྲུབ་ཡིན་པ་ལས། ལེའུའི་ནང་ཆན་དུ་གསལ་བ་དང་། དེ་དག་གི་འགྲེལ་  
པ་ཁག་དུ་གསལ་བ་རྣམས་དེར་འཁོད་མེད། དེས་ན་གོང་སྒྲིམ་བསྟན་འགྱུར་  
ཁག་ནང་གསལ་བའི་བསྟན་ཆོགས་དེ་ནི་བཀའ་བསྟན་གཉིས་ལས་བསྟན་འགྱུར་  
ནང་བཞུགས་དང་། མདོ་ཕྱགས་གཉིས་ལས་མདོ་ཕྱགས་རྒྱུད་པའི་བསྟན་པ་  
རྣམས་ཕྱགས་བསྟུ་མཛད་པ་ཞིག་ཡིན་ནོ། །འདིར་མདོ་ཕྱགས་གཉིས་ཀའི་བསྟན་  
བཅས་རྣམས་སུ་གསལ་བའི་བསྟན་པ་རྣམས་གོང་སྒྲིམ་ལྟར་ཆ་ཕྱེ་ནས་བཏོད་པའི་  
ཚུལ་བ་བྱས་ཡོད།





གཞི་བཟུང་ཡིན། དེ་ཡང་ཕལ་ཆེ་བ་སྐྱེས་སྐྱེས་དང་འབྲེལ་བའི་སྒྲིལ་ཡིན།  
དེའི་ནང་བཟུང་པ་འདྲ་མིན་ ༥༦ ཡོད། དེས་ན་བཟུང་འགྱུར་ནང་བཞུགས་  
ཁྱོན་བཟོམས་བཟུང་པ་གྲངས་ ༣༥༠ ཡོད།

མདོར་ན་བཀའ་འགྱུར་ནང་བཞུགས་ཆོས་ཆུང་རང་མཆུན་པ་དང་། ལེའུའི་  
ནང་མཆུན་དང་། འབྲེལ་པའི་ནང་གསལ་ཁ་འཁོད་པ་བཅས་ཁྱོན་ ༦༥ དང་།  
བཟུང་འགྱུར་ནང་བཞུགས་ ༣༥༠ བཅས་ཁྱོན་བཟོམས་བཟུང་པའི་སྒྲིལ་གཞུང་གྱིས་  
བཟུས་འདྲ་མིན་ ༣༡༥ ཙམ་ཡོད། དེ་དག་གི་སྤྱིང་དཔལ་ལྷ་མོ་ནག་མའི་  
བཟུང་པའི་རྒྱུད་ཀྱི་ནང་གསལ་སྤྱི་བཟུང་པ་ ༡༣ དང་། མདོ་སྤྱི་རྒྱ་ཆེར་རོལ་  
པའི་མདོར་པར་བཟུང་པའི་ལེའུའི་ནང་ཆུང་གི་བཟུང་པ་ ༡༣ བཅས་བཟུང་ན་  
ཁྱོན་བཟུང་པ་ ༣༣༩ ཙམ་ཡོད་པ་བཞིན་དེ་དག་གི་མཆུན་ཤུང་དང་པོད་དང་ཤོག་  
གྲངས་སོགས་ཀྱི་ཞལ་གསལ་རྣམས་འདིར་བཞོད་ཡོད།

བཟུང་པ་འདི་དག་གང་ལས་སྐྱེས་སྐྱེས་བཟུང་བྱ་ཡུལ་གྱི་གཞི་འཛིན་སའི་  
བཀའ་བཟུང་སྤར་མའི་ངོ་སྤྱོད་དང་། སྤར་མ་ཁག་གི་དཀར་ཆག་ནང་བཟུང་  
པའི་གྲངས་བརྟེན་ཆུལ་དང་། ལེགས་སྤར་སྤྱི་བཟུང་པ་ཇི་ཡོད་སོགས་ཀྱི་  
གསལ་བཤད་དང་། སྤྱིར་བཟུང་པ་དང་འབྲེལ་བའི་གནད་དོན་གལ་ཆེ་མང་  
དག་ཅིག་གི་སྒྲིལ་དེ་འདིའི་སྤྱི་སྤྱིང་དང་སྤྱིང་བཟོད་བཅས་སྤྱི་བཞོད་ཡོད་པས་དེ་  
དག་ལ་གཟིགས་པར་འཆལ། ॥

ག བཀའ་འགྱུར་ནང་བཞགས་བསྟོད་ཚིགས་སྟོར།

काग्युर संग्रहान्तर्गतः स्तोत्रगणः

༡ ལྷགས་སྤྱོགས་དང་འབྲེལ་བའི་བསྟོད་པའི་སྒྲུབ།

तन्त्रसम्बद्धः स्तुतिवर्गः

- १ 438- རྩོམ་སྒྲིབ་མ་ལ་ཕྱག་འཆལ་ནི་བྱ་ཅ་གཅིག་གིས་བསྟོད་པ་  
ཡན་ཡོན་དང་བཅས་པ། (རྒྱད། ‘ཅ’ ལ༣-ལ༣)  
नमस्तारैकविशंतिस्तोत्रं अनुशांसासहितम् ।
- २ 551- བཙུག་ལྷན་འདས་ཀྱིས་འཇམ་དཔལ་རྫོན་པོ་ལ་བསྟོད་པ།  
(རྒྱད། ‘པ’ ༡༥)  
भगवता तीक्ष्णमञ्जुश्रियः स्तोत्रम् ।
- ३ 552- འཇམ་དཔལ་ངག་གི་དབང་ཕྱག་ལ་བུ་མོ་བརྒྱུད་ཀྱིས་བསྟོད་  
པ། (རྒྱད། ‘པ’ ༡༤-༡༦)  
अष्टानां कुमारीणां वागीश्वरमञ्जुश्रियः स्तोत्रम् ।

བསྐྱོད་པ་ཆེས་གིན་དུ་བྲག་མ་ཅན་འདི་དང་སང་ཡང་ལེགས་སྒྲུར་སྒྲིད་ཐོག་ཉ་མ་མེད་བཞུགས་  
ཡོད་པར་མ་ཟད། དཔེ་དེབ་མང་པོའི་ནང་སྒྲར་བསྒྲིན་བྱས་ཡོད།

3  
བསྟོད་པ་འདི་ཡོངས་གྲང་ལ་འདོན་སྤེལ་ཆེ་བའི་ ‘གཞི་རྒྱུ་རྒྱ་ལུས་འཆང་བ་པོ། །གེས་  
རབ་རྒྱུ་མེས་རབ་བརྒྱུ་ཅིང་།’ ཞེས་སྐབས་ཀྱི་བསྟོད་ཆིག་དེ་དག་དེ་རྣམས་ལ་ཡོད།  
བྱ་རྒྱུ་ཆོས་འབྱུང་དུ་ ‘འཇམ་དཔལ་ལ་ལྷ་མོ་བརྒྱུ་ཀྱིས་བསྟོད་པ་’ ཞེས་པ་ཞིག་གསལ་  
ཡོད་པ་དེ་དང་འདི་གཉིས་གཅིག་མི་གཅིག་བརྟག་དགོས་པ་རྣམས་ལ་ཡོད། (བྱ་ ཆོས་  
འབྱུང་། 340 དེབ་)





- ༥ བྱལ་བུམ་གྱི་རྒྱལ་པོ་རྒྱལ་མགོ་དགུ་པས་རྒྱ་གསུང་ཐུགས་ཀྱི་སྒོ་  
ནས་བསྟོད་པ། (༣༠༥)
- ༧ ལྷ་མ་ཡིན་གྱི་རྒྱལ་པོ་ཐག་ཟངས་རིས་ཀྱིས་དོན་དམ་པའི་སྒོ་  
ནས་བསྟོད་པ། (༣༠༦)
- ༩ རྣམ་མཁའ་ཁྲིང་གི་རྒྱལ་པོ་དོ་ཆེ་གསེར་མིག་ཅན་གྱིས་བསྟོད་  
པ། (༣༠༧)
- ༡ རྣམ་མཁའི་ལྷ་བྱན་རྣམས་ཀྱིས་བསྟོད་པ། (༣༠༧)
- ༡༠ གཤིན་ཆེ་ནག་པོས་ཆེ་བའི་ཡོན་ཏན་གྱི་སྒོ་ནས་བསྟོད་པ།  
(༣༠༩)
- ༡༡ བུམ་ཟེ་མཆོག་སྤེད་ཀྱིས་ཀུན་ལོ་བཀྱི་བདེན་པ་ལ་བདེན་པར་  
བསྟོད་པ། (༣༠༩)
- ༡༢ བྱང་སྤྱང་ཆེན་པོ་རྟེན་ཅུས་དཔེ་བྱད་ཀྱི་སྒོ་ནས་བསྟོད་པ།  
(༣༠༩)

673- ལྷའི་དབང་པོ་བསྐྱེད་བྱིན་གྱིས་བསྐྱོད་པ། (རྒྱུད། 'བ' 322)

2) བརྗོད་པ་འདིའི་ནང་གསེས་བཞི་པར་ཡོངས་བུགས་ལ་འདོན་སྤྲུལ་ཆེ་བའི་དཔལ་ལྷན་ལྷ་མོའི་  
 བརྗོད་པ་ ‘སེམས་ཉིད་འཕྲིན་ལས་རྣམ་པའི་ཁྱད་པར་ནི།’ ཁྱིམ་སྟོགས་གསལ་ཡོད།  
 ཡང་དེའི་ནང་ཆན་བརྒྱད་པར་ ‘དཔལ་ལྷན་ལྷ་མོ་དཔག་པར་དཀའ་བའི་དོན། །ཐབས་ཀྱི་  
 ཆོ་འཕུལ་རྣམ་མཁའི་མཁའ་ལ་སྤྱོད།’ ཁྱིམ་སྟོགས་གསལ་ཡོད་པས། མདོར་ན་ཡོངས་  
 བུགས་ལ་བརྗོད་སྤྲུལ་ཆེ་བའི་དཔལ་ལྷན་ལྷ་མོ་དང་། འདིར་གསལ་བའི་དཔལ་ལྷ་མོ་ནག་  
 མོ་ཞུ་བ་གཉིས་གཅིག་པ་ཡིན་པར་མདོར་སྤངས་བས་དཔྲད་འཆལ།



- ११ 1090<sup>(245)</sup>- रुद्र-पुत्र-वन्द्य-मन्त्र-वन्द्य-पा ( वज्र-सन्तान- 'श्रु' ३५५ )  
रोगाधिपतिस्तोत्रम् ।
- १२ 1091<sup>(246)</sup>- रुद्र-मन्त्र-वन्द्य-मन्त्र-वन्द्य-पा ( वज्र-सन्तान- 'श्रु' ३५५-  
३५६ )  
देवरेमतीस्तोत्रम् ।
- १३ 1092<sup>(247)</sup><sup>३</sup>- रुद्र-पुत्र-वन्द्य-मन्त्र-वन्द्य-पा ( वज्र-सन्तान- 'श्रु' ३५६ )  
श्रीदेवीसरस्वतीस्तोत्रम् ।

पञ्च-पुत्र-वन्द्य-मन्त्र-वन्द्य-पा ( वज्र-सन्तान- 'श्रु' ३५६ )

परिच्छेदान्तर्गतः स्तुतिवर्गः

360- रुद्र-पुत्र-वन्द्य-मन्त्र-वन्द्य-पा ( वज्र-सन्तान- 'श्रु' ३५६ )  
रोगाधिपतिस्तोत्रम् ।

<sup>१</sup> वन्द्य-पुत्र-वन्द्य-मन्त्र-वन्द्य-पा ( वज्र-सन्तान- 'श्रु' ३५६ )  
रोगाधिपतिस्तोत्रम् ।  
रुद्र-पुत्र-वन्द्य-मन्त्र-वन्द्य-पा ( वज्र-सन्तान- 'श्रु' ३५६ )  
रोगाधिपतिस्तोत्रम् ।  
रुद्र-पुत्र-वन्द्य-मन्त्र-वन्द्य-पा ( वज्र-सन्तान- 'श्रु' ३५६ )  
रोगाधिपतिस्तोत्रम् ।

<sup>३</sup> रुद्र-पुत्र-वन्द्य-मन्त्र-वन्द्य-पा ( वज्र-सन्तान- 'श्रु' ३५६ )  
रोगाधिपतिस्तोत्रम् ।





- 458- དཔལ་དོན་མཁའ་པོ་ཐུགས་གསང་བའི་རྒྱུད་ཅེས་བྲ་བ།  
 श्रीवज्रचण्डचित्तगुह्यतन्त्रम्
- १५ ३१- འཁོར་གྱིས་མངོན་པར་བསྟོན་པའི་ལེའུ། (རྒྱུད། ‘ཇ’  
 ३५-३९)
- 458- བཙམ་ལྷན་འདས་ཕུག་ན་དོན་གསང་བ་མངོན་པར་བསྟན་  
 པའི་རྒྱུད་ཀྱི་རྒྱལ་པོ་ཞེས་བྲ་བ།  
 भगवद्वज्रपाणिगुह्याभिदेशतन्त्रराजनाम
- १९ ३०- མཚན་ཉི་ཤུ་ཅ་གཅིག་གིས་བསྟོན་པའི་ལེའུ། (རྒྱུད། ‘ཇ’  
 ५५-५९)
- 490- དཔལ་དོན་མིང་པོ་ཞེས་བྲ་བའི་རྒྱུད་ཀྱི་རྒྱལ་པོ་ཆེན་པོ།  
 श्रीवज्रमण्डलालंकारो नाम महातन्त्रराजः
- २० १३- དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་བསྟོན་པའི་རྒྱལ་པོ་ཞེས་  
 བྲ་བ། (རྒྱུད། ‘ཐ’ ३३)
- 555- འཕགས་པ་གསེར་འོད་དམ་པ་མཚན་དུ་རྒྱུ་པར་རྒྱལ་བའི་  
 མདོ་ལྗོངས་རྒྱལ་པོ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ།  
 आर्यसुवर्णोत्तमपरमविजयसूत्रराजो नाम महायानसूत्रम् ।

གམས་འོད་དམ་པའི་མདོ་རྒྱལ་འཁོར་བཟུམ་གཟུམ་བཞུགས་པ་ལས་རྒྱལ་པ་ལེའུ་ ༣༡ བུས་  
པ་དེ་རྒྱ་ནག་གི་རྒྱ་ལས་ཤོད་རྒྱ་དུ་བཟུམ་ཞིང་། ཇི་ས་གསལ་པའི་བཟུམ་པའི་རྩོམ་ལེའུ་  
ལྔ་ཡོད་པ་དེ་དག་བསྟོད་པའི་རྩོམ་ཡིན། ཞིབ་དུ་བཟུམ་ན་རྒྱལ་འཁོར་བཟུམ་གཟུམ་གྱི་  
ལེའུའི་ཆ་མང་པོར་འདྲ་བའི་ཆ་ཡོད། མདོ་དེ་དག་རྒྱ་དུ་བཟུམ་ནང་འཛོལ་དགོས་པའི་རྒྱ་  
མཆན་དཔྱད་པར་བྱའོ།





པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱུ་གྱི་ཞིང་ཐམས་ཅད་ལ་བསྟོད་པ།

(གྱིད། 'པ' 300-303)

༣༧- བཅོམ་ལྷན་འདས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གསེར་དང་རིན་པོ་  
 ཆེའི་འབྱུང་གནས་གདུགས་བཙེགས་ལ་བྱུང་ཆུབ་སེམས་  
 དཔའ་ཐམས་ཅད་ཀྱིས་བསྟོད་པ། (རྒྱད། ‘པ’ ༣༧༣)

34- དེ་བཞིན་གཤམས་པ་ཐམས་ཅད་ལ་བསྟོད་པ། (རྒྱད། 'པ'་  
302-303)

557- འཕགས་པ་གསེར་འོད་དམ་པ་མདོ་སྤེའི་དབང་པོའི་རྒྱལ་པོ་  
ཞེས་བྱ་བ་ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ།

आर्यसुवर्णप्रभासोत्तमसूत्रेन्द्रराजो नाम महायानसूत्रम्

५- འདས་པ་དང་མ་འོངས་པ་དང་ད་ལྟར་བྱུང་བའི་དེ་བཞིན་  
གཤེགས་པ་ཐམས་ཅད་ལ་བསྟོད་པ་མེད་ལ་ཕྱེད་པ་ལྟ་བུར་འབྱུང་  
གནས་ཞེས་བྱ་བ། (རྒྱུ། ‘ཕ’ ༡༡-༡༣)

༡༩- བཙོམ་ལྷན་འདས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་གསེར་དང་རིན་པོ་

མདོ་འཁྲིང་པ་དང་བསྐྱེས་པ་གཉིས་ལེགས་སྒྲུབ་ལས་བོད་ལྗོངས་འབྱུང་བ་ཡིན། དེ་མང་  
ལེགས་སྒྲུབ་ལྟ་ཐོག་དོན་སྒྲུབ་བྲལ་པ་དེ་ནི་མདོ་བསྐྱེས་པ་དེ་ཡིན། དེ་ལ་ལེའུ་ ༡  
ཡོད། ལེགས་སྒྲུབ་སྒྲུབ་པའི་ལེའུ་བཅུ་པ་ “སངས་རྒྱུས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཐམས་  
ཅད་ཀྱི་མཆོད་ལེགས་པར་འཇིན་པ་” ཞེས་པ་དེ་བོད་དཔེར་མེད་ལ། བོད་དཔེར་ཡོད་པའི་  
ལེའུ་ ༡༩ པ་ “བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་བསྐྱེད་པ་” ཞེས་པ་དེ་ལེགས་སྒྲུབ་ལ་མེད།



- 842- མཁའ་འགྲོ་མ་མེ་ཁྱེ་འབར་བའི་རྒྱུ།  
डाकिन्यग्निजिह्वाज्वालातन्त्रम्
- 34 30- བསྟོད་པའི་ལེའུ། (རྟིང་རྒྱུ། ‘ག’ 340—343)
- 844- འཇིག་རྟེན་མཆོད་བསྟོད་སྐྱབ་པ་ཅུ་བའི་རྒྱུ་ཅེས་བྲ་བ།  
लोकस्तोत्रपूजाकल्पमूलतन्त्रम्
- 36 4- མཆོད་བསྟོད་ཉེ་བར་བསྐྱབ་པའི་ལེའུ། (རྟིང་རྒྱུ། ‘ག’  
340—343)
- 38 6- ཟབ་མའི་མཆོད་བསྟོད་གནད་ཀྱི་ལེའུ། (རྟིང་རྒྱུ། ‘ག’  
343)

[ཞར་བྱང་།]

ལེའུའི་ནང་ཚན་དུ་གསལ་བའི་བསྟོད་པ་རྣམས་ཀྱི་འབྲེལ་པའི་སྒྲིལ།

परिच्छेदान्तर्गतः स्तुतिवृत्तिवर्गः

- 1180- གྲོ་ཤོ་ཐེའི་བསྐྱུས་པའི་དོན་གྱི་རྒྱ་ཆེར་འབྲེལ་པ།  
 हेवज्रपिण्डार्थटीका
- ३५ १- འདོད་པའི་ལྷ་ལ་བསྟོན་ཅིང་རྒྱུད་ལ་འཇུག་པ་སྟེ་ཡོངས་སུ་  
 བཅད་པ་དང་པོ། (རྒྱུད། ‘ཀ’ १—༥) ཀུན་དགའ་སྟིང་  
 པོས་མཇུག་པ། (आनन्दगर्भः)
- 1336- དཔལ་དགའ་བའི་མེ་དོག་གི་སྟེང་བ།  
 श्री आनन्दपुष्पमाला



མཇེད་པ་པོ། ཡིན་ཏེ་བྱུང་། (इन्द्रभूतिः)

३० १८- རེ་ཁོ་ན་ཉིད་གྱི་ཞི་བའི་བསྟོན་པའི་མཆོད་སྦྱོར་གྱི་དོན་བསྟན་  
པ། (ཐུང་། 'ད' ३१९)

1357- དཔལ་ལྷན་གྱི་སྐར་གྱི་འཁོར་གྱི་སྦྱུང་གྱི་ཐབས་ཡན་ལག་བཅུ་  
གཅིག་པ།

श्रीमद्नक्षत्रमण्डलसाधनैकादशाङ्गं नाम

མཇེད་པ་པོ། ཀླུ་འཕྲུལ་སྤྲུང་། (कालचक्रपादः)

८० ९- མཆོད་པ་དང་བསྟོན་པའི་ཡན་ལག་ (ཐུང་། 'པ' ५९-९०)

1400- འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་གྱི་མཆོད་ཡང་དག་པར་བཇོལ་པའི་  
མཛོད་རྟོགས།

आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीत्यभिसमयः

མཇེད་པ་པོ། ཐུགས་ཇི་ཆེན་པོ་སྦྱུང་རེ་གཅིག་པ།  
(अवलोकितेश्वरः)

८१ ३५- རྩ་བའི་རྒྱུད་ལས་གསུངས་པའི་བསྟོན་པའི་ངེས་པ། (ཐུང་།  
'པ' ३०८-३०५)

1688- བཅོམ་ལྷན་འཕགས་མ་སྦྱོལ་མ་ལ་བསྟོན་པ་ཉི་ཤུ་ཅ་གཅིག་  
པའི་སྦྱུང་གྱི་ཐབས།

भगवतीतारदेव्येकविंशतिस्तोत्रसाधनम्

མཇེད་པ་པོ། སྦྱོང་དཔོན་ཆེན་པོ་ཉི་མ་སྦྱས་པ། (सूर्यगुप्तः)

ལ ༡-༣) བཙོམ་ལྷན་འདས་ཤྲུག་ཐུབ་པས་རྗེ་བཙུན་འཕགས་མ་སྒྲོལ་  
མ་ལ་བསྟོད་པ་༣) གི་སྒྲུབ་ཐབས། (རྒྱ། ‘ཤ’ ༣༥-༣༥)

1827- སྐབ་པའི་སྟོན་པ་ལ་འཇུག་པ།

सिद्धिचर्यावतारः

མཛད་པ་པོ། དཔལ་རྒྱལ་བུ། (श्रीज्ञानवज्रः)

༤༩      ༡༠-    བསྟོད་པའི་ལེའུ།    (རྒྱད། 'ཅི' ༡༡༤-༡༡༥)

2094- མཚན་ཡང་དག་པར་བརྗོད་པའི་ཉེ་བར་བསྐྱུས་པའི་རྣམ་  
པར་རྟོག་གཞིས་བྱ་བ།

नामसंगीत्युपसंहारवितर्कः

མཛད་པ་པོ། དཔལ་གཉིས་མེད་རྣམས། (འདྲེན་བཞུགས་པ་ལྟར་།)

༤༤ ཡ- མེ་ལོང་ལྷ་བུའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་བསྟོད་པ། (སྟུང་། 'མི' ལ༠-  
ལ༣)

ལ- ཡེ་ཤེས་ལཱི་བསྟོད་པའི་དོན་བསྐྱུལ་པ། (གྱུད། 'ཆི' ༡༠-  
༡༣)

2174- གནོད་བྱིན་གྱི་སྤེལ་པོ་ཆེན་པོ་ལག་ན་དེ་རྩི་གསལ་སྤྲོན་ཅན་གྱི་  
སྤྱོད་ཀྱི་ཆེན་པོ་འི་ཆོ་ག

महायक्षसेनपतिनीलाम्बरधरवज्रपाणिमहागणविधिः

མཛད་པ་པོ། སློབ་དཔོན་གྱ་བ་པ། (आचार्यभवपः)

༩༩ གཞུང་པའི་སྒྲུང་ལ། (གྲུང་། 'ཁྱི' ༥-༩)

2185- धुणं कं दं हे भुं दववं ग्रीं न्नुणं पं मुं न्निणं भुं दं वा

वज्रपाण्यतलजिह्ववृत्तिमुक्तावलिः

महं दं पं यो। कृणुं वुञ्छिं कृं मुणसं ठका। (मेघवेगिन्)

८७

३- वञ्छन् पं दं म्महं पं रिं रिं पं। (कृणु। 'हे' ५३-५३)

2533- न्नुणसं म्महं पं दं वणं पं रं वञ्छन् पं रिं कृं कं रं न्नुणं पं

म्महं पं सन्नुणं ग्रीं न्नुं क्खं पं रं वुं वणिं पं

आर्यनामसंगीतिटीका नाममन्त्रार्थावलोकिनी

महं दं पं यो। श्लेषं पं रिं दं हे। (लीलावज्रः)

८८

५- श्लेषं क्खं पं रं वणं पं रिं कं रं ग्रीं दं वुं सन्नुणं ग्रीं यं श्लेषं पं

वञ्छन् पं रिं रिं पं रिं दं वणं दं वुं वुणं पं। (कृणु। 'पु' ८८-

८८)

८९

७- म्मं न्नुं वुं वुं यं श्लेषं ग्रीं रं वणिं वुणं वञ्छन् पं रिं रिं

पं। (कृणु। 'पु' ८८-८८)

९०

८- श्लेषं रं ग्रीं क्खं पं रिं यं श्लेषं ग्रीं श्लेषं वञ्छन् पं रिं रिं

पं। (कृणु। ८८-८८)

९१

९- म्मं क्खं पं क्खं ग्रीं यं श्लेषं ग्रीं रं वणिं वुणं वञ्छन् पं रिं रिं

पं। (कृणु। ८८-८८)



༥༩      ༡༠-    བྱ་བ་ནན་ཏན་གྱི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་སྒོ་ནས་བསྟོན་པའི་རིམ་པ།  
(ཟུང། ༢༩-༡༠༥)

ཡན་ ༡༡- ཉི་བར་བསྐྱུ་བའི་སྒོ་ནས་བསྟོད་པའི་རིམ་པ། (རྒྱུད། ༡༠༥)

३ མདོ་ཕྱགས་དང་འབྲེལ་བའི་བསྟོད་པའི་སྒྲུབ།

सूत्रसम्बद्धः स्तुतिवर्गः

ལེའུའི་ནང་ཚན་དུ་གསལ་བའི་བསྟོད་པའི་ཞལ་གསལ།

( परिच्छेदान्तर्गतः स्तुतिवर्गः )

12- འཕགས་པ་གེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རྒྱལ་དུ་ཕྱིན་པ་བསྐྱེད་སྤོང་པ་ཞེས་  
བྱ་བ།

आर्य-अष्टसाहस्रिकाप्रज्ञापारमिता

4c ཇ- བསྐྱོད་པའི་ལུང་། (ཤེར་སྤྱིན། 'ཀ' ༡༡༣-༡༡༤)

13- བཙམ་ལྷན་འདས་མ་ཡོན་ཏན་རིན་པོ་ཆེ་ལྷན་པའི་ཆིགས་སྒྲུ་  
བཙན་པ།

भगवद्‌रत्नगुणसञ्चयगाथा

ཡུ ར- བསྟོད་པའི་ལེན། (ཤེར་ཕྱིན། 'ཀ' ༤-༧)

གཤམ་མཁོན་པ་ལྟར་ལྟོང་པ་དང་། མདོ་བསྟན་པ་གཉིས་ཀྱི་ལེའུ་དགུ་པར་ ‘བསྟོན་པ་འི་ལེའུ་’  
 ཞེས་པ་དེ་གསལ་ཡོད་ཀྱང་། བསྟོན་པ་རི་ལྷུང་མཛད་རྒྱལ་སྟོན་གྱི་ཞལ་གསལ་མདོན་  
 དཀའ་བས་དཔུང་པར་གྱུ་།



५९

३३- मर्त्य-पञ्च-वर्ण-पञ्च-पञ्च (मर्त्य 'प' १०१-१०५)

१ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (१०१)

२ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (१०२)

३ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (१०३)

४ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (१०४)

५ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (१०५)

६ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (१०६)

७ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (१०७)

८ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (१०८)

९ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (१०९)

१० मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (११०)

११ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (१११)

१२ मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (११२)

१३- मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (मर्त्य 'प' १०९-११०)

६०

१- मर्त्य-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च-पञ्च (मर्त्य 'प' १०९-११०)



[७२'पुट'।]

ཡེའུའི་ནང་ཚན་དུ་གསལ་བའི་བསྟོད་པ་རྣམས་ཀྱི་འགྲེལ་པའི་སྐོར།

परिछेदान्तर्गतः स्तुतिवृत्तिवर्गः

3791- འཕགས་པ་ཤེས་རབ་ཀྱི་པ་འོལ་དུ་ཕྱིན་པ་བརྒྱུད་སྟོང་པའི་  
བཤད་པ་མངོན་པར་རྟོགས་པའི་བྱམ་གྱི་སྒྲུང་བ་ཞེས་བྱ་བ།  
आर्य-अष्टसाहस्रिका-प्रज्ञापारमिताव्याख्या अभिसमयालंकारालो-  
को नाम  
མཇེད་པ་པོ། སྟོབ་དཔོན་སེལྷེ་བཟང་པོ། (हरिभद्रः)

९- བསྟོད་པའི་ཡེའུ། (ཤེར་ཕྱིན། 'ཆ' १०३-१५३)  
3792- བཅོམ་ལྷན་འདས་ཡོན་ཏན་རིན་པོ་ཆེ་སྟུང་པའི་ཆོགས་སུ་  
བཅད་པའི་བཀའ་འགྲེལ་ཞེས་བྱ་བ།  
भगवद्दर्शनगुणसञ्चयगाथा नाम पञ्जिका  
མཇེད་པ་པོ། སྟོབ་དཔོན་སེལྷེ་བཟང་པོ། (हरिभद्रः)

५३ ९- བསྟོད་པའི་ཡེའུ། (ཤེར་ཕྱིན། 'ཇ' ३५-३७)  
3855- དབུ་མ་སྟོང་པོའི་ཆོག་ཡེའུར་བྱས་པ།  
मध्यमकहृदयकारिका

१ འགྲེལ་པ་འདིར་གསལ་བ་ལྟར་རིན་འབྲུང་ཞི་བས་མཇེད་པའི་སྟོང་པོ་མཆོག་(3803)དང་།  
འཛིགས་མེད་འབྲུང་གནས་སྐྱེས་པས་མཇེད་པའི་གནད་ཀྱི་རྩོམ་(3805) དང་། ཇག་  
དྲེལ་གནས་པས་མཇེད་པའི་མན་ངག་ཇེས་འབྲང་(3811)བཅས་ཀྱི་ཡེའུ་དགུ་པ་རྣམས་སུ་  
ཡང་བསྟོད་པའི་སྐོར་དེ་གསལ་ཡོད་པས་རིགས་བསྟེན་བར་བྱའོ།

མཛད་པ་པོ། སློབ་དཔོན་ལེགས་ལྷན་འབྲེང། (भावविवेकः)

༩༩- བསྟོད་པ་དང་མཚན་བསྟན་པའི་ལུ། (དབུ་མ། 'རྩ་  
༩༠)

3856- དབྱ་མ་སྟེང་པོའི་འགྲེལ་པ་རྟོག་གི་འབར་བ།

मध्यमकहृदयवृत्तिः तर्कज्वाला

མཛད་པ་པོ། སློབ་དཔོན་ལེགས་ལྷན་འབྲེང། (भावविवेकः)

༤༥ ༡༡- བསྟོད་པ་དང་དེའི་མཆན་བསྟན་པའི་ལཱུའི་འགྲེལ་པ།  
(དབྱ་ལ། 'ཇ' ༣༣༥-༣༣༩)

3860- དབྱ་མ་རྩ་བའི་འབྲེལ་པ་ཆིག་གསལ་བ་ཞེས་བྱ་བ།

मूलमध्यमकवृत्तिः प्रसन्नपदा नाम

མཇེད་པ་པོ། སློབ་དཔོན་ལྷ་བ་གྲགས་པ། (चन्द्रकीर्तिः)

30- དབུ་མའི་བསྐྱེད་བཅོས་ཀྱི་བསྐྱེད་པ། [གཞུང་དེའི་མཛད་  
ཅུང་གི་ཚུལ་དུ་ཡོད་པ།] དབུ་མ། 'འ' (1999-2000)

གསར་དུ་བཞོད་པའི་བསྟོད་པ་འདི་ནི་དཔལ་ལྷན་ཟླ་བའི་དབུ་མ་ཆིག་གསལ་གྱི་མཛད་གུང་  
བསྟོན་མེད་ཡིན་པ་ལ་དྲོགས་གནས་སྤྱུ་ཙམ་མེད་མོད། འོན་ཀྱང་དེང་སང་ལོགས་སྤྱར་སྤྱང་  
ཐོག་གསར་དུ་སྤར་བསྐྱར་ཞུས་པའི་ནང་པའི་བསྟོད་པ་འདྲ་མིན་ཕྱོགས་བསྐྱུ་བྱས་པའི་དེབ་  
'बौद्धस्तोत्रसंग्रह' ཞེས་པར་གོང་སྤོས་ཀྱི་མཛད་གུང་གི་ཆ་གསུ་གྱུར་པའི་ཆེས་ཁྱད་དུ་  
འཕགས་པའི་རྩོམ་རྩལ་དང་ལྷན་པའི་ཆིགས་བཅད་ ༡༥ ཡོད་པ་དེ་དག་ལ་ “དབུ་མའི་  
བསྟོན་བཅོས་ཀྱི་བསྟོད་པ་” ‘मध्यमकशास्त्रस्तुतिः’ ཞེས་པའི་མཆན་གུང་དང་བཅས་  
དེར་བཞོད་ཡོད། དེ་ལ་གལ་གནད་ཅིག་ཡོད་པར་བསམ་ནས་འདིར་ཡང་བསྟོད་ཆོགས་ཀྱི་  
མཆན་གུང་ནང་བཞོད་པ་ཡིན། མཛད་གུང་གི་ཆ་གསུ་དེ་གཞུང་ངོ་མའི་མཐར་ཐོད་འབྱར་

मध्यमकशास्त्रस्तुतिः

ཁ བསྐྱེད་འགྱུར་ནང་བཞུགས་བསྐྱེད་ཚོགས་སྒྲིམ།

तनययुर-संग्रहान्तर्गतः स्तोत्रगणः

१ རྒྱགས་སྤྱོགས་དང་འབྲེལ་བའི་བསྐྱེད་པའི་སྒྲིམ།

तन्त्रसम्बद्धः स्तुतिवर्गः

५८ 1126- རྩི་ཇི་འཆང་ཆེན་པོའི་བསྐྱེད་པ། (བསྐྱེད་ཚོགས། 'ཀ'

ལྟལ་—ལྟལ་)

महावज्रधरस्तोत्रम्

ཕུག་ན་རྩི་ཇི། (བཟུམ་པོ།)

སྤྱི་མ་ཆང་མར་གསལ་བ་ལྟར་ལེགས་སྤྱི་རྒྱ་དཔེར་ཡང་གསལ་དགོས་ངེས་སུ་སྤྱི་ཡང་།  
དེང་སང་དངོས་སུ་ལེགས་སྤྱི་རྒྱ་དཔེར་ཐོག་བཞུགས་པའི་དབུ་མ་ཆེན་གསལ་བྱི་རྒྱ་དཔེར་  
ཞབས་ལ་དེ་དག་གསལ་མེད་པ་ནི་ཆད་སྒྲིམ་ཏུ་ཅང་ཆེན་པོ་ཞིག་ཡིན་པ་གདོན་མི་ཟ། གཞི་  
ཅའི་དབུ་མ་ཆེན་གསལ་བྱི་ལེགས་སྤྱི་རྒྱ་དཔེར་དང་བོད་དཔེ་གཉིས་ཀྱི་དབར་ལ་ཆང་མ་ཆང་  
གི་ཁྱད་པར་ཏུ་ལས་དགོས་པའི་ཆེན་པོ་ཡོད་པ་འདྲི་ནི། བསྐྱེད་བཅོས་གཞན་གང་ལ་ཡང་  
གཏན་གྱིང་མ་སྤྱིང་ཞིག་རེད་ཅེས་བཞེད་ཀྱང་མ་ཆེན་པ་མེད་པ་ནི་དངོས་སུ་མཆུང་ས་བསྤྱི་  
གནང་ན་མཁུན་པར་འགྱུར་རོ།

१ བསྐྱེད་པ་འདྲི་བསྐྱེད་འགྱུར་ནང་བཞུགས་བསྐྱེད་ཚོགས་ནང་བཞེད་ཡོད་ཀྱང་། དེར་གསལ་བ་  
ཕལ་ཆེ་བ་མདོ་སྤྱོགས་དང་འབྲེལ་བའི་བསྐྱེད་ཚོགས་ཡིན། དེས་ན་འདྲི་རྒྱགས་སྤྱོགས་དང་  
འབྲེལ་བ་ཡིན་པས་འདྲིར་བཞེད་པ་ཡིན། བསྐྱེད་པ་དེའི་མཛད་གྱིང་དུ་ “ནམ་མཁའ་ཆེན་  
པོའི་རྒྱུད་ལས་འབྱུང་བ། རྩི་ཇི་འཆང་ཆེན་པོའི་བསྐྱེད་པ་ཕུག་ན་རྩི་ཇི་མཛད་པ་” ཞེས་  
གསལ་ཡོད་ཀྱང་། བཀའ་འགྱུར་ནང་ “ནམ་མཁའ་ཆེན་པོའི་རྒྱུད་ཀྱི་རྒྱལ་པོ་” ཞེས་པ་  
ཞིག་ཡོད་ཀྱང་། དེར་བསྐྱེད་པ་འདྲིའི་སྒྲིམ་གསལ་མེད་པས་དཔུང་པར་བྱའོ།



- 1222- གྱི་རྩི་ཐུག་པ་བསྟོན་པ། (རྒྱུ་ 'ཉ' 33)  
[हेवज्रस्तोत्रम्]  
མཚོ་སྤྱོད་རྩི་ཐུག་། (सरोरुहवज्रः)
- 1304- དཔལ་དབྱེས་པ་རྩི་ཐུག་པ་བསྟོན་པ། (རྒྱུ་ 'ད' 32-33)  
श्रीहेवज्रस्तोत्रम्  
རིན་ཆེན་རྩི་ཐུག་། (रत्नवज्रः)
- 1307- བདག་མེད་མ་ལྷ་མོ་བཙུལ་པ་བསྟོན་པ། (རྒྱུ་ 'ད' 32-33)  
नैरात्म्यदेवी पञ्चादशस्तोत्रम्  
མི་ཐུབ་སྟོན་པ། (दुर्जयचन्द्रः)
- 1317- འཕགས་མ་སྟོན་མ་གྱི་རྒྱལ་ལའི་བསྟོན་པ། (རྒྱུ་ 'ད' 33-34)  
आर्यताराकुरुकुल्लास्तोत्रम्  
རྩི་ཐུག་ཏེ་རྒྱལ་ (डोम्बीहेरु कः)  
ཉི་མ་སྤྱོད་པ། (सूर्यगुप्तः)
- 1381- དཔལ་དབྱེས་ཀྱི་འཁོར་ལོའི་བསྟོན་པ་རྒྱུ་ཆགས་པ་ཞེས་བྱ་  
བ། (རྒྱུ་ 'པ' 36-37)

ཀ་ལིང་ཀ་ལི་བྱལ་པོའི་སྐུ་མ་ཕྱེ་ཕྱོད་གསུམ་གྱི་ནོན་པའི་མཁས་པ་ཆེན་པོ་ལེགས་པའི་གྲགས་པས་  
མཛད་པའི་བྱུང་ཆགས་ཀྱི་བསྟེན་པ་འདིར་ཆོགས་བཅད་གཉིས་ལས་མེད་ཀྱང་། དཔེ་རིང་



1442- དཔལ་རྫོང་མཁའ་འགྲོའི་བསྟོན་པ་རྒྱུ་ཆགས་ཞེས་བྱ་བ།

(ସ୍ତମ୍ଭ 'ସ' ୩୯୩-୩୯୩)

श्रीवज्रडाकस्तोत्रदण्डकं नाम

དཔལ་ཚོས་ཀྱི་བྲག་ས་པ།      (ཧམ་རྒྱུ་ཆེན་པོ་འཇམ་དཔལ་ལྷ་མོ་ཡི་ཕུང་པོ་ལྟར་ཤིང་།)

1517- གང་པ་བཞི་བཅུ་ཅུ་བརྒྱུད་པ་བསྐྱུར་བའི་བསྟོན་པ། (རྒྱད།)

‘三’ 34-35)

[अष्टाचत्वारिंशत्पादस्तोत्रम्]

1520- དཔལ་འཁོར་ལོ་སྟོན་པའི་བསྟོད་པ། (རྒྱད། 'བ' 34-36)

श्रीचक्रसंवरस्तोत्रं नाम

पुत्रस्य ५॥ (मैत्रिपः)

1530- དཔལ་འཁོར་ལྔ་རྩེ་པའི་དགྲིལ་འཁོར་གྱི་བསྟན་པ། (བྱུང།)

‘ $\exists$ ’ 42-43)

श्रीचक्रसंवरमण्डलस्तोत्रं नाम

शुभाग्र ॥ (सूरकलशः)

१) རྒྱལ་ཆགས་ཀྱི་བསྐྱོད་པ་འདི་རྟོག་གི་བའི་ཆོགས་ཀྱི་གཙུག་གི་ནོར་བུ་དཔལ་ཆོས་ཀྱི་བྲགས་པས་  
 མཛད་ཅིང་། དེ་ནི་ཆོགས་བཅད་གཅིག་གི་བདག་ཉིད་ཅན་དང་། ཆོག་ཁང་རེར་ཆོགས་བར་  
 ༣༧༥ ཅམ་དང་། དཔེ་རིང་ཡིག་ཤིང་ ༥ ཅམ་གྱི་ཆད་ཅན་དུ་ཡོད། རྒྱལ་ཆགས་ལྷེ་བ་  
 རྫོང་གི་ཆོགས་བཅད་རིང་པོའི་ཙམ་ཁྲད་པར་ཅན་དེ་འདྲ་རྒྱལ་བ་དག་འདུན་གྲུབ་གྱིས་མཛད་  
 པའི་འདུལ་རྟེན་རིན་ཆེན་ཤིང་བ་དང་། འདུལ་བའི་སྒྲིང་འབུམ་ཆེན་མོ་བཅས་ཀྱི་མཛད་  
 བྱང་དུ་བཅུམས་པར་མཛད་ཡོད། ཁོ་བོས་ཀྱང་རྒྱལ་དེ་དག་གི་རྩིས་སུ་སློབ་པའི་ཕྱིར་དུ་བྱང་  
 རྒྱལ་མེས་མ་འགྲུལ་གྱི་སྒྲིང་བཛྲ་དུ་དེ་འདྲའི་རྒྱལ་ཆགས་ཀྱི་ཆོགས་བཅད་གྲིས་ཁྲུབ་བྱས་ཡོད།





वज्रयोगिनीस्तोत्रम्

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय । (दीपंकरश्रीज्ञानः)

1595- རྩོམ་མཁའ་མཛོད་མཛོད་པའི་བསྟན་པ། (གྲུག། 'འ'  
༡༡༥)

वज्रवाराहीसंक्षिप्तस्तोत्रम्

अक्षैः५५। (अभिसंकतः)

1603- རྟོ་རྩེ་ཕག་མའི་བསྟོད་པ་རིམ་པ་གཉིས་པ། (རྒྱད། 'འ')

क्रमद्वयवज्रवाराहीस्तोत्रम्

དཔལ་ནགས་ཀྱི་རིན་ཆེན། (श्रीवनरत्नः)

1631- མདུས་ལྔའི་ཀྱིལ་ལོར་གྱི་ལྷ་ལ་བསྟོད་པ། (རྒྱུད། 'ལ'

[ श्रीमहामायासाधनमण्डलविधिः ]

गु.गु.इ.५। (कुकुरिपः)

५५ 1638- རིགས་ལྔ་མཁའ་འགྲོའི་བསྟོན་པ། (གྱུང། 'ཡ' 362)  
[पञ्चकुलडाकस्तोत्रम्]

ॐ षां षं षा (कृष्णः)

1639- དཔལ་ཉི་རུ་ཀ་འཁོར་དང་བཅས་པ་ལ་བསྟོད་པ། (རྒྱད།  
'ཡ' 360-364)

[सानुचरश्रीहेरुकस्तोत्रम्]

ནག་པོ་པ། (ཀུལ་པོ་པ།)

1685- ལྷ་མོ་སྒྲོལ་མའི་བསྟོད་པ་ཉི་ཤུ་ཅུ་གཅིག་པའི་སྒྲུབ་ཐབས།

(सुदा 'अ' ५-१०)

तारादेवीस्तोत्रं एकविंशत्कसाधनं नाम

ॐ स्वस्त्यस्तु (सूर्यगुप्तः)

1688- བཅོམ་ལྷན་འདས་ལྷོ་མོ་སྒྲོལ་མ་ལ་བསྟོད་པ་ཉི་ཤུ་ཅུ་གཅིག་  
པའི་སྒྲུབ་ཐབས། (གྲུ་ 'ཤ' ༣༥-༣༥)

भगवतीतारादेव्येकविंशतिस्तोत्रसाधनम्

ॐ नमः शिवाय (सूर्यगुप्तः)

1689- ལྷ་མོ་ཕྱོད་མ་ཉི་ཤུ་ཅུ་གཅིག་ལ་བསྟོད་པ་རྣམ་དག་གཙུག་གི་  
ཉེར་བྲ། (ཐུང་། ‘བ’ 34-35)

देवीतारैकविंशतिस्तोत्रं विशुद्धचूडामणिः नाम

ॐ म'क्ष'पा (सूर्यगुप्तः)

1690- བྱེད་བ་འཛིན་པའི་བསྟོན་པ། (གྱུད། 'ག' 34-3)

འཕྱོད་པ་འདི་འགས་སྤྱད་སྤྱད་ཐོག་ཡོད་སྤྱད་ 'ཕྱི་' (མི་) ཏུ་སྤྱད་པ་བརྒྱ་པ་འདི་ནང་ཞལ་  
གསལ་བཞེད་ཡོད་ཀྱང་ཆང་མེད་སྤྱད་གསལ་ཡོད།

3 བསྟོན་པ་གསུམ་ཅན་འདི་ཡིགས་རྒྱུར་སྟོན་ཐོག་བསྟུགས་པར་མ་ཟད། ཏིན་ལྷོ་དང་དབྱི་སྟོན་  
 ཏུ་ཡང་བསྟུར་ཡོད། ཏི་ལ་ཐོབ་དེ་མཆོག་རྟེན་ (ཕྱལ་བ་འཛོམས་) ཞེས་པས་མཆད་པའི་  
 འབྲེལ་པ་ཡིགས་རྒྱུར་སྟོན་ཐོག་ཡོད་ཀྱང་བོད་སྟོན་ཐོག་བསྟུར་མེད། བསྟོན་པ་ཡང་རིམ་



स्रग्धरास्तोत्रम्

स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः (सर्वज्ञमित्रः)

१८

1691- स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः (स्रग्धरा 'स' ८३-८४)

स्रग्धरास्तोत्रम्

स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः (सर्वज्ञमित्रः)

१९

1692- स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः (स्रग्धरा 'स' ८५-८६)

(स्रग्धरा 'स' ८५-८६)

आर्यतारास्रग्धरास्तोत्रम्

स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः (सर्वज्ञमित्रः)

२०

1693- स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः (स्रग्धरा 'स' ८७-८८)

आर्यतारास्तोत्रम्

स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः (सूर्यगुप्तः)

२१

1694- स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः (स्रग्धरा 'स' ८९-९०)

स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः (स्रग्धरा 'स' ८९-९०)

देवीताराकुवाक्याध्याशयेन नामस्तोत्रम्

स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः (सर्वज्ञमित्रः)

१३, १८ वसिष्ठाय नमः उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः  
स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः  
स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः स्रग्धरा उदयप्रतिपदि वसिष्ठाय नमः

- १९ 1695- स्त्रो'व'म' द'ग'क' म'क'क'व' व'सु'म'ल' व'स्त्रं'प' (सु'द' 'प' ५३)  
[त्रिरलतारास्तोत्रम्]
- १९ 1703- ल'ध'व'स' म'ल' म' स्त्रो'व' म'रि' व'स्त्रं'प' द'क' व'स' उ'द' व'स' प'  
ले'स' व'रि' व'स्त्रं'प'रि' सु'व'प' (सु'द' 'प' ५५-५०)  
आर्यातारादेवीस्तोत्रसर्वार्थसिद्धिनाम स्तोत्रराजः  
म'रि' उ'द' (मतिचित्रम्)
- १०० 1716- व'क'स' क'क' सु'रि' म' प'रि' ल' म' स्त्रो'व' म'रि' व'स्त्रं'प' (सु'द' 'प' ५३-५८)  
पीठक्रमतारादेवीस्तोत्रम्  
म' व'स्त्रं' द' ह' (अक्षोभ्यवज्रः)
- १०१ 1717- वि'द' व' द' व'द' व'स' म'रि' व'स्त्रं'प' (सु'द' 'प' ५८-५९)  
पीठेश्वरीस्तोत्रम्  
स्त्रो'व' र'रि' व'स' म'रि' द' व'स' प' (मन्त्रिकुलसुरत)
- १०२ 1724- द' ह' व' म' स्त्रो'व' म'ल' व'स्त्रं'प' (सु'द' 'प' ६१)  
वज्रवाराहीतारास्तोत्रम्  
ल' व' व'स' प' (चन्द्रकीर्तिः)
- १०३ 1725- स्त्रो'व' म' ल' म'ल' उ' व'रि' व'स' म'रि' व'स्त्रं'प' (सु'द' 'प' ६१)  
उग्रतारामूलमन्त्रस्तोत्रं नाम

- १०८ 1773- དཔལ་ནག་པོ་ཆེན་པོའི་བསྟོན་པ་རྒྱུད་པ་བརྒྱད་པ། (རྒྱུད།  
'ག' ३७५-३७९)  
श्रीमहाकालाष्टपदस्तोत्रं नाम  
ཀློག་སྒྲུབ། (नागार्जुनः)
- १०५ 1774- དཔལ་ནག་པོ་ཆེན་པོའི་ལ་བསྟོན་པ། (རྒྱུད། 'ག' ३७९)  
श्रीमहाकालस्तोत्रम्  
མཚོག་སྟེང། (वररुचिः)
- १०६ 1775- དཔལ་ནག་པོ་ཆེན་པོའི་ལ་བསྟོན་པ། (རྒྱུད། 'ག' ३७९-  
३८०)  
श्रीमहाकालस्तोत्रम्  
ཨ་བརྒྱུད་ཏི་པ། (अवधुतिपः)
- १०७ 1776- ཇི་བཅུན་དཔལ་ནག་པོ་ཆེན་པོའི་ལ་བསྟོན་པ། (རྒྱུད། 'ག'  
३८०-३८१)  
श्रीभट्टारकमहाकालस्तोत्रम्  
རྩ་མི་སངས་རྒྱལ་གྲགས་པ། (चमिबुद्धकीर्तिः)
- १०८ 1777- དཔལ་ལྷ་མོ་ནག་པོ་ཆེན་པོའི་ལ་བསྟོན་པ་བརྒྱད་པ། (རྒྱུད།  
'ག' ३८१-३८३)  
श्रीमहाकालीदेवीस्तोत्राष्टकं नाम

<sup>१</sup> བསྟོན་པ་ལྟེན་ 1774, 1775, 1776 འདི་དག་ལྷགས་རྒྱུར་རྒྱུད་ཐོག་ཡོད་སྟེར་རྒྱུ་ (མི་  
པའི་ཀློང་) ཏུ་ས་དེ་བ་བཅུ་གཅིག་པའི་ནང་གསལ་ཁ་གཏོང་ཡོད།





- |     |        |   |
|-----|--------|---|
| ११३ | 1837-  | དད་པ་སྤྱོད་པ་ཞེས་བྱ་བའི་བསྟོན་པ། (ཟུང་། ‘ཅི’ ३०५-३०५)   |
|     |        | श्रद्धाप्रलापनाम स्तवः  |
| ११८ | 1894-  | དཔལ་གསང་བ་འདུས་པའི་བསྟོན་པ། (ཟུང་། ‘ཕི’ ३३३)<br>श्रीगुह्यसमाजस्तोत्रम्<br>དཔལ་མར་མེ་མཇེད་ཡེ་ཤེས། (དེཔཎཀར་ཤེ་རྒྱལ་མེ་མཇེད་ཡེ་ཤེས་པ།) |
| ११५ | 1925-  | རྩི་རྩེ་དབྱངས་ཅན་མའི་བསྟོན་པ། (ཟུང་། ‘མི’ ३३-३८)<br>वज्रसरस्वतीस्तोत्रम्<br>དཔལ་འཛིན། (ཤེ་ཐེར་པ།)                                   |
| ११७ | 1968-  | གཤེན་རྩེ་གཤེད་ནག་པོའི་དཀྱིལ་འཁོར་གྱི་བསྟོན་པ། (ཟུང་། ‘མི’ १०८-१०९)<br>कृष्णयमारिमण्डलस्तुति नाम<br>གྲགས་པ། (ཀའི་རྩི་པ།)             |
| ११८ | 1969-  | རྩི་རྩེ་འཛིན་པས་གཤེན་རྩེ་གཤེད་པོ་ལ་བསྟོན་པའི་ཟུང་།<br>(ཟུང་། ‘མི’ १०९-११०)<br>यमारिस्तुतिः तन्त्रवज्रधृक्                           |
| ११५ | 2008A- | དཔལ་རྩི་རྩེ་འཛིན་པ་བྱེད་ཀྱི་བསྟོན་པ། (ཟུང་། ‘ཕི’ ३१५)   |

2 འདི་ཡང་འདུས་པའི་ལྷ་ཚོགས་ཀྱི་བསྟོད་པ་ཡིན།

3 བསྟོན་པ་འདི་ཉི་འོངས་ནས་སྤར་བརྒྱན་ཞུས་པའི་དཀར་ཆག་དེ་བཞུགས་ (TOHOKU)  
ནང་གསལ་མེད་པ་ཆད་མྱོན་དུ་མའོ།

११९	2009-	དེ་ཉིད་ལ་པའི་བསྟོན་པ། (རྒྱུ། 'མི' ३१५-३१९) पञ्चतत्त्वस्तोत्रम्
१२०	2010-	དཔལ་རྩི་ཇི་འཇིགས་བྱེད་ཀྱི་བསྟོན་པ། (རྒྱུ། 'མི' ३१९) [ श्रीवज्रभैरवस्तुति:]
१२१	2011-	དཔལ་རྩི་ཇི་འཇིགས་བྱེད་ཀྱི་བསྟོན་པ། (རྒྱུ། 'མི' ३१९- ३३०) श्रीवज्रभैरवस्तुति དོན་ཡོད་རྩི། (अमोघवज्र:)
१२२	2012-	འཇམ་དཔལ་འཇིགས་བྱེད་ཀྱི་མཆན་གྱི་བསྟོན་པ། (རྒྱུ། 'མི' ३३०-३३१) मञ्जुश्रीवज्रभैरवनाम स्तुति: ལས་ཀྱི་རྒྱལ་པོ། (कार्मराज:)
१२३	2128-	དཔལ་བཅོམ་ལྷན་འདས་རལ་པ་གཅིག་པ་ལ་བསྟོན་པ། (རྒྱུ། 'ཆི' ११३-११५) श्रीभगवद्-एकजटास्तोत्रम्
१२८	2164-	གནོད་སྤྱིན་གྱི་ཕྱི་དཔོན་ཆེན་པོ་ལག་ན་རྩི་ཇི་གོས་ཕྱིན་ཅན་གྱི་ དཀྱིལ་འཁོར་གྱི་ལྷ་ཆོགས་ལ་བསྟོན་པ། (རྒྱུ། 'ཆི' ३७५- ३८०) नीलाम्बरधरवज्रपाणिमहायक्षसेनापतिचक्रमहादेवगण्मण्डलस्तोत्रं नाम



हृदयः (जब्रिपाः)

- 2621- འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་གྱི་མཚན་ཡང་དག་པར་བཟོད་པའི་  
དཀྱིལ་འཁོར་ཐམས་ཅད་ལ་བསྟོད་པ། (གྱུང་། ‘ཅུ’ ༡༣༠-  
༡༣༡)  
आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिसर्वमण्डलस्तोत्रम्  
སོམ་གྱི། (सोमश्री)
- 2698- ཆེ་དཔག་མེད་ལ་བསྟོད་པ། (གྱུང་། ‘ཅུ’ ༤༤-༤༧)  
अमतायुः स्तोत्रम्  
རི་རྒྱུ་རི་དག་ལས་རྣམ་པར་གྱུ་བ། (जेतारिविनयशत्रुः)
- 2706- ངག་གི་དབང་ཕུག་ལ་བསྟོད་པ། (གྱུང་། ‘ཅུ’ ༧༥)  
वागीश्वरस्तोत्रम्
- 2707- འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་ལ་བསྟོད་པ། (གྱུང་། ‘ཅུ’ ༧༥-  
༧༦)  
आर्यमञ्जुश्रीस्तोत्रम्
- 2708- འཕགས་པ་ངག་གི་དབང་ཕུག་ལ་བསྟོད་པ། (གྱུང་། ‘ཅུ’  
༧༦)  
आर्यवागीश्वरस्तोत्रम्  
ཐེག་ལེ་བུམ་པ། (तिलकलशः)
- 2709- བྱར་ཀྱམ་གཞོན་ཅུ་ལྟ་བུའི་བསྟོད་པ། (གྱུང་། ‘ཅུ’ ༧༦-༧༧)  
नवकुङ्कुस्तवः



ཕྱོགས་ཀྱི་སྒང་པོ།      (དེའི་རྒྱུ་ལྟར་ཤིང་།)

- 2718- འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་གྱི་བསྟོན་པ། (རྒྱུ། 'ཀྱ' ༩༥-  
༩༨)  
आर्यमञ्जुश्रीस्तोत्रं नाम  
སྟོ་སྟེས། (मतिः)
- 2720- འཕགས་པ་དོན་ཡོད་ཞགས་པ་ལྷ་ལྷའི་བསྟོན་པ། (རྒྱུ། 'ཀྱ'  
༩༩-༩༧)  
आर्यामोघपाशपंचदेवस्तोत्रम्  
ཅན་བློ་མི། (चन्द्रगोमिन्)
- 2721- འཕགས་པ་དོན་ཡོད་ཞགས་པའི་དཀྱིལ་འཁོར་གྱི་ལྷ་ཆོགས་  
ལ་བསྟོན་པ་བློ་མ་མེད་པའི་འོད། (རྒྱུ། 'ཀྱ' ༩༧-༩༩)  
आर्यामोघपाशमण्डलदेवगणस्तोत्रं विमलप्रभा नाम
- 2722- འཇིག་རྟེན་མགོན་པོའི་བསྟོན་པ་ཡིད་འཕྲོག་སྟོན་འཇོམས།  
(རྒྱུ། 'ཀྱ' ༩༩-༩༩)  
मनोहरपापविदारणं नाम लोकनाथस्तोत्रम्  
ཅན་བློ་མི། (चन्द्रगोमिन्)
- 2723- ཐུགས་རྗེ་ཆེན་པོ་ལ་བསྟོན་ཅིང་བསྐྱེལ་བ། (རྒྱུ། 'ཀྱ' ༩༩-  
༩༩)  
महाकारुणिकस्तोत्रचोदना  
སྟེ་བ། (चन्द्रः)



- १३९ 2724- འཇིག་རྟེན་དབང་ཕྱག་གི་བསྟོན་པ། (གྱུང། 'ཀྱ' ९३-९३)  
 लोकेश्वरस्तोत्रं नाम  
 ཅུ་རྟོ། (चर्पतिः)
- १८० 2725- འཕགས་པ་དོན་ཡོད་ཞགས་པ་ལྷ་ལའི་བསྟོན་པ། (གྱུང། 'ཀྱ'  
 ९३)  
 आर्यामोघपाशपञ्चदेवस्तोत्रम्  
 ཞེ་རཔ་དྱི། (एरपतिः)
- १८१ 2726- འཕགས་པ་ཐུན་རས་གཟིགས་དབང་ཕྱག་ལ་ཅུ་པ་ཁྲི་ས་  
 'བཅུ་མས་པའི་བསྟོན་པ།' (གྱུང། 'ཀྱ' ९३-९५)  
 आर्य-अवलोकितेश्वरस्य चर्पटिचितस्तोत्रम्  
 ཅུ་རཔ་ཁྲི། (चर्पटिः)
- १८३ 2728- འཇིག་རྟེན་དབང་ཕྱག་གི་བསྟོན་པ་བརྒྱུ་པ། (གྱུང། 'ཀྱ'  
 ९७-१००)  
 लोकेश्वरशतकस्तोत्रम्  
 དཔལ་དོ་ཇེ་ལ། (श्रीवज्रदेवः)
- १८३ 2729- འཇིག་རྟེན་དབང་ཕྱག་ལ་བསྟོན་པ། (གྱུང། 'ཀྱ' १००)  
 लोकेश्वरस्तोत्रम्  
 དཔལ་ལོ། (लक्ष्मीः)

१ བསྟོན་པ་འདི་ལེགས་སྒྲུབ་སྒྲུབ་ཐོག་ཡོད་སྟོར་གྱི་གསལ་ཁ་ རྩི་ (ཧི་) དུས་དེབ་བཅུ་པའི་  
 རྣང་བཞོན་ཡོད། (१०३)

- १८८ 2730- རྩ་བུ་སྒྲིང་གི་ཐུགས་རྩི་ཆེན་པོ་ལྟ་ལྟ་བུ་བསྐྱོད་པ། (རྒྱ་  
'ཏུ' १०८-१०९)  
मणिद्वीपमहाकारुणिकपञ्चदेवस्तोत्रम्  
ན་དཔྱངས། (अश्वघोषः)
- १८९ 2731- འཕགས་པ་ཐུན་རས་གཟིགས་དབང་ལྷུག་ལ་བསྐྱོད་པ། (རྒྱ་  
'ཏུ' १०८)  
आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम्  
ཅན་དྲ་གོ་མི། (चन्द्रगोमिन्)
- १९० 2732- ཐུགས་རྩི་ཆེན་པོ་ལ་སྒྲིང་ཐུགས་ཀྱིས་བསྐྱོད་པ། (རྒྱ་ 'ཏུ'  
१०८-११०)  
महाकरुणिककुवाक्यस्तोत्रं नाम  
ཅན་དྲ་གོ་མི། (चन्द्रगोमिन्)
- १९१ 2733- ཐུགས་རྩི་ཆེན་པོ་ལ་སྒྲིང་ཐུགས་ཀྱིས་བསྐྱོད་པ་བྱིན་རྒྱལ་ཅན།  
(རྒྱ་ 'ཏུ' १११-११२)  
महाकरुणिककुवाक्यस्तोत्रं साधिष्ठानं नाम  
ཐུན་པ་ཐུགས་པ། (चन्द्रकीर्तिः)
- १९२ 2733A- འཕགས་པ་ཐུན་རས་གཟིགས་ལྷ་བསྐྱོད་པ་གཟུངས་ཐུགས་  
དང་བཅས་པ། (རྒྱ་ 'ཏུ' ११३)  
आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रं धरणीसहितम्

- १८९ 2734- ལྷིང་ཇི་ལ་བཞུང་པ། (ཐུང། 'ཀུ' ११३-११३)  
करुणास्तोत्रम्  
ཀུན་གྱི་ཀ། (सर्वदत्तः)
- १५० 2735- དཔལ་འཕགས་པ་སྤྱན་རས་གཟིགས་དབང་ཕུག་ལ་བཞུང་པ།  
(ཐུང། 'ཀུ' ११३-११८)  
श्री-आर्यावलोकितेश्वरस्तुतिर्नाम  
ཆེ་མཇེས། (चन्द्रसुन्दरी)
- १५१ 2735A- འཕགས་པ་འཇིག་རྟེན་དབང་ཕུག་ལ་ཀུའི་རྒྱལ་པོ་ཞོར་རྒྱལ་  
གྱིས་བཞུང་པ། (ཐུང། 'ཀུ' ११८)  
आर्यलोकेश्वरस्य वासुकिनागराजस्तोत्रम्  
ཀུའི་རྒྱལ་པོ་ཞོར་རྒྱལ་གྱི་བྱ། (नागराजवासुकिः)
- १५२ 2738- འཕགས་པ་སྤྱན་རས་གཟིགས་དབང་ཕུག་ལ་བཞུང་པ། (ཐུང།  
'ཀུ' १३५-१३७)  
आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम्  
དཔལ་མོ། (लक्ष्मीः)
- १५३ 2739- འཕགས་པ་སྤྱན་རས་གཟིགས་དབང་ཕུག་གི་བཞུང་པ། (ཐུང།  
'ཀུ' १३७-१३९)  
आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम्  
དཔལ་མོ། (लक्ष्मीः)



- १५८ 2740- हे वतुक् सुवशा हे के वतुक् वतुक् वतुक् (कुटु १३७)  
भट्टारकमहाकरुणिकस्तोत्रम्  
वतुक् वतुक् (लक्ष्मीः)
- १५५ 2859- अहं वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् (कुटु १८७-१८८)  
लोकेश्वरसिंहनादस्तोत्रं नाम  
वतुक् वतुक् (तिलकः)
- १५६ 2889- वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् (कुटु १८०-१८१)  
श्रीवज्रपाणिस्तोत्रम्  
वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् (दीपंकरश्रीज्ञानः)
- १५७ 2890- वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् (कुटु १८१)  
भगवद्वज्रपाणिस्तोत्रम्
- १५८ 2896A- वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् (कुटु ३५०)  
होमकालिकस्तोत्रम्  
वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् (दिवाकरवज्रः)
- १५९ 2915- वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् (कुटु ३१८-३१९)  
श्रीवज्रविदारणास्तोत्रम्  
वतुक् वतुक् वतुक् वतुक् (मणिवज्रः)

- १५० 3060- त्रिंशद्विंशत्यक्षरं पञ्चमं पञ्चमं पञ्चमं पञ्चमं (त्रिंशद्विंशत्यक्षरं ११५)  
आर्याचलक्रोधराजस्तोत्रम्  
दशमं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं (दीपंकरश्रीज्ञानः)
- १५१ 3061- त्रिंशद्विंशत्यक्षरं पञ्चमं पञ्चमं पञ्चमं पञ्चमं (त्रिंशद्विंशत्यक्षरं ११५-११८)  
आर्याचलक्रोधराजस्तोत्रम्  
दशमं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं (दीपंकरश्रीज्ञानः)
- १५२ 3109- चतुर्विंशत्यक्षरं पञ्चमं पञ्चमं पञ्चमं पञ्चमं (त्रिंशद्विंशत्यक्षरं ३०५)  
उष्णीषसितातपत्रास्तोत्रम्
- १५३ 3115- चतुर्विंशत्यक्षरं पञ्चमं पञ्चमं पञ्चमं पञ्चमं (त्रिंशद्विंशत्यक्षरं ३१५)  
भगवत्युष्णीषविजयास्तोत्रम्  
चतुर्विंशत्यक्षरं (चन्द्रगोमिन्)
- १५८ 3116- दशमं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं (त्रिंशद्विंशत्यक्षरं ३१५-३१८)  
आर्योष्णीषसितातपत्रास्तोत्रम्

- १७५ 3145- རྩོམ་འཛིན་པས་ལེགས་པར་གསུངས་པའི་བསྟན་པ། (རྒྱུ།  
'ཡུ' १७६-१७७)  
वज्रधरसंगीतिस्तुतिः
- १७६ 3146- བསྟན་པའི་ཕན་ཡོན། (རྒྱུ། 'ཡུ' १७७)  
स्तुत्यनुशंसः
- १७७ 3667- དཔལ་ཆེན་མོ་སྟོན་མའི་བསྟན་པ། (རྒྱུ། 'ཡུ' ३७६-  
३७७)  
श्रीमहातारास्तोत्रं नाम  
ཅན་བློ་མི། (ཅན་གཏུག་མི)
- १७८ 3668- འཕགས་མ་སྟོན་མ་ལ་བསྟན་པ་ཆེགས་སུ་བཅད་པ་བཅུ་  
གཉིས་པ། (རྒྱུ། 'ཡུ' ३७८)  
आर्यतारास्तोत्रं द्वादशगाथा  
ཅན་བློ་མི། (ཅན་གཏུག་མི)
- १७९ 3669- འཕགས་མ་སྟོན་མའི་བསྟན་པ་འཕྲིན་ལས་སྐྱབ་པ་ཞེས་བྱ་བ།  
(རྒྱུ། 'ཡུ' ३७९-३८०)  
आर्यतारास्तोत्रं कर्मसाधनं नाम  
ཅན་བློ་མི། (ཅན་གཏུག་མི)

१ བསྟན་པ་འདི་དང་། གཤམ་གསལ་ཁ་སྟོང་ནང་བཞུགས་བསྟན་པ་ཡང་ ३७८ རྩོམ་  
བསྟན་པ་གཅིག་ཡིན་ཡང་མཚན་བྱང་མི་འདྲ་བ་དང་། འཕྲུལ་མི་འདྲ་བ་ལ་བརྟེན་ནས་ལྷ་  
ཆེས་གཉིས་སུ་འཁོད་ཡོད།





- 3695- འཕགས་མ་གླུ་མོ་སྒྲུབ་མ་ལ་བསྟོན་པ། (རྒྱད། 'མུ' 334)  
 आर्यतारादेवीस्तोत्रम्

3698- ཚངས་པའི་བུ་མོ་དབྱངས་ཅན་མ་ལ་བསྟོན་པས་གྲུབ་པ་ངག་  
 བྱེད་ཟེར་ཞེས་བྲུག། (རྒྱད། 'མུ' 337-330)  
 ब्रह्मपुत्रीसरस्वतीस्तोत्रसिद्धिः वाक्यप्रभा नाम  
 ཡུར་བྲ། (बृहस्पतिः)

3704- གླུ་མོ་དབྱངས་ཅན་གྱི་བསྟོན་པ། (རྒྱད། 'མུ' 344-344)  
 सरस्वतीस्तोत्रं नाम  
 རྒྱ་མོ་ཁོལ། (कालिदासः)

3739- འཕགས་པ་ཆོགས་ཀྱི་བདག་པོ་ཆགས་པ་དེ་མེད་ཀྱི་དམ་ཆོག་གི་  
 བསྟོན་པ། (རྒྱད། 'ཆེ' 344-344)  
 आर्यगणपतिरागवज्रसमयस्तोत्रं नाम  
 དཔལ་མར་མེ་མཛད་ཡེ་ཤེས། (दीपंकरश्रीज्ञानः)

3747- འཕགས་པ་རྒྱལ་མ་འཛིན་ཀྱི་དབང་པོ་ལ་ཁྱད་པར་གྱི་བསྟོན་  
 པ། (རྒྱད། 'ཚུ' 344-344)  
 आर्यजम्भलजलेन्द्रविशेषस्तोत्रं नाम  
 རྫོང་འཛིན་དཔལ། (वसुधश्रीः)

3748- འཕགས་པ་རྒྱལ་མ་འཛིན་ལ་བསྟོན་པ། (རྒྱད། 'ཚུ' 344)  
 आर्यजम्भलस्तोत्रम्







देवातिशयस्तोत्रम्  
 वदे'सुदे'वदण'पौ (शंकरस्वामिन्)

१९१ 1113- छ'लस'धुल'दु'सुद'वर'वल्लद'पदि'कु'के'र'अशे'ल'पा

(वल्लद्वयं कृत्वा 'ग' ८५-८७)

देवातिशयस्तोत्रटीका

मे'स'र'व'पौ'का (प्रज्ञावर्मन्)

१९३ 1114- स'द'स'कु'स'गु'वल्लद'पा (वल्लद्वयं कृत्वा 'ग' ८७)

बुद्धस्तोत्रम्

के'र'कु'क'खा (वसुधारा)

१९३ 1115- के'स'गु'ल'ल'ग'न'स'पदि'अ'क'न'कु'स'के'र'अ'अ'अ'पा'ल'

वल्लद'पा (वल्लद्वयं कृत्वा 'ग' ८७-८९)

धर्मकायाश्रयासामान्यगुणस्तोत्रम्

मे'स'स'के'र' (असंगः)

१९८ 1116- दे'स'क'के'र'ल'वल्लद'पा (वल्लद्वयं कृत्वा 'ग' ८९-९१)

तत्त्वस्तवः

द'प'ल'गु'पौ'का (श्रीवर्मन्)

१९५ 1117- व'दु'द'व'दु'ल'व'ल'वल्लद'पा (वल्लद्वयं कृत्वा 'ग' ९१)

मारजित्तोत्रम्

र'व'द'ग'दि'ल्ला (प्रमुदितदेवः)

- १९६ 1118- ཆོས་ཀྱི་དབྱིངས་སུ་བསྟོན་པ། (བསྟོན་ཆོག་ལ། ‘ཀ’ ७३-  
 ७४)  
 धर्मधातुस्तवः  
 ལྷ་སྦྱུལ། (नागार्जुनः)  
 १९७ 1119- དཔེ་མེད་པར་བསྟོན་པ། (བསྟོན་ཆོག་ལ། ‘ཀ’ ७४-७५)  
 निरौम्यस्तवः  
 ལྷ་སྦྱུལ། (नागार्जुनः)  
 १९८ 1120- འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པར་བསྟོན་པ། (བསྟོན་ཆོག་ལ།  
 ‘ཀ’ ७५-७६)  
 लोकातीतस्तवः  
 ལྷ་སྦྱུལ། (नागार्जुनः)  
 १९९ 1121- སེམས་ཀྱི་དོ་རྟེན་བསྟོན་པ། (བསྟོན་ཆོག་ལ། ‘ཀ’ ७६-  
 ७७)  
 चित्तवज्रस्तवः  
 ལྷ་སྦྱུལ། (नागार्जुनः)  
 २०० 1122- རྟོན་དམ་པར་བསྟོན་པ། (བསྟོན་ཆོག་ལ། ‘ཀ’ ७७)  
 परमार्थस्तवः  
 ལྷ་སྦྱུལ། (नागार्जुनः)





सुश्रुतः (नागार्जुनः)

1128- བསམ་གྱིས་མི་བྱ་བ་ར་བརྟོད་པ། (བརྟོད་ཆོགས། 'ཀ'  
ལ་ཅ-ལ་ཇ)

अचिन्त्यस्तवः

ॐ नमः (नागार्जुनः)

1129- བསྟོད་པ་ལས་འདས་པར་བསྟོད་པ། (བསྟོད་ཆོགས། 'ཀ'  
ལ།)

स्तुत्यतीतस्तवः

७२३/१५२५। (नागार्जुनः)

1130- ལྷ་ན་མེད་པའི་བསྟོན་པ། (བསྟོན་ཚུགས། 'ཀ' ༧༩-༩༠)  
निरुत्तरस्तवः

ॐ नमः (नागार्जुनः)

[illegible]

1131- འཕགས་པ་ཇི་བཅུན་འཇམ་དཔལ་གྱི་དོན་དམ་པའི་བསྟོད་པ།  
(བསྟོད་ཆོགས། ‘ཀ’ ༥༠)

आर्यभट्टारकमञ्जुश्रीपरमार्थस्तुतिर्नाम

ॐ नमः (नागार्जुनः)

1132- རྩི་བཙུན་འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་གྱི་སྤྱང་རྩི་ལ་བསྟོད་པ།

པལྱོད་པ་འདི་པོད་འཇུར་ལ་གཞི་མཛད་ནས་དེར་དུས་ཀྱི་ཆུ་གར་མཁས་པ་ “པྲུམ་མཱི་  
པེལ” ལྷ་པ་དེས་འཇགས་སྒྲུར་སྒྲུབ་ཐོག་ཉམས་གཤིབ་ཏུས་ནས་ (IHQ, VOL, VIII, 701)  
ཞེས་པའི་དུས་དེབ་ནང་སྔར་བསྐྱེད་ཞུས་ཡོད།

द्विः (नागार्जुनः)

ॐ नमः (नागार्जुनः)

२३५ (नागार्जुनः)

द्वादशाकारनामनयस्तोत्रम्

ཡོངས་ལྷན་གྱི་ཚོས་ཕྱོད་ཁག་ནང་གསལ་ཞིང་འདྲོཅ་སྤྱོད་ཆེ་བའི་ཚུལ་དུ་ཡོད་པའི་བསྟོད་པ་  
 འདྲིའི་དབང་ཡོད་པའི་ཆོགས་བཅད་དང་པོ་“ཐབས་མཁས་ཐུགས་རྗེས་ལྷན་གྱི་སྐབས་  
 འཁུར་ཤིང་།” ཞེས་སྐབས་འདིར་གསལ་མེད་ཅིང་། ཆོགས་བཅད་དེ་མཁན་ཆེན་ཞི-  
 བ་འཛོམས་མཛད་པའི་ “དེ་བཞིན་གཤམ་པ་བཟུང་བ་བསྟོད་པ་” ཞེས་པ་དེར་གསལ་ཡོད་  
 དོན་བཞིན་ཕྱིས་སུ་བོད་པའི་མཁས་པ་ཞིག་གིས་ཆོགས་བཅད་དེ་དེ་ནས་བཞེས་དེ་གོང་གསལ་  
 གྱི་བསྟོད་པ་དའི་དབང་བསྟོན་ནས་ཚོས་ཕྱོད་ཁག་ནང་འདྲོཅ་སྤྱོད་མཛད་པ་ཞིག་ལས།  
 ཆོགས་བཅད་དེ་བོད་པའི་མཁས་པས་བཅུ་མས་པར་འདྲོད་པ་ནི་འཐད་པར་མི་མདོཅ་ནོ།



शु.श्रु.५। (नागार्जुनः)

- 323 1136- ཕུག་འཆལ་བའི་བསྟོད་པ། (བསྟོད་ཚོགས། 'ཀ' 43)  
 वन्दनास्तोत्रम्  
 གྲུ་བྱུལ། (འགྲུ་འཛུགས་ཀྱི་ཀློག་ཀྱི་ཐབས་ཀྱི་ཐུགས་སྟོན་།)
- 324 1137- དམུལ་བ་ནས་འདོན་པ་ཞེས་བྱ་བའི་བསྟོད་པ། (བསྟོད་ཚོགས། 'ཀ' 43-44)  
 नरकोद्धारं नाम स्तोत्रम्  
 གྲུ་བྱུལ། (འགྲུ་འཛུགས་ཀྱི་ཀློག་ཀྱི་ཐབས་ཀྱི་ཐུགས་སྟོན་།)
- 325 1138- སངས་རྒྱལ་བཙུག་པོའི་ལྷན་འདས་ལ་བསྟོད་པ་བསྐྱེད་པར་  
 འོས་པ་ལ་བསྐྱེད་པ་པ། (བསྟོད་ཚོགས། 'ཀ' 44-  
 200)

མཆོད་པ་དེ་ལེགས་སྐྱར་སྒྲུབ་པའི་ཐོག་ “बौद्धस्तोत्रसंग्रह” ཞེས་པར་གསལ་ཡོད་ཀྱང་། དེར་  
མཆོད་པ་པོའི་མཚན་གྱི་གསལ་ཁ་འཁོད་མེད།

3 བསྐྱེད་པ་གྲགས་ཅན་འདྲིའི་མཆན་ཤུང་བསྐྱེད་འགྲུར་སྤར་མ་རྣམས་སྤྲུགས་ལ་བ་དེན་ཁི་ལུ་  
 དང་པོ་ནི་མཆན་ཤུང་ལས་གཞུང་སྤྲིའི་མཆན་ཤུང་མིན་པ་ནི་ལུ་ཟེ་རེ་བཞིན་གཟིགས་ན་  
 མཁྱིན་ཐུབ། གོང་གསལ་གྱི་མཆན་ཤུང་དེའི་ཐོག་ལུ་ ༡༩ ལྷན་དུ་ཡོད་པ་ཞིག་དང་།  
 ཡང་ལུ་གཅིག་ཕྱར་དུ་ཡོད་པ་བཅས་ཁྱོན་ལུ་ ༡༩ ཡོད། འོན་ཀྱང་དེ་ཡོད་ཀྱི་ལེགས་  
 སྤྲུང་ཆུང་པོར་ལུ་ ༡༩ ལས་མེད། བསྐྱེད་པ་དེའི་ཐོག་ཤི་ཆུལ་གྱི་མཁས་པ་ཁག་ལྔ་ཙམ་  
 ཅས་ལེགས་སྤྲུང་སྤྱད་ཐོག་དང་། དབྱིན་སྤྱད་ཐོག་ཁག་གསུམ་དང་། དེ་བཞིན་བོད་སྤྱད་  
 དང་ཆུ་མེད་སྤྱད་ཐོགས་ཀྱི་ཐོག་ལ་འདྲ་བསྐྱར་བསྐྱར་ཞིབ་དང་ཡབ་བསྐྱར་ཅི་རིགས་ཀྱི་ཕྱག་  
 ལས་ཆེས་མང་པོ་གནང་ཡོད། དེ་དག་གི་གསལ་ཁ་དར་ཐང་བཀའ་བསྐྱེད་ཀྱི་དཀར་ཆག་



एकोत्तरिकास्तवः

सूत्रितेऽ। (मातृचेटः)

११९ 1142- वदे वर वषषष प सुम तु उ वरि वष्टे प मक र र्क प  
के स सुष प। (वष्टे ङ्ग १०३-१०८)

सूत्रितेऽ। (मातृचेटः)

१२० 1143- के व वष्टे प रि वष्टे प। (वष्टे ङ्ग १०८)  
पदाष्टकस्तोत्रम्

मम अ य स ङ्ग। (अनन्तदेवः)

१२१ 1144- व गे र म के व वषु म व्रि वष्टे प। (वष्टे ङ्ग १०८-१०९)  
त्रिरलस्तोत्रम्

सूत्रितेऽ। (मातृचेटः)

१२२ 1145- व गे र म के व वषु म व्रि वष्टे प रि वष्टे प। (वष्टे  
ङ्ग १०९-११०)

त्रिरलस्तोत्रवृत्तिः

व्रि व रि स ङ्ग। (जिनपुत्रः)

१२३ 1146- व गे र म के व वषु म व्रि वष्टे प। (वष्टे ङ्ग ११०-१११)  
त्रिरलस्तोत्रम्





## गण्डीस्तोत्रगाथा

५५८८५। (अश्वघोषः)

1150- སྤེལ་མར་བསྟོད་པ་ཞེས་བྱ་བ། (བསྟོད་ཆོགས། ‘ཀ’)

১৫১-১৫৩)

मिश्रकस्तोत्रं नाम

ॐ ह्रीं उ॒ह॒ ५८ ॥ पु॒ष्पा॒स॒ ग्री॒ष्वा॒ ५९ ॥ (मातृचेष्टः तथा दिडनागः)

334 1151- དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ཐམས་ཅད་ལ་བསྐྱེད་པ། (བསྐྱེད་  
ཆོགས། ‘ཀ’ ༡༩༣-༡༩༥)

सर्वतथागतस्तोत्रम्

1152- བཙུག་ལྷན་འདས་ཤིང་གྲུབ་པའི་བསྟོད་པ། (བསྟོད་ཆོག་ལ།  
'ཀ' ༡༩༥)

भगवच्छाक्यमुनिस्तोत्रम्

དཀོན་མཆོག་གསུམ་གྱི་འབངས། (त्रिरत्नदासः)

1153- དཔལ་ལྷན་ཇི་བཅུན་བྱང་ཆུབ་ཆེན་པོའི་བསྟོད་པ། (བསྟོད་  
ཆོགས། 'ཀ' ༡༩༥)

श्रीमन्महाबोधिभट्टारकस्तोत्रम्

བསྟོད་པ་འདི་གོང་གསལ་སྟོབ་དཔོན་དཔལ་བས་མཛད་པའི་བསྟོད་པ་བརྒྱ་ལྔ་བརྒྱ་པ་ཞེས་པ་དེ་  
གཞི་རྩ་པ་བཟུང་ནས་སྟོབ་དཔོན་ཕྱགས་སྐར་གསེར་མཛད་པ་ཞིག་ཡིན། རྒྱལ་འདི་ལས་ཙམ་  
འགྲོས་གྱི་ལུགས་ཆ་བཞེས་པའི་སྟོན་མཆོང་ས་སྤྲས་བཞེད་པའི་སྐྱེད་བྱུང་ས་གྲིས་ནི་ན་འབྲེལ་  
བསྟོད་པའི་སྟོབ་མཐ་བསྟོད་པ་ཞེས་པ་དེ་མཛད་ཡོད།

महेश्वरः (वरुचिः)

- १११ 1154- सप्तशतिकाः वल्लदः पः वतुः पः (वल्लदः महेश्वरः 'ग' १८५-१८६)

दशबुद्धस्तवः

कविसः वल्लदः (वनरलः)

- ११२ 1155- अक्षरः महेश्वरः पः वल्लदः पः (वल्लदः महेश्वरः 'ग' १८६-२००)

गुणापर्यन्तस्तोत्रम्

दशशतिकाः महेश्वरः (त्रिलोकासः)

- ११३ 1156- अक्षरः महेश्वरः पः वल्लदः पः वल्लदः पः (वल्लदः महेश्वरः 'ग' २००-२०३)

गुणापर्यन्तस्तोत्रटीका

महेश्वरः वल्लदः (दिङ्नागः)

- ११८ 1157- अक्षरः महेश्वरः पः वल्लदः पः वल्लदः पः वल्लदः पः (वल्लदः महेश्वरः 'ग' २०३)

गुणापर्यन्तस्तोत्रपदकारिका

महेश्वरः वल्लदः (दिङ्नागः)

- ११५ 1158- सप्तशतिकाः महेश्वरः पः वल्लदः पः वल्लदः पः (वल्लदः महेश्वरः 'ग' २०३-२०८)

बुद्धपरिनिर्वाणस्तोत्रम्



ཆོས་ཀྱི་གྲགས་པ། (धर्मकीर्तिः)

- १३६ 1159- བཤགས་བསྟོད། (བསྟོད་ཆོགས། 'ཀ' ३०८-३०९)  
 देशनास्तवः  
 ཅན་བློ་མི། (चन्द्रगोमिन्)
- १३७ 1160- བཤགས་པའི་བསྟོད་པའི་འབྲེལ་པ། (བསྟོད་ཆོགས།  
 'ཀ' ३०९-३१०)  
 देशनास्तववृत्तिः  
 སངས་རྒྱལ་ཞི་བ། (बुद्धशान्तिः)
- १३८ 1161- སངས་དབང་བསྐྱར་བ་ཞེས་བྱ་བའི་བསྟོད་པ། (བསྟོད་  
 ཆོགས། 'ཀ' ३१०-३११)  
 बुद्धाभिषेको नाम स्तोत्रम्
- १३९ 1162- བཅོམ་ལྷན་འདས་ལ་བསྟོད་པ་དཔལ་རྩི་རྩི་འཛིན་གྱི་དབྱངས་  
 ཀྱི་རྒྱ་ཆེར་བཤད་པ། (བསྟོད་ཆོགས། 'ཀ' ३११)  
 श्रीवज्रधरसंगीतिभगवत्स्तोत्रम्  
 ཞི་བ་འཛོ། (शान्तरक्षितः)
- १४० 1163- བཅོམ་ལྷན་འདས་ལ་བསྟོད་པ་དཔལ་རྩི་རྩི་འཛིན་གྱི་དབྱངས་  
 ཀྱི་རྒྱ་ཆེར་བཤད་པ། (བསྟོད་ཆོགས། 'ཀ' ३११-३१२)  
 श्रीवज्रधरसंगीतिभगवत्स्तोत्रटीका  
 ཞི་བ་འཛོ། (शान्तरक्षितः)
- १४१ 1164- དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་ལྷ་ལ་བསྟོད་པ། (བསྟོད་ཆོགས།  
 'ཀ' ३१२)



५३६-५४ (हर्षदेवः)

३८५ ११६८- ५३६-५४ (हर्षदेवः)

५३६-५४ (हर्षदेवः)

अष्टमहास्थानचैत्यवन्दनास्तवः

५३६-५४ (हर्षदेवः)

३८६ ११६९- ५३६-५४ (हर्षदेवः)

५३६-५४ (हर्षदेवः)

तथागतनामसंगीतिकल्पिकभद्रालंकारमाला नाम

५३६-५४ (हर्षदेवः)

३८७ ११७०- ५३६-५४ (हर्षदेवः)

५३६-५४ (हर्षदेवः)

योगचतुर्देवस्तोत्रम्

१ ५३६-५४ (हर्षदेवः)

२ ५३६-५४ (हर्षदेवः)





ནགས་ཀྱི་རིན་ཆེན། (वनरत्नाः)

३५३ 1175- ཚོགས་ཀྱི་དབང་ཕུག་གི་བསྟོན་པ། (བསྟོན་ཚོགས། 'ཀ' ३५३)

गणेश्वरस्तवः

ནགས་ཀྱི་རིན་ཆེན། (वनरत्नाः)

३५३ 1176- དཔལ་རི་ཁྲོད་ཞབས་ཀྱི་བསྟོན་པ་རིན་པོ་ཆེ། (བསྟོན་ཚོགས། 'ཀ' ३५३-३५५)

श्रीशवरपादस्तोत्ररत्न

ནགས་ཀྱི་རིན་ཆེན། (वनरत्नाः)

३५८ 1177- དཔལ་ལྷན་སྒྲུ་མ་ནགས་ཀྱི་རིན་ཆེན་གྱི་བསྟོན་པ་བདུན་པ་  
(བསྟོན་ཚོགས། 'ཀ' ३५५)

श्रीगुरुवनरत्नस्तोत्रसप्तकम्

ནགས་ཀྱི་རིན་ཆེན། (वनरत्नाः)

३५५ 1178- སྤྱིས་པ་རབས་ཀྱི་བསྟོན་པ། (བསྟོན་ཚོགས། 'ཀ' ३५५-  
३५८)

जातकस्तवः

ཡི་ཤེས་གྲགས་པ། (ज्ञानकीर्तिः)

१ བསྟོན་པ་འདི་བསྟོན་འབྲུར་ནང་ལེགས་སྒྲུར་ཐུགས་ཡིག་དང་བོད་སྐད་ཤན་སྒྲུར་གྱི་ཚུལ་དུ་  
བཏོན་ཡོད།





वृत्तमालास्तुतिः

ཡེ་ཤེས་དཔལ་བཤེས་གཉིན། (ज्ञानश्रीमित्रम्)

ག བསྟན་འགྲུལ་ཁ་སྐོང་ནང་བཞུགས་བསྟོད་པའི་སྐུ།

तनग्युर सम्पूरकान्तर्गतः स्तोत्रगणः

(པི་ཀིང་གྲུང་འབྲེལ་ནང་ཚན།)

4505- དཔལ་འཁོར་ལོ་སྤྲུལ་པའི་བསྟོད་པ། (པེ་གིང་། རྒྱུད་འབྲེལ།)

'4' 45-42)

श्रीचक्रसंवरस्तोत्रम्

मैत्रिः ५। (मैत्रीपादः)

4515- དཔལ་ཕྱག་ན་རྟོ་རྩེ་ལ་བསྐྱོད་པ། (པེ་ཀིང་། སྐྱོད་འབྲེལ།)

'3' 33(2)

श्रीवज्रपाणिस्तोत्रम्

པཱཱེན་འགྲུས་ཆེ་བ། (वीर्यचन्द्रः)

4521- རྣམ་པོ་ཆེན་པོ་ལ་བསྟོད་པ། (ཁྲི་ཀོང་།) སྐྱུང་འབྲེལ། 'ཟ'

334)

महाकालस्तोत्रम्

अकॅणं श्रेयः। (वररुचिः)

འདིར་བཞོད་པའི་ཁ་ཤོར་ནང་བཞུགས་ཀྱི་བསྟོད་པ་ན་མས་པེ་གིང་སྤར་མ་གཞི་བཟུང་ཡིན་ཡང་།  
སྤྱིར་པེ་གིང་སྤར་མ་དང་སྤར་མང་གཉིས་འབྲ་བས། བསྟོད་པ་འདི་དག་དེ་གཉིས་ཀར་གསལ་  
ཡོད།









- ३७७ 4765- འཕགས་མ་སྒྲིབ་མ་འཇིགས་པ་ཆེན་པོ་བརྒྱུད་ལས་སྒྲིབ་བའི་  
བསྐྱེད་པ། (ཤི་ཀིང་། ལྷུང་འབྲེལ། ‘བྱ’ ༡༥༥-༡༥༥)  
आर्याष्टमहाभयोत्तारतारास्तवः  
ཅན་བློ་མི། (चन्द्रगोमिन्)
- ३७८ 4766- འཕགས་མ་སྒྲིབ་མ་ལ་བསྐྱེད་པ། (ཤི་ཀིང་། ལྷུང་འབྲེལ།  
‘བྱ’ ༡༥༥)  
आर्यतारास्तोत्रम्  
མར་མེ་མཇེད་བཟང་པོ། (दीपंकरभद्रः)
- ३७९ 4767- འཕགས་མ་སྒྲིབ་མ་ལ་བསྐྱེད་པ། (ཤི་ཀིང་། ལྷུང་འབྲེལ།  
‘བྱ’ ༡༥༥-༡༥༥)  
आर्यतारास्तोत्रम्  
མི་བསྐྱེད་དོ་ཇི། (अक्षोभ्यवज्रः)
- ३८० 4768- དམ་ཆེན་སྒྲིབ་མ་ལ་བསྐྱེད་པ། (ཤི་ཀིང་། ལྷུང་འབྲེལ།  
‘བྱ’ ༡༥༥-༡༥༥)  
समयतारास्तवः  
ངག་གི་དབང་ཕུག། (वागीश्वरः)
- ३८० 4769- བདེ་བའི་འབྲུང་གནས་དཔལ་ལྷན་ཇི་བརྒྱུད་མ་ལ་བསྐྱེད་པ།  
(ཤི་ཀིང་། ལྷུང་འབྲེལ། ‘བྱ’ ༡༥༥-༡༥༥)  
सुखाकरश्रीमतीभट्टारिकास्तोत्रम्

- ३५१ 4770- वज्रदं पंक्तिं वज्रदं पंक्ति (पंक्तिं। वज्रदं पंक्ति '३' १९०-)  
तारास्तोत्रम्  
वज्रदं पंक्ति (नागार्जुनः)
- ३५३ 4771- वज्रदं पंक्तिं वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति  
वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति  
वज्रदं पंक्ति (पंक्तिं। वज्रदं पंक्ति '३' १९०-१९३  
आर्यताराभट्टारिकानामद्वात्रिंशत्स्तोत्रं सर्वार्थसाधकरत्नालंकार-  
संनिधौ नाम  
वज्रदं पंक्ति (सूर्यगुप्तः)
- ३५३ 4773- वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति (पंक्तिं। वज्रदं  
पंक्ति '३' १९०-१९७)  
खदिरवनीतारास्तोत्रम्  
वज्रदं पंक्ति (नागार्जुनः)
- ३५८ 4784- वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति (पंक्तिं।  
वज्रदं पंक्ति '३' ३७८-)  
महाकालस्तोत्रमाला नाम  
वज्रदं पंक्ति (वररुचिः)
- ३५५ 4785- वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति (पंक्तिं। वज्रदं पंक्ति '३'  
३७८-३७५)  
महाकालस्तोत्रम्



सृष्ट्या (भवदेवः)

- ३५६ 4786- རྣམ་པོ་ཆེན་པོ་ལ་བསྟོད་པ། (ཤི་གིང་། རྒྱུད་འབྲེལ། ‘ཟུ’  
 ༡༦༥)  
 महाकालस्तोत्रम्  
 མིདྲིཔ། (मैत्रिपः)
- ३५७ 4787- རྣམ་པོ་ཆེན་པོ་ལ་བསྟོད་པ། (ཤི་གིང་། རྒྱུད་འབྲེལ། ‘ཟུ’  
 ༡༦༥-༡༦༦)  
 महाकालस्तोत्रम्  
 འཇིག་མིད། (अभयः)
- ३५८ 4788- དཔལ་རྣམ་པོ་ཆེན་པོ་ལ་བསྟོད་པ། (ཤི་གིང་། རྒྱུད་འབྲེལ།  
 ‘ཟུ’ ༡༦༦)  
 श्रीमहाकालस्तोत्रम्  
 མཚོག་སྟེད། (वरुचिः)
- ३५९ 4789- རྣམ་པོ་ཆེན་པོ་ལ་བསྟོད་པ། (ཤི་གིང་། རྒྱུད་འབྲེལ། ‘ཟུ’  
 ༡༦༦-༡༦༧)  
 महाकालस्तोत्रम्  
 གླུ་ཆེན་པོ། (महाचक्षुः)
- ३६० 4790- ལྷ་མོ་རྣམ་མཁའི་བསྟོད་པ། (ཤི་གིང་། རྒྱུད་འབྲེལ། ‘ཟུ’  
 ༡༦༧-༡༦༨)

देवीकालीस्तोत्रम्

मङ्गलं स्निह्य (वररुचिः)

३९१ 4791- दपल'ल्ल'म'ङ्गल'म'ल'वल्लद'प'लि'प'व' (पि'गि'द')

श्रु'द'ल'प'व' 'त्रु' ३७५-३७६)

श्रीदेवीकालीस्तोत्रं नाम

मङ्गलं स्निह्य (वररुचिः)

३९२ 4792- दपल'ल्ल'म'ङ्गल'म'ल'वल्लद'प'लि'प'व' (पि'गि'द')

श्रु'द'ल'प'व' 'त्रु' ३७६-३७७)

श्रीदेवीकालीस्तोत्रं नाम

३९३ 4793- दपल'ल्ल'म'ङ्गल'म'ल'वल्लद'प' (पि'गि'द') श्रु'द'ल'प'व'

'त्रु' ३७७)

श्रीदेवीकालीस्तोत्रं नाम

द'ल'प'व' 'त्रु' (ऋषिकौटिल्यः)

३९४ 4794- दपल'ल्ल'म'ङ्गल'म'ल'वल्लद'प' (पि'गि'द') श्रु'द'ल'प'व'

'त्रु' ३७८)

श्रीदेवीकालीस्तोत्रं नाम

मै'त्रि'प' (मैत्रिपः)

३९५ 4795- दपल'ल्ल'म'ङ्गल'म'ल'वल्लद'प' (पि'गि'द') श्रु'द'ल'प'व'

'त्रु' ३७९-३८०)

श्रीदेवीकालीस्तोत्रं नाम

འཇིག་མེད། (अभयः)

4796- དཔལ་ལྷན་ལྷ་མོ་ཀམ་མོ་ལ་བསྐྱོད་པ། (ཤི་ཀིང་། རྒྱུད་  
འབྲེལ། ‘ཟུ’ ༣༧༡)  
श्रीदेवीकालीस्तोत्रं नाम

३७९ 4797- ལས་མཁན་གྱི་བསྟོད་པ། (ཤི་རྒྱུང་། རྒྱུང་འབྲེལ། ‘ཟུ’  
 ३८३-३८३)  
 कर्मकरस्तोत्रम्  
 མཚོག་སྟེན། (བར་རུ་ཅི་ཨེ་)

4798- གནོད་སྤྱིན་ནག་མའི་བསྟོད་པ། (ཤི་ཀིང་། རྒྱུ་འབྲེལ།  
'བྱ' 303-304)  
यक्षकालस्तोत्रम्  
མཚོག་སྤྱིང། (བརྟུ་ཅི་)

4800- རྒྱལ་པོ་ཆེན་པོ་ཞལ་བཞི་པའི་བསྐྱེད་པ་སྟོན་ཉི་ཤུ་པ་  
 ཞེས་བྱ་བ། (པི་གིང་། ཟུང་འབྲེལ། ‘ཟུ’ ༣༧༥-༣༧༩)  
 महासेनापतिचतुर्मुखस्तोत्रं श्लोकविंशक नाम  
 རིན་ཆེན་དོ་ཇེ། (རལ་བཟླ་:)

300 4815- ཉག་པོ་ཆེན་པོའི་བསྟོན་པ་རྩམ་པ་བྲུ་སྟོགས། (པེ་ཀིང་།)  
 ཟུང་འབྲེལ། ‘འུ’ ༡༡)  
 महाकालस्तोत्रं आक्षेपो नाम  
 མཆོག་སྟེན། (བརྟུ་ཅི་)



- |     |       |  |
|-----|-------|--|
| 302 | 4816- | མགོན་པོའི་གཞུང་བསྟོན། (པི་གིང་། ཟུང་འབྲེལ། ‘འུ’ 13)<br>ལྟུང་ལ། (རཀུལ་པུ་)  |
| 303 | 4817- | ནག་པོ་ཆེན་པོའི་བསྟོན་པ། (པི་གིང་། ཟུང་འབྲེལ།<br>‘འུ’ 13)<br>མཐའ་ཆུང་ལོ་ལྔ་ལྟུང་ལ། (མཐའ་ཆུང་ལོ་ལྔ་ལྟུང་ལ།)              |
| 303 | 4818- | ནག་པོ་ཆེན་པོའི་བསྟོན་པ། (པི་གིང་། ཟུང་འབྲེལ།<br>‘འུ’ 13)<br>མཐའ་ཆུང་ལོ་ལྔ་ལྟུང་ལ། (མཐའ་ཆུང་ལོ་ལྔ་ལྟུང་ལ།)              |
| 304 | 4820- | ཡེ་ཤེས་མགོན་པོ་གྲི་བུ་ཅན་གྱི་བདག་བསྟོན་བཟུང་པ་བསྟོན་<br>པ་དང་བཅས་པ། (པི་གིང་། ཟུང་འབྲེལ། ‘འུ’ 14)<br>ལྟུང་ལ། (ལྟུང་ལ།) |
| 304 | 4821- | ནག་པོ་ཆེན་པོ་ལྷན་གྱིས་པོའི་བསྟོན་པ། (པི་གིང་། ཟུང་འབྲེལ།<br>‘འུ’ 15-16)<br>ལྟུང་ལ། (ལྟུང་ལ།)                           |

2 བཟླ་བ་དྲུག་པའི་ཤིང་ལོ་ལ་ཨ་མ་དེ་གསར་ལྷན་ལྷན་ཡོག་དང་བོད་མྱེད་བཅས་ལྷན་ལྷན་པའོད་ཡོད།

[illegible]

- 306 4842- གཞིན་སྤྱིན་ནག་པོ་ཆེན་པོ་ལ་རིན་པོ་ཆེས་བསྟོན་པ་ཞེས་བྱ་བ།  
(པི་ཀིང་། ཟུང་འབྲེལ། 'འུ' 44-450)  
यक्षमहाकालरत्नस्तुतिर्नाम  
ཀ་ན་རི་པ། (ཀན་རི་པ་)
- 307 4852- འཕགས་པ་ཆོགས་ཀྱི་བདག་པོ་ལ་བསྟོན་པ། (པི་ཀིང་།  
ཟུང་འབྲེལ། 'འུ' 44-46)  
आर्यगणपतिस्तुतिः  
ནག་པོ་པ། (ཀྭལ་པ་)
- 308 4864- འཕགས་པ་ཆོགས་ཀྱི་བདག་པོ་ལ་བསྟོན་པ། (པི་ཀིང་།  
ཟུང་འབྲེལ། 'འུ' 100)  
आर्यगणपतिस्तुतिः  
ནག་པོ་པ། (ཀྭལ་པ་)
- 309 4866- ཆོགས་ཀྱི་བདག་པོ་ལ་བསྟོན་པ། (པི་ཀིང་། ཟུང་འབྲེལ།  
'འུ' 103)  
गणपतिस्तोत्रम्  
དོན་ཡོད་དོ་མེ། (འམོག་བཟླ་པ་)
- 310 4868- འདོད་པའི་དབང་ཕུག་གི་བསྟོན་པ། (པི་ཀིང་། ཟུང་འབྲེལ།  
'འུ' 104)

कामेश्वरस्तोत्रम्

उद्गुप (चन्द्रपः)

- ३११ 4873- रसवत्सलं वज्रदं पंक्ति (विगीतं। वृत्तं रसवत्  
'रु' ११७)  
आर्यजम्भलस्तोत्रं नाम  
रिक्तेरिक्तेरिक्ते (रत्नवज्रः)
- ३१३ 4874- रसवत्सलं वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति वज्रदं पंक्ति  
वज्रदं पंक्ति (विगीतं। वृत्तं रसवत् 'रु' ११७)  
वसुपत्युपाधिपञ्चकस्तोत्रं वसुमेधावेशो नाम  
दयलं मरुते मरुते मरुते (दीपंकरश्रीज्ञानः)
- ३१३ 4969- वज्रदं पंक्ति रिके पंक्ति वज्रदं पंक्ति (विगीतं। वृत्तं रसवत्  
'रु' १३८-१३५)  
रत्नस्तोत्रसप्तकः  
रिक्ते (सूर्यः)
- ३१८ 4970- दयलं मरुते वज्रदं पंक्ति रिके पंक्ति (विगीतं। वृत्तं  
रसवत् 'रु' १३५-१३७)  
श्रीशबरस्तोत्रम्  
रसवत् रिके रिके (वनरत्नः)





मोहस्यास्य परिक्षयाय च यतो दृष्टाः प्रतीत्यादय-  
 स्तत्त्वं तत् प्रतिपच्च सैव सुगतैः संकीर्तिता मध्यमा ।  
 कायो धर्ममयो मुनेः स च यतः सा शून्यतेत्युच्यते  
 बुद्धानां हृदयं स चापि महती विद्येति संकीर्त्यते ॥ ३ ॥  
 आचार्य चन्द्रकीर्तिकृतायाः प्रसन्नपदाया  
 अन्तिमांशभूता ( मध्यमकशास्त्रस्तुतिः ) पृ० १५३ )

གང་ཕྱིར་རྟེན་འབྱུང་གཏི་མུག་དེ་ཟད་  
 ...སྟེད་པར་མཐོང་སྟེ་དེ་ནི་དེ་ཉིད་ཡིན།  
 དེ་ཉིད་བདེ་བར་གསེགས་པ་ན་མས་ཀྱིས་  
 ...དབྱ་མའི་ལམ་ཏུ་ཡང་དག་བསྐྱབས་པར་འབྱུང།  
 དེ་ནི་ཐུབ་པའི་ཆོས་ཀྱི་རང་བཞིན་སྐྱར་  
 ...འདོད་དེ་ནི་སྟོང་པ་ཉིད་ཏུ་བཟོད།  
 སངས་རྒྱལ་ན་མས་ཀྱི་ཐུགས་ཡིན་དེ་ནི་  
 ...རིགས་པ་ཆེན་པོ་ཡིན་ནོ་ཞེས་ཀྱང་བསྐྱབས།  
 དབྱ་མ་ཆོག་གསལ་གྱི་མཛད་ཀྱང་གི་ཆ་ཤས།  
 ( གྲེ་བསྐྱབས། དབྱ་མ། 'འ' ༡༩༩ )

ཐུགས་སྒྲུང་གྲགས་པའི་རིགས་ལམ་ཟབ་མོ་ཡིས།  
 ཐུགས་ལས་ན་མ་རྒྱལ་ང་གསང་ཁྱིར་བ་ན།  
 ཐུགས་འཛིན་མོངས་པས་མངོན་སྟོན་གྱིས་མཐོ་བའི།  
 ཐུགས་སྒྲ་ཀུན་གྱི་སྟོང་ཅ་སྟོག་མར་གྲོས།  
 ( རྒྱ་གཞུང་ཐང་གི་གསུང་། མོང་ 'པ' ༡༠༧ )

ཁ་སྐོར་ལྷན་ཐབས་གཉིས་པ། द्वितीयं परिशिष्टम्

## संस्कृत में प्राप्त बौद्ध स्तोत्रों की सूची

ལེགས་སྤྱད་སྒྲིབ་ཐོག་བཞུགས་པའི་ནང་པའི་བསྟོན་ཆོགས།

### १. पाण्डुलिपियों में प्राप्त अप्रकाशित स्तोत्रों की सूची

སྤྱད་ཏུ་མ་ཐོན་ཁྲིང་ལག་བྲིས་ཡིག་རྟེན་ཐོག་ཡོད་པའི་བསྟོན་པའི་མཚན་བུང་།

पाण्डुलिपियों और तत्सम्बन्धित अनेक सूचियों से प्राप्त स्तोत्रों की विस्तृत सूची यहाँ जो दी गयी है, वह दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध अनुभाग की शोधपत्रिका 'धीः' से संकलित की गयी है। इन पत्रिकाओं में "दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थों का परिचय" और "दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थों की आधार सामग्री" ये दो स्थायी स्तम्भ के रूप में प्रकाशित होते हैं। इन दोनों स्तम्भों में संक्षिप्त विवरणों के साथ अनेक स्तोत्रों का संकलन किया गया है। अतः इन दो में दिये गये स्तोत्रों का तुलनात्मक विश्लेषण के साथ यहाँ संग्रह करने का प्रयास किया गया है।

विशेषतः डॉ० ठाकुरसेन नेगी (शोध-अधिकारी) के द्वारा "दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थों की आधार सामग्री" स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रन्थ सूचियों को संगृहीत करके दो भागों में उनका संस्थान से प्रकाशन हुआ है, उन दोनों ग्रन्थों और 'धीः' पत्रिका के १५वें अंक में प्रकाशित स्तोत्र सूची को आधार बनाकर हमने अधिकांश स्तोत्रों की सूची तैयार की है। शेष स्तोत्र 'धीः' पत्रिका के ३०वें और ३१वें अंक से लिये गये हैं।

क्र०स० ग्रन्थ	ग्रन्थकार	अंक	पृष्ठ
१. अपराजितामहाप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्		१९	८०
२. अम्बुधा(यशोध)रास्तवः		१०	९०
३. अभिषेकवज्रमहाकल्पस्तवः		१९	८०
४. अभिषेकवज्रमहाकल्पस्तवः		"	"
५. अरुणवरुणस्तोत्रम्		१०	९०



६.	अष्टमङ्गलगाथास्तोत्रम्	१०	९०
७.	अष्टमङ्गलाष्टकम् (नानास्तोत्रम्)	२९	८४
८.	अष्टमङ्गलस्तवः	१०	९०
९.	अष्टमङ्गलस्तवः	"	"
१०.	अष्टमहाविद्यास्तोत्रम्	१०	९२
११.	अष्टमहास्थानचैत्यवन्दनास्तोत्रम्	१०	९०
१२.	अष्टमातृकानवग्रहगणेशमहाकाल- महाभैरवीस्तोत्रम्	१०	९२
१३.	अष्टमातृकास्तुतिः	९	८२
१४.	अष्टमातृकास्तुतिः	१०	९२
१५.	अष्टमातृकास्तुतिः	"	"
१६.	अष्टमातृकास्तुतिः	"	"
१७.	अष्टमातृकास्तुतिः	"	"
१८.	अष्टमातृकास्तोत्रम्	"	"
१९.	अष्टलोकपालस्तोत्रम्	"	"
२०.	अष्टविधसत्त्वनामस्तोत्रम्	"	"
२१.	अष्टश्मशानस्तोत्रम्	"	"
२२.	अष्टसाहस्रिकाप्रज्ञापारमिता-एकविंशतिस्तोत्रम्	१०	९४
२३.	आदिद्वादशकस्तोत्रम् (मञ्जुश्रीः)	१०	९४
२४.	आदिबुद्धद्वादशस्तोत्रम्	२०	२५
२५.	आर्यतारा-अष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्	१०	९४
२६.	आर्यतारा-एकविंशतिस्तोत्रम्	"	"
२७.	आर्य-ताराबौद्धस्तोत्राणि	१०	९६
२८.	आर्यतारास्तोत्रम् (भिक्षुजिनरक्षितः)	१	५२
२९.	आर्यतारास्तोत्रम् (सर्वज्ञमित्रबालार्कः)	"	"
३०.	आर्यतारास्तोत्रम्	१०	९६
३१.	आर्यतारास्तोत्रम्	"	"
३२.	आर्यतारास्तोत्रम्	"	"

३३.	आर्यातारास्तोत्रम्	"	"
३४.	आर्य-पद्मपाणिलोकेश्वरस्तोत्रम्	"	"
३५.	आर्यस्तवः	"	"
३६.	आर्यसिद्धैकवीरसाधनसंग्रहः	१५	१७०
३७.	अनन्तनागराजस्तवः	१०	९६
३८.	आर्यावलोकितेश्वर-अनन्तनागराजस्तोत्रम्	"	"
३९.	आर्यावलोकितेश्वरकरुणास्तोत्रम् (वन्धवाचार्यः)	"	"
४०.	आर्यावलोकितेश्वरत्रिगुणात्मकस्तोत्रम् (जयप्रतापमल्लः)	१०	९८
४१.	आर्यावलोकितेश्वरमणिमालास्तोत्रम्	"	"
४२.	आर्यावलोकितेश्वररक्षकस्तवः	"	"
४३.	आर्यावलोकितेश्वररञ्जकास्तवः	"	"
४४.	आर्यावलोकितेश्वररत्नमालास्तोत्रम्	"	"
४५.	आर्यावलोकितेश्वररूपस्तोत्रम्	"	"
४६.	आर्यावलोकितेश्वरवन्दनास्तवः	१०	१००
४७.	आर्यावलोकितेश्वरवन्दनास्तोत्रम्	"	"
४८.	आर्यावलोकितेश्वरवेदनास्तोत्रम्	"	"
४९.	आर्यावलोकितेश्वरसप्ताक्षरस्तोत्रम्	"	"
५०.	आर्यावलोकितेश्वरस्तवः	"	"
५१.	आर्यावलोकितेश्वरस्तवराजः (जयप्रतापमल्लदेवः)	२	४४
५२.	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम् (चन्द्रिकान्ता भिक्षुणी)	२	४३
५३.	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम् (यमराजः)	१०	१०२
५४.	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम् (बलिराजः)	"	"
५५.	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम् (महेश्वरः)	"	"
५६.	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम् (उमादेवी)	"	"
५७.	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम् (वासुकिनागः)	"	"
५८.	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम् (अनन्तनागः)	१०	१०४
५९.	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम् (चन्द्रिकान्ता भिक्षुणी)	३१	५२
६०.	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम् (वासुकिनागराजः)	"	"

६१. आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम्	(श्रीवीरकुशः)	"	"
६२. आर्यावलोकितेश्वरस्वरूपस्तोत्रम्		१०	१०४
६३. उग्रतारास्तुतिः	(गौतमः)	२	५१
६४. उग्रतारास्तोत्रम्		१०	१०६
६५. उग्रतारास्तोत्रम्		"	"
६६. उग्रतारास्तोत्रम्		"	"
६७. उग्रतारास्तोत्रशतकम्		१०	१०४
६८. उग्रतारास्नानस्तोत्रम्		१०	१०६
६९. उग्रतारा(ही?)स्तवः		"	"
७०. उमामहेशकृतस्तवः		"	"
७१. एकजटाध्यानस्तोत्रम्		१०	१०८
७२. एकजटिभट्टारिकानामस्तोत्रम्		१०	१०६
७३. एकजटिस्तोत्रम्		"	"
७४. कथास्तोत्रम्		१०	१०८
७५. कमलाकरसर्वतथागतस्तुतिः		"	"
७६. करवीरचण्डमहारोषणस्तोत्रम्		"	"
७७. करुणामयस्तोत्रम्		"	"
७८. कल्पान्तिकस्तोत्रम्		"	"
७९. कल्याणत्रिंशिकास्तोत्रम्		१०	११०
८०. कल्याणपञ्चविंशतिकास्तुतिः		१८	५४
८१. कायू(यो)त्तरस्तोत्रम्		१०	११०
८२. कालिकास्तवः		"	"
८३. कालीस्तोत्रम्		"	"
८४. कुलिशेश्वरस्तोत्रम्		"	"
८५. खसर्पणस्तोत्रम्		२१	६६
८६. गणपतिस्तोत्रम्		१०	११२
८७. गणपतिहृदयस्तोत्रम्		"	"
८८. गीतस्तोत्रादिसंग्रहः		"	"



८९. चक्रसंवरदण्डकस्तुतिः	१७	९६
९०. चक्रसंवरदेवहेरुकस्तुतिः	१०	११४
९१. चक्रसंवरविशुद्धिस्तोत्रम्	"	"
९२. चक्रसंवरहेरुकस्तुतिः	९	८८
९३. चण्डमहारोषणक्रमोदयस्तोत्रम्	१०	११४
९४. चतुर्भुजमहाकालस्तोत्रम्	"	"
९५. चतुर्महाराजश्रीज्योतिरूपस्तोत्रम्	३१	५६
९६. चतुष्पीठसंवरस्तोत्रम्	२९	९२
९७. चतुःषष्टियोगिनीस्तवः	१०	११६
९८. चन्द्रद्वादशनामस्तवः	"	"
९९. चन्द्रिकास्तवः	"	"
१००. चरणदर्शनाभिलाषस्तोत्रम्	"	"
१०१. चरपटिस्तवः	"	"
१०२. चिन्तामणिस्तोत्रटीका	(शाक्यबुद्धिः)	"
१०३. चैत्यवर्णनगीतस्तोत्रम्	१०	११८
१०४. चैत्यवर्णनस्तवः	"	"
१०५. छवस्कामिनी-एकविंशतिस्तोत्रम्	"	"
१०६. छवस्कामिनीदेवीपञ्चविंशतिस्तोत्रम्	"	"
१०७. छवस्कामिनीदेवीस्तोत्रम्	"	"
१०८. छवस्कामिनीस्तुतिः	"	"
१०९. जगद्गुरुपञ्चाक्षरस्तोत्रम्	"	"
११०. जगन्मोहनस्तोत्रम्	१०	१२०
१११. जपमालास्तोत्रम्	"	"
११२. तत्त्वज्ञानसमाधिवज्रदेवीस्तुतिः	"	"
११३. तथागतप्रशंसा	१५	१७२
११४. तथागतस्तोत्रम्	(शान्तिदेवः)	१
११५. तथागतस्तोत्रम्	(बोधिसत्त्वः) सुवर्णप्रभः	५३
११६. तारादेव्या नमस्कारैकविंशतिस्तोत्रम् (सूर्यगुप्तः)	१०	१२०

११७. तारानामस्तोत्रम्	१०	१२०
११८. ताराशतनाम (ताराहृदय)-स्तोत्रम्	२१	७४
११९. तारासहस्रनामस्तोत्रम्	"	"
१२०. तारास्तुतिः	२९	९२
१२१. त्रिगुणात्मकार्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम् (जयप्रतापमल्लदेवः)	२	४१
१२२. त्रियोगिनीनमस्कारस्तवः	१०	१२२
१२३. त्रिरत्नाष्टकस्तोत्रम्	२७	६४
१२४. त्रिलोकनाथस्तोत्रम्	१०	१२२
१२५. त्वरितास्तोत्रम्	"	"
१२६. दशदिक्पालस्तोत्रम्	"	"
१२७. दशदिग्लोकपालस्तोत्रम्	"	"
१२८. दशबलस्तवः	"	"
१२९. दशबलस्तोत्रम्	१०	१२४
१३०. दशवरास्तवः (राजा हर्षदेवः)	२	४३
१३१. दशलोकपालस्तवः	२७	६४
१३२. दीपङ्करस्तोत्रम् (भावाकरः)	१	५७
१३३. दीपङ्करस्तोत्रम्	१०	१२४
१३४. दीपङ्करस्तोत्रम्	"	"
१३५. दीपङ्करस्तोत्रम्	"	"
१३६. दृष्टिचिन्तामणिस्तोत्रम्	२९	९४
१३७. देवदेवीस्तोत्रम्	१०	१२४
१३८. देवमनुष्यस्तोत्रम्	१९	८४
१३९. धर्मधातुकीलीस्तवः	१०	१२४
१४०. धर्मधातुगीतस्तोत्रम्	"	"
१४१. धर्मधातुगीतस्तोत्रादिसंग्रहः	९	९८
१४२. धर्मधातुवागीश्वरगीतस्तोत्रम्	"	"
१४३. धर्मधातुवागीश्वरगीतस्तवः	१०	१२६
१४४. धर्मधातुस्तवः	९	९४

१४५. धर्मधातुस्तवः		१०	१२६
१४६. धर्मधातुस्तोत्रम्	(शिखी तथागतः)	१	५१
१४७. धर्मधातुस्तोत्रम्		१०	१२६
१४८. धर्मधातुस्तोत्रम्		"	"
१४९. धर्मधातुस्तोत्रम्		"	"
१५०. धर्मधातुस्तोत्रम्		"	"
१५१. धर्मधातुस्तोत्रम्		९	९४
१५२. धर्मरत्नस्तोत्रम्		१०	१२६
१५३. धर्मराजस्तुतिः		"	"
१५४. धर्मराजस्तोत्रम्		"	"
१५५. नवग्रह(देवता)स्तोत्रम्		१०	१२८
१५६. नवग्रह(देवता)स्तोत्रम्		"	"
१५७. नवग्रह(देवता)स्तोत्रम्		"	"
१५८. नागपूजास्तोत्रम्		"	"
१५९. नागराजस्तोत्रम्	(दण्डपाणिः)	१	५३
१६०. नागराजस्तोत्रम्		२९	९६
१६१. नानास्तोत्रम्		"	"
१६२. नामसंगीतिस्तोत्रसंग्रहः		१०	१३०
१६३. निरञ्जनास्तोत्रम्		"	"
१६४. निर्विकल्पस्तुतिः		२९	९८
१६५. नैरात्मादेवीहृदयमन्त्रस्तोत्रम्		"	"
१६६. नैरात्म्यदेव्यष्टकस्तवः		१०	१३०
१६७. नैरात्मास्तुतिः		२९	९८
१६८. पञ्चगीतस्तोत्रम्		१०	१३०
१६९. पञ्चजिनस्तोत्रम्		"	"
१७०. पञ्चतथागतगीतस्तोत्रम्		"	"
१७१. पञ्चतथागतज्ञानस्तुतिः		"	"
१७२. पञ्चबुद्धस्तवः		"	१३२



१७३. पञ्चबुद्धस्तुतिः		१०	१३२
१७४. पञ्चबुद्धस्तोत्रम्		"	"
१७५. पञ्चबुद्धस्तोत्रम्		"	"
१७६. पञ्चबुद्धस्तोत्रम्		"	"
१७७. पञ्चबुद्धस्तोत्रम्		"	"
१७८. पञ्चभूस्तोत्रम्	(यशोधरा)	१	५२
१७९. पञ्चाक्षरस्तुतिः		१०	१३४
१८०. पञ्चार्यस्तोत्रम्		"	"
१८१. पञ्चाशत्स्तोत्रम्		"	"
१८२. पद्मनर्तेश्वरस्तोत्रम्		"	"
१८३. पद्मनृत्येश्वरस्तोत्रम्		"	"
१८४. पद्मपाणिलोकाेश्वरस्तोत्रम्		२८	८४
१८५. पीठस्तवः		९	९६
१८६. पीठस्तवः		१०	१३४
१८७. पीठस्तवः		"	"
१८८. पीठस्तवः		"	"
१८९. पीठस्तोत्रम्		९	९६
१९०. पीठस्तोत्रम्		१०	१३४
१९१. पीठस्तवस्तोत्रम् अन्यस्तोत्रं च		१०	१३६
१९२. पूजास्तोत्रसंग्रहः		"	"
१९३. पोटलकास्तोत्रम्		"	"
१९४. प्रज्ञापारमिता-एकविंशतिस्तोत्रम्		"	"
१९५. प्रज्ञापारमितास्तोत्रम्		"	"
१९६. प्रज्ञापारमितास्तोत्रम्		"	"
१९७. प्रज्ञापारमितास्तोत्रम्		"	"
१९८. प्रज्ञोपायस्तोत्रम्		३१	६०
१९९. प्रणिधानस्तुतिः	(महासत्त्वः)	१	५४
२००. प्रतिसरास्तोत्रम्	(यशोधरागर्भस्थबालार्कः)	१	५२

२०१. प्रतिसरास्तुतिः	१०	१३८
२०२. प्रतिसरास्तुतिः	२८	८६
२०३. प्रतिसरास्तोत्रम् (राहुलभद्रः)	१०	१३८
२०४. प्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्	"	"
२०५. प्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्	२९	१०२
२०६. प्रथमाक्षर-सप्त-मिश्रण-संयुक्त-षडाक्षरस्तवः	१०	१३६
२०७. बालरक्षाकरस्तोत्रम्	११	७८
२०८. बुद्धगीतस्तोत्रम्	"	"
२०९. बुद्धगीतिस्तवः	"	"
२१०. बुद्धनामाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्	११	८०
२११. बुद्धभट्टारकबुद्धधर्मसंघस्तोत्रम्	११	७८
२१२. बुद्धभट्टारकयशोधरास्तोत्रम्	"	"
२१३. बुद्धरत्नस्तोत्रम्	"	"
२१४. बुद्धस्तवः (धर्मराजः)	२	४६
२१५. बुद्धस्तवः (उमामहेश्वरौ)	२	४६
२१६. बुद्धस्तोत्रम् (असितऋषिः) ललितविस्तरे	१	५२
२१७. बुद्धस्तोत्रम् (शिवस्कन्दनारायणः)	"	"
२१८. बुद्धस्तोत्रम् (शुद्धोदनः)	"	"
२१९. बुद्धस्तोत्रम् (विश्वामित्रदारकः)	"	"
२२०. बुद्धस्तोत्रम् (पञ्च ऋषयः)	"	"
२२१. बुद्धस्तोत्रम् (वनदेवी)	"	"
२२२. बुद्धस्तोत्रम् (पञ्च ऋषयः)	"	"
२२३. बुद्धस्तोत्रम् (शुद्धोदनः)	"	"
२२४. बुद्धस्तोत्रम् (हृद्देवी)	"	"
२२५. बुद्धस्तोत्रम् (बो० कुलदेवता) सुवर्णप्रभः	१	५३
२२६. बुद्धस्तोत्रम् (आनन्दभिक्षुः)	१	५४
२२७. बुद्धस्तोत्रम्	११	८०
२२८. बुद्धस्तोत्रम्	"	"

२२९. बुद्धस्तोत्रम्	"	"
२३०. बुद्धस्तोत्रम्	"	"
२३१. बुद्धस्तोत्रम्	"	"
२३२. बुधतिस्तोत्रम्	११	१०२
२३३. बोधिसत्त्वषोडशनामस्तोत्रम्	११	८४
२३४. बौद्धस्तवः	११	८०
२३५. बौद्धस्तुतिसंग्रहः	"	"
२३६. बौद्धस्तोत्रम्	११	८२
२३७. बौद्धस्तोत्रम्	"	"
२३८. बौद्धस्तोत्रम्	"	"
२३९. बौद्धस्तोत्रम्	"	"
२४०. बौद्धस्तोत्रम्	"	"
२४१. बौद्धस्तोत्रम्	"	"
२४२. बौद्धस्तोत्रप्रत्यङ्गिरा	"	"
२४३. बौद्धस्तोत्रसंग्रहः	(प० सं० २००)	"
२४४. बौद्धस्तोत्रसंग्रहः	(प० सं० १००)	"
२४५. बौद्धस्तोत्रसंग्रहः	(प० सं० ५१)	"
२४६. बौद्धस्तोत्रसंग्रहः	(प० सं० ७९)	"
२४७. बौद्धस्तोत्रसंग्रहः	(प० सं० ५९)	"
२४८. बौद्धस्तोत्रसंग्रहः	(प० सं० ४६)	"
२४९. भगवतीपञ्चरक्षास्तुतिः	३१	६२
२५०. भगवतीहारीतीभट्टारिकास्तुतिः	११	८४
२५१. भद्रकल्पावदानोद्धृतदण्डपाणिकृत-नागार्जुनस्तवः	"	"
२५२. भद्रचरीस्तोत्रम्	"	"
२५३. भवरत्नाद्विनिर्गत-श्रीहारीत्या बालकरक्षाकरस्तोत्रम्	"	"
२५४. भीमराजस्तुतिः	"	"
२५५. भीमराजस्तोत्रम्	"	"
२५६. भीमराजेश्वरस्तोत्रम्	११	८६



२५७. भीमसेनोत्पत्तिस्तवः		"	"
२५८. भुजङ्गप्रयातपञ्चकस्तोत्रम्	(हारिती यक्षिणी)	१	५०
२५९. भुजङ्गप्रयातस्तोत्रम्	(विभुः)	"	"
२६०. भैरवाष्टकस्तोत्रम्		११	८६
२६१. मगरायस्तवः		११	८८
२६२. मङ्गलस्तोत्रम्		"	"
२६३. मञ्जुदेवस्तोत्रम्	(मञ्जुगर्तः)	१	४९
२६४. मञ्जुनाथस्तोत्रम्		११	८८
२६५. मञ्जुबोधस्तोत्रम्		"	"
२६६. मञ्जुवराख्यतन्त्रम्		१२	८८
२६७. मञ्जुश्रीनमस्कारस्तोत्रम्		११	८८
२६८. मञ्जुश्रीस्तोत्रम्		"	"
२६९. मञ्जुश्रीस्तोत्रम्		"	"
२७०. मञ्जुश्रीस्तोत्रम्		"	"
२७१. मध्यगतस्तोत्रम्		११	९०
२७२. मन्त्रानुसारिणीस्तोत्रम्		"	"
२७३. महाकालस्तोत्रम्	(सुमतिभद्रः)	१	५५
२७४. महाकालस्तोत्रम्		११	९०
२७५. महाकालस्तोत्रम्		"	"
२७६. महाप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्		"	"
२७७. महामायूरीस्तोत्रम्		"	"
२७८. महामायूरीस्तोत्रम्		"	"
२७९. महामायूरीस्तोत्रम्		"	"
२८०. महाविद्यास्तोत्रम्		१९	९२
२८१. महासंवरस्तोत्रम्		११	९०
२८२. महासाहस्रप्रमर्दिनीस्तोत्रम्		"	"
२८३. महोग्रताराष्टकस्तोत्रम्		"	"
२८४. मायाचक्रस्तोत्रम्		११	९२

२८५. मुक्तिमालास्तवः	"	"
२८६. मृगशतकस्तुतिः	२८	९६
२८७. यक्षाष्टकस्तोत्रम्	११	९२
२८८. यक्षेश्वरस्तोत्रम्	"	"
२८९. यमराजलोकेश्वरप्रार्थनास्तोत्रम्	"	"
२९०. यमराजस्तोत्रम् (यमराजः)	२	४२
२९१. योगाम्बरस्तोत्रम्	११	९२
२९२. योगिनीस्तोत्रम्	"	"
२९३. रक्षादेवीस्तोत्रम्	"	"
२९४. लक्ष्मीस्तोत्रम्	११	९४
२९५. लोकनाथस्तवः	"	"
२९६. लोकनाथस्तवः	"	"
२९७. लोकनाथेश्वरस्तोत्रम् (गणपतिः सप्तमः)	१	५७
२९८. लोकपालस्तवः	११	९४
२९९. लोकपालस्तोत्रम्	"	"
३००. वज्रधातुचैत्यस्तोत्रम्	"	"
३०१. वज्रपाणिस्तोत्रम्	"	"
३०२. वज्रपाणिस्तोत्रम् (सर्वपाल आचार्यः)	१	५४
३०३. वज्रयोगिनीचामराष्टकस्तुतिः	१९	९४
३०४. वज्रयोगिनीप्रणामैकविंशतिकास्तोत्रम्	२१	८०
३०५. वज्रयोगिनीविशुद्धिस्तुतिः	११	९६
३०६. वज्रयोगिनीस्तुतिः	"	"
३०७. वज्रयोगिनीस्तुतिः	"	"
३०८. वज्रयोगिनीस्तुतिः	"	"
३०९. वज्रयोगिनीस्तोत्रम् (दीपंकरश्रीज्ञानः)	"	"
३१०. वज्रयोगिनीहृदयस्तोत्रम्	२१	८०
३११. वज्रवाराहीद्वादशस्तुतिः	११	९६
३१२. वज्रवाराहीद्वादशनामस्तोत्रम् [कोलमुखीयमहातन्त्रोक्तम्]	१०	११२

३१३. वज्रवाराहीयोगराजस्तोत्रम्	११	९६
३१४. वज्रवाराहीस्तोत्रम्	"	"
३१५. वज्रविलासिनीस्तुतिः	११	९८
३१६. वज्रविलासिन्यष्टकस्तोत्रम्	"	"
३१७. वज्रवीरमहाकालस्तोत्रम्	"	"
३१८. वज्रवीरमहाकालस्तोत्रम्	"	"
३१९. वज्रवीरमहाकालाष्टकस्तोत्रम्	"	"
३२०. वज्रवैरोचनीश्वरस्तोत्रम्	"	"
३२१. वज्रवैरोचनीस्तवः	"	"
३२२. वज्रवैरोचनीस्तुतिः	"	"
३२३. वज्रवैरोचनीस्तोत्रम्	"	"
३२४. वज्रसत्त्वस्तोत्रम्	"	"
३२५. वज्रसत्त्वस्तोत्रम्	"	"
३२६. वज्रसत्त्वस्तोत्रम्	"	"
३२७. वज्रसत्त्वस्तोत्रम्	"	"
३२८. वनरत्नस्थविरस्तोत्रम्	११	१००
३२९. वरुणदेवतावन्दनास्तोत्रम्	"	"
३३०. वरुथभीमस्तवः	"	"
३३१. वसुन्धारास्तोत्रम्	"	"
३३२. वसुन्धारास्तोत्रादिसंग्रहः	"	"
३३३. वागीश्वरपूजाविधिस्तोत्रम्	"	"
३३४. वागीश्वरवन्दनास्तोत्रम्	"	"
३३५. वाग्वाणीस्तोत्रम्	(बृहस्पतिः)	५६
३३६. वाग्वादिनीस्तोत्रम्	११	१००
३३७. विघ्नान्तकस्तवः	११	१०२
३३८. विघ्नान्तकस्तोत्रम्	"	"
३३९. विघ्नेश्वरस्तुतिः	"	"
३४०. विघ्नेश्वरस्तोत्रम्	"	"



३४१. वृष्टिचिन्तामणिस्तोत्रम् (जयप्रतापमल्लः)	"	"
३४२. वैरोचनीदेवीस्तवस्तोत्रम्	"	"
३४३. वैश्रवणकुबेरस्तवः	"	"
३४४. वैश्वानरस्तोत्रम्	"	"
३४५. शनिद्वादशनामस्तोत्रम्	"	"
३४६. शनिद्वादशनामस्तोत्रम्	"	"
३४७. शनिद्वादशनामस्तोत्रम्	"	"
३४८. शनिश्चरस्तवः	"	"
३४९. शनैश्चरस्तोत्रम् (दशरथः)	१	५४
३५०. शाक्यमुनिचैत्यवन्दनास्तोत्रम्	११	१०४
३५१. शाक्यमुनिभट्टारकयशोधरास्तोत्रम्	"	"
३५२. शाक्यमुनिभट्टारकसुप्रभास्तवः	"	"
३५३. शाक्यमुनिवन्दनास्तोत्रम्	"	"
३५४. शाक्यमुनिस्तुतिः (कपिशः)	१	५३
३५५. शाक्यमुनिस्तुतिः	११	१०४
३५६. शाक्यमुनिस्तोत्रम् (यशोधरा)	१	५०
३५७. शाक्यसिंहस्तोत्रम् (वज्रघण्टाधरः)	११	१०६
३५८. शाक्यसिंहस्तोत्रम् (महादेवः)	"	"
३५९. शाक्यसिंहस्तोत्रम् (देवराजः)	"	"
३६०. शाक्यसिंहस्तोत्रम् (रुचिरकेतुबोधिसत्त्वः) सुवर्णप्रभः	"	"
३६१. शाक्यसिंहस्तोत्रम् (स्वरवैद्यः)	"	"
३६२. शारदास्तवः	"	"
३६३. शारदा(स्तव)स्तोत्रम्	"	"
३६४. शीतवतीस्तुतिः	११	१०८
३६५. (श्री) चण्डमहारोषणक्रमोदयस्तोत्रम्	३१	५४
३६६. श्रीघनस्तोत्रम् (इन्द्रः)	११	१०८
३६७. श्रीमदार्यावलोकितेश्वरभट्टारक-अष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्	३१	७०
३६८. श्रीयोगाम्बरमहागुरु-आदिबुद्धध्यानस्तोत्रम्	३१	७२

३६९. श्रीलोकेश्वरस्तोत्रम्	"	"
३७०. षडक्षरस्तवः	११	१०८
३७१. षड्गतिस्तोत्रम्	"	"
३७२. षड्भुजमहाकालसाधनस्तोत्रम्	"	"
३७३. षोडशयोगिनीस्तवः	"	"
३७४. सप्तबुद्धस्तवः	११	११०
३७५. सप्ताक्षरस्तोत्रम् (लोकनाथभट्टारकः)	"	"
३७६. समन्तभद्रस्तोत्रम् (कृत्तिकानागः)	१	५४
३७७. सरस्वतीशतनामस्तोत्रम्	११	११०
३७८. सरस्वतीस्तवः	"	"
३७९. सरस्वतीस्तोत्रम् (कौण्डिन्यब्राह्मणः) सुवर्णप्रभः	१	५६
३८०. सरस्वतीस्तोत्रम्	११	५६
३८१. सरस्वतीस्तोत्रम्	"	"
३८२. सरस्वतीस्तोत्रम्	"	"
३८३. सरस्वतीस्तोत्रम्	"	"
३८४. सरस्वतीस्तोत्रम्	"	"
३८५. सर्वज्ञानोत्तरतन्त्रम्	१३	८२
३८६. सर्वनीवरणविष्कम्भिकस्तोत्रम् (ओडियानाचार्यः)	१	५४
३८७. संकटादेवीस्तवराजः	११	१०८
३८८. संघरत्नस्तोत्रम्	११	११२
३८९. साहस्रप्रमर्दिनीस्तोत्रम्	"	"
३९०. सूर्यद्वादशनामधारणीस्तोत्रम्	"	"
३९१. सूर्यस्तोत्रम्	"	"
३९२. स्रग्धरास्तोत्रम्	११	११४
३९३. स्वकरास्तवः	११	११६
३९४. स्वयम्भूचैत्यस्तोत्रम्	"	"
३९५. स्वयम्भूधर्मधातुचैत्यवन्दनास्तोत्रम्	"	"
३९६. स्वयम्भूनाथस्तवः	"	"





है। जिसमें बौद्ध-धर्म से सम्बन्धित १०८ स्तोत्रों का संकलन किया गया है। इसमें अनेक स्तोत्र ऐसे हैं, जो बहुत महत्वपूर्ण और सुप्रसिद्ध हैं। इसमें दिये गये आधे से अधिक स्तोत्र तन्त्र से सम्बन्धित और भोट-भाषा में अननूदित प्रतीत होते हैं।

क्र०सं० ग्रन्थ	ग्रन्थकार	पृष्ठ
१. अचिन्त्यस्तवः	(आर्यनागार्जुनः)	१
२. अद्वयपरमार्था नामसङ्गीतिः		५
३. अध्यर्धशतकम्	(मातृचेटः)	२१
४. अवधानस्तोत्रम् (वन्दनास्तवो वा)		३४
५. अवलोकितेश्वरस्तवः	(भिक्षुणी चन्द्रकान्ता)	३५
६. अवलोकितेश्वरस्तोत्रम्	(चरपतिपादाः)	३६
७. " "	(वासुकिनागराजः)	३८
८. अवलोकितेश्वराष्टकम्		३९
९. अवलोकितेश्वराष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्		४०
१०. अष्टमातृकास्तोत्रम्		२७९
११. आकाशगर्भाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्		४२
१२. आदिबुद्धद्वादशकस्तोत्रम्		४४
१३. कमलाकरसर्वतथागतस्तोत्रम्	[सुवर्णप्रभासोद्धृतम्]	४५
१४. करुणास्तवः	(बन्धुदत्ताचार्यः)	४८
१५. कल्याणत्रिंशतिकास्तोत्रम्		५२
१६. कल्याणपञ्चविंशतिकास्तोत्रम्		५५
१७. गणेशस्तोत्रम्		५९
१८. गण्डीस्तवः	(आर्यदेवः)	६१
१९. गुरुरत्नत्रयस्तोत्रम्		६६
२०. गुह्येश्वरीस्तोत्रम्	(मञ्जुदेवः)	६७
२१. चक्रसंवरस्तुतिः (हेरुकविशुद्धिस्तोत्रं वा)		६८
२२. चण्डिकादण्डकस्तोत्रम्		७०

२३. चतुःषष्टिसंवरस्तोत्रम्	७२
२४. चैत्यवन्दनास्तोत्रम्	७८
२५. तारानमस्कारैकविंशतिस्तोत्रम्	७९
२६. ताराष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्	८१
२७. तारास्तुतिः (आचार्यचन्द्रदासः)	८६
२८. तारास्त्रगंधरास्तोत्रम् (आचार्यसर्वज्ञमित्रः)	८८
२९. दशभूमीश्वरो नाम महायानसूत्ररत्नराजस्तोत्रम्	९४
३०. धर्मधातुनामस्तवः	१००
३१. धर्मधातुवागीश्वरमण्डलस्तोत्रम्	१०१
३२. नरकोद्धारस्तोत्रम् (आचार्यनागार्जुनः)	१०५
३३. निरौपम्यस्तवः (आचार्यनागार्जुनः)	१०७
३४. नैरात्माष्टकस्तोत्रम्	१०९
३५. पञ्चतथागतस्तुतिगाथा	११०
३६. पञ्चतथागतस्तोत्रम्	१११
३७. पञ्चरक्षादेवीस्तोत्राणि	
महाप्रतिसरास्तोत्रम्	११२
महामन्त्रानुसारिणीस्तोत्रम्	११२
महामायूरीस्तोत्रम्	११३
महाशीतवतीस्तोत्रम्	११३
महासाहस्रप्रमर्दिनीस्तोत्रम्	११४
३८. पञ्चाक्षरस्तोत्रम्	११५
३९. परमार्थस्तवः (आचार्यनागार्जुनः)	११६
४०. पीठस्तवः	११७
४१. पोतलकाष्टकम्	१२३
४२. प्रज्ञापारमितास्तुतिः	१२५
४३. प्रज्ञापारमितास्तोत्रम् (आचार्यनागार्जुनः)	१२६

४४. प्रतिसरास्तोत्रम्		१२८
४५. बुद्धगण्डीस्तवः	( आचार्याश्वघोषः )	१३०
४६. बुद्धभट्टारकस्तोत्रम्		१३५
४७. बुद्धस्तोत्रम्		१३७
४८. भक्तिशतकम्	( भारतीरामचन्द्रः )	२६३
४९. मङ्गलषोडशस्तुतिः		१४४
५०. मङ्गलाष्टकम्		१४६
५१. मञ्जुवज्रस्तोत्रम्	( मञ्जुगर्भः )	१४८
५२. मञ्जुश्रीनामाष्टोत्तरशतस्तोत्रम्		१५०
५३. मञ्जुश्रीस्तोत्रम्		१५२
५४. मध्यमकशास्त्रस्तुतिः	( आचार्यचन्द्रकीर्तिः )	१५३
५५. महाकालस्तोत्रम्		१५६
५६. महाचक्रवर्तिनामाष्टोत्तरशतस्तोत्रम्		१५७
५७. महाप्रतिसरास्तोत्रम्		१५९
५८. महाबोधिभट्टारकस्तोत्रम्		१६२
५९. महाबोधिवन्दनाष्टकम्		१६३
६०. महोग्रताराष्टकम्		१६४
६१. महोग्रतारास्तुतिः		१६६
६२. मारविजयस्तोत्रम्		१६८
६३. रक्षाकाल( कर )स्तवः		१७०
६४. रत्नमालास्तोत्रम्	( आचार्यवनरत्नः )	१७२
६५. रूपस्तवः		१७६
६६. लोकनाथस्तोत्रम्		१८०
६७. लोकातीतस्तवः	( आर्यनागार्जुनः )	१८२
६८. लोकेश्वरशतकम्	( वज्रदत्ताचार्यः )	१८५
६९. लोकेश्वरस्तोत्रम्		२००



७०. वज्रदेवीस्तोत्रम्	(आर्यनागार्जुनः)	२०२
७१. वज्रपाणिनामाष्टोत्तरशतस्तोत्रम्		२०४
७२. वज्रमहाकालस्तोत्रम्	(आर्यनागार्जुनः)	२०६
७३. वज्रयोगिनीप्रणामैकविंशिका		२०८
७४. वज्रयोगिनीपिण्डार्थस्तुतिः	(विरूपादः)	२१०
७५. वज्रयोगिनीस्तुतिप्रणिधानम्	(विरूपादः)	२१२
७६. वज्रविलासिनीसाधनास्तवः		२१४
७७. वज्रविलासिनीस्तोत्रम्	(आचार्यविभूतिचन्द्रः)	२१५
७८. वज्रसत्त्वस्तुतिः		२१७
७९. वज्रसत्त्वस्तोत्रम्		२१८
८०. वसन्ततिलकास्तुतिः		२१९
८१. वसुधारानामधारणीस्तोत्रम्		२२०
८२. वसुधारास्तोत्रम्		२२२
८३. वागीश्वरवर्णनास्तोत्रम्		२२३
८४. वाग्वाणीस्तोत्रम्		२२४
८५. विद्याक्षरस्तोत्रम्		२२५
८६. शाक्यसिंहस्तोत्रम्	(ब्रह्मणा कृतम्)	२२६
८७. " "	(विष्णुकृतम्)	२२७
८८. " "	(शङ्करकृतम्)	२२९
८९. " "	(सुपरिकृतम्)	२३०
९०. " "	(नवग्रहकृतम्)	२३२
९१. " "	[दुर्गतिपरिशोधनोद्धृतम्]	२३३
९२. शाक्यसिंहस्तोत्रम्	[छन्दोऽमृतोद्धृतम्]	२३५
९३. " "	(यशोधराकृतम्)	२३६
९४. शारदाष्टकम्		२३८
९५. षट्त्रिंशत्संवरस्तुतिः		२४०

९६. षट्पारमितास्तोत्रम्		३४३.
९७. षडभिज्ञस्तोत्रम्		२४४
९८. षड्गतिस्तोत्रम्		२४५
९९. सत्त्वाराधनगाथा	(आर्यनागार्जुनः)	२४६
१००. सप्तजिनस्तवः		२४८
१०१. सप्तबुद्धस्तोत्रम्		२४९
१०२. सप्तविधानुत्तरस्तोत्रम्		२५१
१०३. सप्ताक्षरस्तोत्रम्		२५३
१०४. सुप्रभातस्तोत्रम्	(श्रीहर्षभूपतिः)	२५४
२०५. स्वर्गधरापञ्चकस्तोत्रम्		२५८
१०६. स्वयम्भूस्तवः		२५९
१०७. स्वयम्भूस्तोत्रम्		२६०
१०८. हारतीस्तोत्रम्		२६१

## २. बौद्धस्तोत्रसंग्रह (नेपाल से प्रकाशित)

यह स्तोत्र संग्रह एक पूजापाठ के रूप में नेपाल से प्रकाशित है। वैसे तो इस ग्रन्थ की विषय सूची में ४४ प्रकार के विषय हैं। इसमें धारणी, प्रणिधान आदि अन्य विषयों से सम्बद्ध ही अधिक हैं, उसमें स्तोत्रों की संख्या अधिक नहीं है और इनमें भी कुछ स्तोत्र ऐसे भी हैं, जो कि बौद्धेतर मतों से सम्बद्ध प्रतीत होते हैं, अतः वे सब यहाँ नहीं दिये गये हैं।

ग्रन्थ	ग्रन्थकार	पृष्ठ
१. दशबलस्तोत्रम् [सुप्रभातस्तोत्रम्]	(श्रीहर्षदेवः)	२
२. अद्वयपरमार्था नामसङ्गीतिः		७
३. षट्पारमितास्तोत्रम्		२७
४. आर्यतारास्तोत्रम्		३७
५. अष्टशतार्यतारानामस्तोत्रम्		४७
६. षष्टिर्त्रिंशतलोके श्वरनामधारणीस्तोत्रम्		५२

७. यशोधरास्तोत्रम्		६९
८. लोकनाथस्तोत्रम्		७०
९. वागीश्वरवर्णनास्तोत्रम्		७१
१०. पञ्चार्जनगीतः		७२
११. श्रीशाक्यमुनिगीतः		७३
१२. छ्वास्कामिनीदेव्याः स्तोत्रम्		८०
१३. हारतीस्तोत्रम्		८६
१४. वज्रदेवीस्तोत्रम्	(नागार्जुनः)	८९
१५. खड्गयोगिनीदेवीस्तुतिः		९२
१६. आर्यविद्याधरीदेवीस्तोत्रम्		९३
१७. आकाशयोगिनीदेवीस्तुतिः		९३
१८. महाभीमसेनस्तोत्रम्		१००
१९. चण्डमहारोषणयास्तोत्रम्		१०३
२०. प्रज्ञापारमितास्तोत्रम्	(नागार्जुनः)	१११

### ३. धीः पत्रिकाओं में प्रकाशित स्तोत्रों की सूची (अंक १-३१)

अब तक प्रकाशित 'धीः' पत्रिका के १-३१ अंक तक ५१ बौद्ध स्तोत्रों का संकलन किया गया है। प्रत्येक अंक में दो स्तोत्र दिये हुए हैं। २० से २६ अंक तक महाकवि आचार्य मातृचेत द्वारा विरचित वर्णार्हवर्ण बुद्धस्तोत्र के १२ परिच्छेदों को क्रमशः दिया गया है। 'धीः' पत्रिका में जितने भी स्तोत्र दिये गये हैं, वे सब दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध अनुभाग के नियमानुसार जहाँ तक जानकारी है, उसके अनुसार अन्य में अप्रकाशित एवं दुर्लभ आधार सामग्री (पाण्डुलिपियों) से खोजकर प्रकाशित किये गये हैं। इन पत्रिकाओं में प्रकाशित अनेक स्तोत्र पं० जनार्दन पाण्डेय द्वारा १९९४ ई० में संकलित एवं प्रकाशित बौद्ध स्तोत्र संग्रह में भी उपलब्ध होते हैं।

ग्रन्थ	ग्रन्थकार	अंक	पृष्ठ
१. श्रीवज्रयोगिनीप्रणामैकविंशिका		१	१
२. श्रीवज्रविलासिनीस्तोत्रम्		१	४



३. आर्यतारानमस्कारैकविंशतिस्तोत्रम्		२	१
४. त्रिकायवज्रयोगिन्याः पिण्डार्थस्तुतिः		२	४
५. प्रज्ञापारमितास्तोत्रम्	( नागार्जुनः )	३	१
६. आर्यश्रीवसुधारानामधारणीस्तोत्रम्		३	३
७. महोग्रतारास्तुतिः		४	१
८. कल्याणपञ्चविंशतिस्तोत्रम्	[ स्वयम्भूपुराणोद्धृतम् ]	४	३
९. प्रज्ञापारमितास्तुतिः		५	१
१०. गण्डीस्तवः	( आर्यदेवः )	५	२
११. वसुधारानामधारणीस्तोत्रम्		६	१
१२. पीठस्तवः		६	३
१३. श्रीवज्रदेवीस्तोत्रम्	( नागार्जुनः )	७	१
१४. धर्मगण्डीस्तवः	( शीलपारमिता )	७	३
१५. महाप्रतिसरादिपञ्चरक्षादेवीस्तोत्राणि		८	१
१६. सप्तविधानुत्तरस्तोत्रम्		८	४
१७. श्रीचक्रसंवरस्तुतिः		९	१
१८. बुद्धगण्डीस्तवः	( अश्वघोषः )	९	३
१९. श्रीमन्महाबोधिवन्दनाष्टकम्		१०	१
२०. मञ्जुश्रीकृतमादिबुद्धस्तोत्रम्	( मञ्जुश्रीः )	१०	२
२१. सप्ताक्षरस्तोत्रम्		११	१
२२. चण्डिकादण्डकस्तोत्रम्		११	२
२३. श्रीमहाकालस्तोत्रम्		१२	१
२४. श्रीमहाप्रतिसरास्तोत्रम्		१२	३
२५. करुणास्तवः	( श्रीबन्धुदत्तः )	१३	१
२६. मञ्जुवज्रस्तोत्रम्	[ स्वयम्भूपुराणोद्धृतम् ]	१३	५
२७. सत्त्वाराधन-गाथा	( नागार्जुनः )	१४	१
२८. श्रीशाक्यसिंहस्तोत्रम्	( सुरपतिकृतम् )	१४	३
२९. सुप्रभातस्तोत्रम्	( श्रीहर्षदेवः )	१५	१
३०. रत्नमालास्तोत्रम्	( वनरत्नः )	१५	५
३१. श्रीस्वयम्भूस्तोत्रम्	( चतुर्महाराजकृतम् )	१६	१

३२. श्रीबुद्धभट्टारकस्तोत्रम्	(ब्रह्मणः)	१६	३
३३. श्रीवज्रयोगिनी-स्तुतिप्रणिधानम्	(विरूपादः)	१७	१
३४. वज्रविलासिनीसाधनस्तवः		१७	३
३५. श्रीशारदाष्टकस्तोत्रम्		१८	१
३६. मूलतन्त्रोक्तः पञ्चाकारस्तवः	[कालचक्रतन्त्रम् पञ्चमः पटलः]	१८	३
३७. सदवपठनस्तोत्रम्	[मञ्जुवराख्यतन्त्रम् उद्धृतम्]	१९	१
३८. मञ्जुघोषस्तोत्रम्	[मञ्जुवराख्यतन्त्रम् उद्धृतम्]	१९	३
३९. आर्यतारानामहृदयम्		२०	१
४०. श्रीमृत्युञ्जयस्तोत्रम्		२०	३
४१. वर्णार्हवर्णे बुद्धस्तोत्रम्	(श्रीमातृचेटः)	२१-२६	१
४२. भगवत्स्तुतिः	[भद्रकल्पावदानोद्धृतम्]	२७	१
४३. अचलस्तोत्रम्	(वनरत्नपादः)	२७	३
४४. बुद्धभट्टारकस्तोत्रम्	(ब्रह्मणः)	२८	१
४५. सप्तबुद्धस्तवः		२८	३
४६. दुर्गतिशोधनयमान्तकस्तोत्रम्		२९	१
४७. लोकनाथसुन्दराष्टकस्तोत्रम्		२९	३
४८. श्रीलोकेश्वरानन्दसुन्दराष्टकम्		३०	१
४९. श्रीत्रिरत्नसुन्दरषोडशीस्तोत्रम्		३०	३
५०. सप्तजिनस्तवः		३१	१
५१. अष्टमातृकास्तोत्रम्		३१	३

#### ४. प्रकीर्ण स्तोत्र सूची

ग्रन्थ	ग्रन्थकार
१. स्रग्धरास्तोत्रम्	(सर्वज्ञमित्रः)
२. स्रग्धरास्तोत्रटीका	(जिनरक्षितः)
३. देवातिशयस्तुतिः	(शंकरस्वमिपादः)
४. विशेषस्तवः	(उद्भट्टसिद्धस्वामी) हिन्दी में
५. त्रिकायस्तोत्रम्	(नागार्जुनः)

( ༡ ) ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་གསུམ་པ།

( ཀ ) རྟེན་འགྲུབ་པའི་པུ་ཤི་ལྷ་མོ་

སྐྱོད་པོ་ལྷ་སྐྱོད་ཀྱིས་མཛད་པའི་བསྐྱོད་པ་ལས་འདས་པར་བསྐྱོད་  
པ་ཞེས་བྱ་བ་བཞུགས་སོ།

༡༡། ཁྱེད་རྒྱུ་དང་། སྐྱོད་པོ་དང་། བསྐྱོད་པ་  
ལས་འདས་པར་བསྐྱོད་པ། འཕགས་པ་འཇམ་དཔལ་གཞིན་རྒྱུར་པ་ལ་  
ཕྱག་འཆལ་ལོ། སྐྱོད་པོ་ལས་ལས་གསལ་པ་ལོ། འདི་བཞིན་གསལ་པ་  
བསྐྱོད་འདས་ཀྱང་། ཁྱེད་ཀྱི་སྐྱོད་པོ་ལས་ཀྱིས་ནི། བདག་གིས་བསྐྱོད་  
འདས་བསྐྱོད་པར་བཞུ།<sup>༡</sup> བདག་དང་གཞིན་དང་གཉིས་ཀ་ལས། རྒྱུ་པར་  
དབེན་པའི་དངོས་གཟིགས་ཀྱང་། ཁྱོད་ཀྱི་ཐུགས་ཆེ་སེམས་ཅན་ལས། མ་  
ལོག་པ་ནི་ངོ་མཚར་ལགས།<sup>༢</sup> ངོ་བོ་ཉིད་ཀྱིས་མ་སྐྱོད་པའི་དང་། རྒྱུ་ལས་  
འདས་པའི་སྐྱོད་ལུ་གྱི། རྒྱུ་རྒྱུ་ཁྱོད་ཀྱིས་གང་བསྐྱོད་པ། འདི་ནི་ཁྱོད་ཀྱི་  
ངོ་མཚར་ལགས།<sup>༣</sup> སྐྱོད་པོ་ལས་དང་སྐྱོད་པའི་རྒྱུ་ལས། ཁྱོད་ཀྱིས་  
བསྐྱོད་པར་མཛད་ལགས་ཀྱང་། འདི་དག་ཡོངས་སུ་འཇིག་པ་ནི། སྐྱོད་ཀྱིས་  
ཀྱང་ནི་བསྐྱོད་པར་མཛད།<sup>༤</sup> གང་ཞིག་རྒྱུ་ལས་དེ་མ་མཚིས། འདོས་  
རྒྱུ་ལས་རྒྱུ་ལས་ཆེ་ལྷ་སྐྱོད། འདི་སྐྱོད་ལས་པ་ཁྱོད་གསུངས་པས། སྐྱོད་པ་  
རྒྱུ་ལས་ནི་བཅད་པ་ལགས།<sup>༥</sup> གང་དག་ཚོགས་ལས་རབ་བྱུང་ན། རྒྱུ་ལས་པ་རྒྱུ་

<sup>༡</sup> ཡི། བཞུ།





འབྲིགས་བྱེད་མཁུ་ཆེན་སྒྲིལ་མས་ཀྱི། །རྒྱལ་ས་པ་བསལ་བར་གྱུར་བ་བཞིན། ༡༥༥  
ལམ་ཁྱལ་གཞོན་པ་སྒྲ་ཆོགས་དང་། །ལྷ་བའི་ལམ་ངན་མི་བསྟེན་ལྟར། །ཁྱོད་  
ལ་བརྟེན་ནས་ཡོད་པ་དང་། །མེད་པ་ཉིད་ལའང་བརྟེན་མ་ལགས། ༡༥༦། ཁྱོད་  
ཀྱིས་དགོངས་ནས་གསུངས་པ་དང་། །གང་དག་གིས་ནི་དེ་ལྟར་རྟོགས། །དེ་  
དག་ཁྱོད་ཀྱིས་དགོངས་གསུངས་པ། །ཕྱིར་ཞིང་རྟོགས་པར་བགྱི་མི་འཆལ། ༡༥༧།  
དངོས་ཀྱན་སྤྱང་ན་འདས་མཚུངས་པར། །དེ་ལྟར་གང་གིས་རྣམ་ཤེས་པ། །དེ་  
ཆེ་དེ་ལ་ཇི་ལྟ་བུར། །ངར་འཛིན་ཀྱན་ཏུ་འབྱུང་བར་འགྱུར། ༡༥༨། དེ་ལྟར་ཡང་  
དག་རིག་པའི་མཆོག་ །དེ་ཉིད་རིག་པ་ཁྱོད་བསྟོད་པའི། །བདག་གི་བསོད་  
ནམས་གང་ཡིན་དེས། །འཛིག་རྟེན་ཡང་དག་རིག་མཆོག་ཤོག། ༡༥༩། བསྟོད་པ་  
ལས་འདས་པར་བསྟོད་པ་སྟོབ་དཔོན་ཆེན་པོ་འཕགས་པ་སྒྱུ་རྒྱུ་བ་ཀྱི་ཁལ་ལྷ་ནས་  
མཇེད་པ་ཇོགས་སོ། །

१. श्री. गो. - श्री. देव।

3. གསེར་གྱིས། - བསྟེན། གྱི། ཙོ། - རྟོ།

३ ॥ ॐ - वरदाय नमः ॥

( ख ) तृतीयं परिशिष्टम्

[ श्री प्रभुभाई पटेल-महोदयेन पुनरुद्धारितः ]

### स्तुत्यतीतस्तवः

अनुत्तरमार्गगतं स्तुत्यतीतं तथागतम् ।  
भक्त्योत्सुकेन चित्तेन स्तुत्यतीतं स्तवीम्यहम् ॥ १ ॥

स्वपरोभयतो भावान् विविक्तानपि पश्यतः ।  
अद्भुतं तव सत्त्वेभ्यः करुणा न निवर्तते ॥ २ ॥

अनुत्पन्नाः स्वभावेन वाक्पथातीतगोचराः ।  
यत्त्वया देशिता धर्मास्तदेतदद्भुतं तव ॥ ३ ॥

स्कन्धायतनधातूनामुद्देशेऽपि कृते त्वया ।  
तेषां परिग्रहः पश्चात्त्वयेह विनिवर्तितः ॥ ४ ॥

नास्ति तत्प्रत्ययाद्यत्स्याद् भावाः स्युः प्रत्ययात्कथम् ।  
प्रपञ्चोच्छेद एवं ते प्राज्ञस्य वचनाद्भवेत्<sup>१</sup> ॥ ५ ॥

उत्पादं ये तु पश्यन्ति सामग्र्याद्धेतुतोऽथवा ।  
अन्तद्वयाश्रितास्ते हि त्वया समवलोकिताः<sup>२</sup> ॥ ६ ॥

भावः प्रत्ययमाश्रित्य सिध्यतीत्यभिमन्यसे ।  
एवं कृतकतादोषः शास्तरित्थं त्वमीक्षसे<sup>३</sup> ॥ ७ ॥

१. भोटभाषानुसारम् अयं पाठः समीचीनः प्रतिभाति—

हेतुजातं न जातं तद् वस्तु तत् प्रत्ययात् कथम् ।  
प्रपञ्चोच्छेद एवं ते धीमतो वचनाद् भवेत् ॥ ५ ॥

२. भावान् पश्यन्ति सामग्र्यात् सामग्रीं हेतुसम्भवाम् ।  
अन्तद्वयाश्रितास्ते हि त्वया समवलोकिताः ॥ ६ ॥

३. भावः प्रत्ययमाश्रित्य सिध्यतीत्यभिमन्यसे ।  
कारकेण कृते दोषः शास्त्रा त्वया समीक्ष्यते ॥ ७ ॥



कुतश्चित्रैव भवति न कुत्रापि च विद्यते ।  
 सर्वे भावास्त्वया तस्मात्प्रतिबिम्बसमा मताः ॥ ८ ॥

सर्वदृष्टिप्रहाणाय शून्यं नाथ त्वयोच्यते ।  
 एतदपि समारोप्य भावो नाथ न ते मतः<sup>१</sup> ॥ ९ ॥

न शून्यं नापि चाशून्यं न चोभयं मतं तव ।  
 विवादस्तत्र न प्राप्त उक्तस्त्वया महानयः<sup>२</sup> ॥ १० ॥

भावो न विद्यतेऽनन्यो नान्योऽन्तर्भय उच्यते ।  
 विहायैकत्वमान्यत्वं न कीदृगपि विद्यते<sup>३</sup> ॥ ११ ॥

उत्पादादित्रये प्राप्ते प्राप्तं संस्कृतलक्षणम्<sup>४</sup> ।  
 तेषामपि पुनर्भिन्नमुत्पादादित्रयं भवेत् ॥ १२ ॥

उत्पादाद्यास्त्रयो व्यस्ता नालं संस्कृतकर्मणि ।  
 एकैकस्मिन् समस्तानामपि योगो न गम्यते ॥ १३ ॥

लक्ष्यलक्षणयोरेवं सद्भावो नैव सिध्यति ।  
 असिद्धे संस्कृते सिध्येत् क्वासंस्कृतस्य दर्शनम्<sup>५</sup> ॥ १४ ॥

वादिसिंह तवैवैवं वादसिंहेन [ सर्वतः ] ।  
 वादिविन्ध्यमहानागगर्वापनयनं कृतम् ॥ १५ ॥

नैति मार्गागतो दृष्टिकुमार्गं विविधाशिवम् ।  
 त्वामाश्रित्य तथा भावोऽभावश्चापि निराश्रयः ॥ १६ ॥

१. आरोपितं हि तत्राथ वस्तु नैव च ते मतम् ॥ ९ ॥
२. विवादस्तत्र नैवास्तीत्युक्तं त्वया महावचः ॥ १० ॥
३. अन्यो भावो न चानन्यो ह्युभयो नापि कथ्यते ।  
 विहायैकत्वमान्यत्वं कीदृगं वस्त्वपि नो भवेत् ॥ ११ ॥
४. उत्पादादित्रयं चेत् स्याद् युक्तं संस्कृतलक्षणम् ।
५. यदा न संस्कृतं सिद्धं सिद्धिः क्वासंस्कृतस्य तु ॥ १४ ॥

ये तथैवावगच्छन्ति सन्ध्यावाक्यानि ते ततः<sup>१</sup> ।  
ज्ञानं न खलु तैः सन्ध्यावाक्येभ्यो बहिरिष्यते<sup>२</sup> ॥ १७ ॥

निर्वाणसदृशा भावा इति येनावगम्यते ।  
आत्मग्राहस्तदा तस्य कथं नु खलु सम्भवेत् ॥ १८ ॥

एवं सम्यविग्वदां श्रेष्ठ तत्त्वविच्छावकस्य मे<sup>३</sup> ।  
यत्पुण्यं तेन लोकोऽयं भूयात्तत्त्वविदुत्तमः ॥ १९ ॥

॥ महाचार्यार्यनागार्जुनपादेन प्रणीतः ॥

स्तुत्यतीतस्तवः समाप्तः ॥

•

१. ....सन्ध्यावाक्यानि ते ततः ॥ १७ ॥

२. ....सन्ध्यावाक्यानां बहिराप्यते ॥ १७ ॥

३. ....तत्त्वविच्छावकस्य मे ।

ཁ་སྐོང་ལྷན་ཐབས་བཞི་པ།

चतुर्थ परिशिष्टम्

(ཀ) (སློབ་དཔོན་གྱི་སྐྱེ་ཆའི་རྣམ་ཐར་དང་འབྲེལ་བའི་བསྟོན་པ།)

आचार्य की जीवनी से सम्बद्ध स्तोत्र

ཁྱེ་སྐྱེ་བ་ཞབས་ལ་བསྟོན་པ་མཆོག་དྲུ་དང་པའི་སྐྱེ་དབྱངས།

[ཁྱེ་ལ་བ་དགེ་འདུན་གྱི་མཆོས་མཛད་པ།]

༄༅། །མགོན་པོ་དེ་ཉིད་ཀྱི་ཞབས་ཀྱི་པ་སྒོ་ལ་དུས་ཐམས་ཅད་དུ་ཕྱག་  
འཆལ་ལོ། །ཉི་མའི་གཉེན་གྱི་ལྷགས་ཡངས་པ་སྒོའི་མཆོར། །ལུང་བསྟན་བུང་  
བའི་དར་དིར་འབྱམ་འཁྲིགས་པས། །དྲི་ཟའི་འཕང་འགྲོ་ལྷ་བུར་ཁྱོད་བསྟེན་  
ན། །བདག་ལྷས་ཅུང་ཞིག་བསྟོན་ལ་ཅི་ཞིག་བལྟས། །འོན་ཀྱང་རྟེན་དཀའི་  
ལུས་འདི་རྩ་འཛིན་བཅས། །སྤྱིང་པོར་བགྱི་སྒྲུང་མགོན་ཁྱོད་ཡོན་ཏན་གྱི། །ཁྱི་  
མཆོ་ཆེ་ལས་སྟོབས་པའི་ང་ཡབ་ཅེས། །སྤྱི་མའི་ཆུ་ཐུང་སྒྲུངས་དེ་གར་བགྱིད་  
དོ། །མཐའ་དབུས་ཀྱན་བྲལ་ཟུང་ཡངས་ཡིད་བཞིན་མཆོར། །ལྷ་ཟེར་ཕྱིང་  
བས་སྐྱབ་པོའི་མུན་གནག་འཛུམས། །ས་གསུམ་རིན་ཆེན་གཅིག་གྱུར་གདེངས་ཀ་  
ཅན། །དཔལ་ལྷན་ཁྱེ་ཡི་དབང་པོར་ཕྱག་བགྱིད་དོ། །གཉིས་མེད་གསུང་བའི་  
སྟོན་ལྷན་གཅིག་གིས་ཀྱང་། །མྱོངས་པའི་གྲོང་ཁྱིམ་བཅུགས་མཐར་མཛད་  
པས། །སྤྱིང་སྐྱབ་ལྷ་པའི་མཐའ་ལ་བསྟེན་གྱུར་ཅིང་། །མདའ་ལྷ་པས་ཀྱང་  
ལུས་མེད་གནས་སྐབས་བསྟེན། །མཁར་ཉལ་སར་གསེགས་པེ་དེའི་གྲོང་ཁྱིམ་  
དུ། །སྐྱབས་འཛིན་ལ་འཁྱུང་འཁྱོར་བའི་བང་མཛད་ཅན། །རིག་བྱེད་གདེར་





འགྲུར་གྱི།      ཚི་ཡི་ཟོལ་ལས་ཟླ་བའི་སྤྱན་ཟླ་བཞིན།      འདོད་དགའི་ཆར་  
 སྤལ་དགེ་འདུན་འདུས་པའི་སྤྱི།      མོངས་པའི་དབྱ་ལས་སྤང་མཛད་ཁྱོད་ཕྱག་  
 འཆལ།      ཀྱན་དུ་གདོང་བ་ཡངས་པའི་ཕྱག་བརྒྱངས་ནས།      རྩོགས་ལྡན་  
 བཞིན་དུ་འགྲོ་ཀྱན་ཆིམ་མཛད་པས།      སྦྱངས་པས་སྒྲོབས་ལྡན་ས་འོག་དུ་ཞུགས་  
 ཤིང་།      ཟླ་བའི་མ་མ་ཀྱན་དུ་འདར་བ་སྤྲུམ།      བཀྱངས་ཅན་འདྲིན་པས་རང་གི་  
 སོ་བྱང་དུ།      སྤྱན་དྲངས་ནོར་བུའི་ཁྱིལ་ཞབས་བཀོད་དེ།      སྐལ་ལྡན་སྟོ་འགྲོའི་  
 ཆོགས་རྣམས་མ་ལུས་པ།      བྲེག་མཆོག་བདུད་ཅིས་ཆིམ་མཛད་ཁྱོད་ཕྱག་  
 འཆལ།      རྒྱལ་བ་ཀྱན་ཡུམ་སྦྱང་ཕྱག་བརྒྱ་པ་དང་།      རྩོ་རྩེའི་འཛིམ་པ་མང་  
 སོ་ལེགས་བསྐྱམས་དེ།      འཛམ་གླིང་མཆོད་དེན་བྱེ་བས་མཛེས་བྱས་ཤིང་།  
 བགྲང་ཡས་མཁས་ལ་ཆོས་སྟོན་མཛད་ཕྱག་འཆལ།      རྒྱལ་བའི་གསུང་ལ་དྲང་  
 དེས་ལེགས་སྤྱེ་ཞིང་།      བུབ་པའི་ཆོས་ཚུལ་ཀྱན་གྱི་སྒྲ་མ་མཆོག      དཔལ་ལྡན་  
 འདུས་པ་ལ་སོགས་བཀའ་ཀྱན་གྱི།      དགོངས་པ་རང་དབང་འབྲེལ་མཛད་ཁྱོད་  
 ཕྱག་འཆལ།      མདོ་རྒྱུད་དགོངས་པ་འབྲེལ་བའི་བསྐྱན་བཙུངས་དང་།      བག་སོ་  
 རིག་ལ་སོགས་སྤྱན་མོང་རིག་གནས་དང་།      འཛིག་དེན་ལུགས་ཀྱི་བསྐྱན་བཙུངས་  
 མང་མཛད་ནས།      ས་གསུམ་འགྲོ་འདི་སྤྱང་མཛད་ཁྱོད་ཕྱག་འཆལ།      རྩོ་  
 འཕྲུལ་འོལ་པས་སྒྲ་མི་སྤྱན་དུའང་གཤེགས།      བཞིན་རུ་བདེ་སྟོན་རྒྱལ་པོར་ལུང་  
 བསྐྱན་ཅིང་།      བདེ་སོགས་བདག་པོའི་འབྱོར་པས་རྣམ་ཅིན་དེ།      རྟུལ་བྲལ་  
 བཀྱར་སྤྱིས་ཁྱོད་ཞབས་རིང་དུ་མཆོད།      རྟུག་གིས་བཙུངས་པའི་བརྒྱ་ཕྱག་ལོ་  
 ཆོགས་སྤྱ།      བསྐྱན་པ་བསྐྱངས་ནས་སྤྲུགས་རྩེས་སྟོང་བ་ལ།      རང་གི་དབུ་སྟུལ་





(ཁ) (སྒོ་བ་དཔོན་གྱིས་ཟབ་མོའི་ལྟ་བ་གསུངས་ཚུལ་དང་འབྲེལ་བའི་བསྟོད་པ།)

## आचार्य का गम्भीरदर्शन प्रतिपादक स्तोत्र

མགོན་པོ་ཁྱེད་ཀྱི་ལྷན་ཁག་གི་ལྷན་པ་དག་ལ་མཁོ་སྤྲོད་པ་དང་མཁོ་སྤྲོད་པ་ཞེས་

བྱ་བ་བརྒྱགས་མོ།

[ཁྱི་གྱུང་ཐང་བསྟན་པའི་སྒྲོན་མེས་མཛད་པ།]

རྒྱལ་པས་ཆོས་རྒྱལ་གང་བསྟན་པ། །འགྲོ་བ་ལྷན་པས་ཁྱེད་པ་ལ། །  
 འོད་གསལ་བ་ཡི་ཕྱིར་ཡིན་པས། །སྟོན་མ་ཁྱུ་སྐྱབ་རྒྱལ་གྱི་ཅིག །དམིགས་  
 ལས་དམིགས་པ་རྣམ་མང་བས། །འགྲོ་བ་དྲུབ་པར་གྱུར་བ་རྣམས། །དམིགས་  
 པ་མེད་པ་ནི་བའི་བདེ་པ། །འབྲིད་པ་ཁྱོད་ནི་དེད་དཔོན་ལགས། །ཤེས་རབ་  
 སར་ཕྱིན་ཤེས་རབ་བསྐབ། །ཤེས་རབ་མདོ་སྤྲིའི་མཆོག་གྱུར་ཕྱིར། །ཤེས་རབ་  
 གཞུང་མཆོག་མཛེད་པ་ཁྱོད། །བསྟན་འཛིན་ཀྱན་ལས་སླ་མར་གྱུར། །རིག་  
 གནས་ཤེས་གྱུར་སྤྲིད་ཀྱན་ལ། །ལྷན་སངས་སྟོ་གྲོས་རབ་རྒྱས་པས། །སངས་  
 རྒྱས་གཉིས་པ་ཁྱུ་སྐྱབ་ཅེས། །དངོས་པོར་སྐྱེ་བ་རྣམས་ཀྱང་འདྲད། །མ་རིག་  
 འགག་པས་ཡན་ལག་ཀྱན། །འགག་པར་མདོ་སྤྲིའི་ཀྱན་གསུངས་ཀྱང་། །གཙ་པ་  
 སྤྲིད་པའི་སྟོག་ཅ་ནི། །གསལ་བར་གཙོད་པའི་རིགས་པ་ཕྱིན། །གཞན་དག  
 སྤྲོང་ཞེས་བཀའ་པར་དང་། །བདེན་ཞེས་སྐྱབ་པ་ཉིད་གོ་བས། །ཐག་མཁན་  
 སྐབས་བཞིན་སྟོགས་སུ་སྤྲང་། །ཁྱོད་ཀྱིས་བཞེས་སྟེ་བདེ་བར་བཞུགས། །རྒྱ་རྒྱུ་  
 ཡན་ལག་དུ་མ་ཞིག །ཆོགས་ནས་སར་ལ་འཛོག་དགོས་པ། །རྒྱགས་སྐབ་རང་  
 དབང་གྲལ་བའི་དྲགས། །དེས་ནི་རྟོན་འབྲུང་སྤྲོད་པར་བཤད། །རང་དབང་དོ་







ཁྱེད་གིས་རབ་རྒྱས་ཐེ་བཞིའི་ལུང་དང་གིན་དུ་མདོར་བསྐྱས་ཀྱི་རི་ཀླ  
 ཀ་མ་ལ་ལྟར་དག་པའི་ཡིད་ཀྱིས་ལྟར་སྒྲུང་ཆོས་གོས་གྱུར་གྱིས་ཁ།  
 ཁ་དོག་མཛེས་པས་ཀྱན་ནས་ལྷུབས་པའི་སྐྱེ་ནི་བརྒྱ་རྒྱུ་བ་ག།  
 ག་ནས་བལྟས་ཀྱང་བཞིད་པ་ཐིམ་བཞིན་འགྲོ་མང་དབུས་ན་ཉམ་མི་ང་།  
 ང་ཡི་གཙུག་གི་རྒྱན་གྱུར་སྒྲུ་མ་མཚོག་དེས་འགྲོ་ལ་དགོ་ལེགས་སྦྱེལ།  
 (ཐིམ་གསུང་བྱ་དཀའི་སྒྲུང་གཞི་མཚར་ཅན། བོད། 'ཁ' ༡༦)

ངོ་མཚར་ཟད་མི་ཤེས་པ་ལུང་རྟོགས་ཀྱི།  
 ཡོན་ཏན་རིན་ཆེན་འབྱུང་གནས་གཏིང་དང་མཐའ།  
 རྒྱལ་ཀྱན་མཁྱེན་པའི་དཔལ་དང་ནམ་མཁའི་ཁྱོན།  
 ལྷན་ཅིག་མཉམ་པ་ཉིད་དུ་བཞིད་ལས་འདས།

བྱང་ངེས་རི་ཁྲུང་བཞོད་པ་མཐའ་ཡས་ཀྱང་།  
 རྟོན་པ་རྣམ་བཞིའི་མཁའ་ལ་ཁྲིང་བ་ཡི།  
 རྣམ་དཔྱད་གྲིབ་མ་མཐུན་པར་འཇུག་པ་ནི།  
 འགལ་བའི་གཙོང་རྩེ་བརྒྱ་ཡིས་དགག་དུ་མེད།  
 (ཐིམ་གསུང་གི་གསུང་འཇམ་མགོན་རྒྱལ་བའི་བསྐྱེད་པ། བོད། 'ཐ' ༤༠༣, ༤༠༤)

( क ) पञ्चमं परिशिष्टम्

श्लोकार्थानुक्रमणी

१. लोकातीतस्तवः

कारिका	श्लो०सं०	कारिका	श्लो०सं०
अज्ञाप्यमानं न ज्ञेयं	१.१०	नासतोऽश्वविषाणेन	१.१४
अतस्त्वया जगदिदं	१.१९	नित्यस्य संसृतिर्नास्ति	१.२०
अतस्त्वया महायाने	१.२७	निमित्तबन्धनापेतं	१.२८
अनिमित्तमनागम्य	१.२७	निरीहा वशिकाः शून्या	१.२४
अनिमित्तस्य विज्ञानं	१.१६	निरुद्धाद्वाऽनिरुद्धाद्वा	१.१८
अन्यत्वेऽधिगमाभाव	१.७	परस्मरापेक्षिकी तु	१.८
अर्थान्तरे भवेन्नित्यो	१.१५	परिज्ञातमसद्भूत	१.१९
आर्यैर्निषेवितामेना	१.२६	पृथक्त्वे हि भावस्य	१.१६
एकत्वेन हि भावस्य	१.१६	भावः स्वतन्त्रो नास्तीति	१.२२
कथं नाम न तत्स्पष्टं	१.४	भावान्नार्थान्तरो नाशो	१.१५
कर्ता स्वतन्त्रः कर्मापि	१.८	भूतान्यचक्षुर्ग्राह्याणि	१.५
तच्च वेद्यं स्वभावेन	१.६	मायामरीचिगन्धर्व	१.३
तयोरभावोऽनन्यत्वे	१.११	मायोत्पादवदुत्पादः	१.१८
तस्मात् स्वभावतो न स्तो	१.१०	यत्प्रतीत्य न तज्जातं	१.९
तार्किकैरिष्यते दुःखं	१.२१	यथा पूर्वं तथा पश्चात्	१.२५
तेऽपि स्कन्धास्त्वया धीमन्	१.३	यदवाप्तं मया पुण्यं	१.२८
न कर्तास्ति न भोक्तास्ति	१.९	यस्त्वं जगद्धितायैव	१.१
न त्वयोत्पादितं किञ्चिन्न	१.२५	यस्य तस्यामपि ग्राह	१.२३
न चाऽविनष्टात् स्वप्नेन	१.१७	यः प्रतीत्यसमुत्पादः	१.२२
न सतः स्थितियुक्तस्य	१.१४	रूपं त्वयैवं ब्रुवता	१.५
न सन्नृत्पद्यते भावो	१.१३	लक्ष्यलक्षणनिर्मुक्तं	१.१२
न स्वतो नापि परतो	१.१३	लक्ष्याल्लक्षणमन्यच्चेत्	१.११
नानिमित्तस्य विज्ञानं	१.२६	लोकातीत ! नमस्तुभ्यं	१.१

विनष्टात् कारणात्	१.१७	सर्वसंकल्पहानाय	१.२३
वेदनीयं विना नास्ति	१.६	संज्ञार्थयोरनन्यत्वे	१.७
शान्तं जगदिदं दृष्टं	१.१२	स्कन्धमात्रविनिर्मुक्तो	१.२
शान्तिस्तेऽधिगता नाथ!	१.५	स्वप्नवत् संसृतिः प्रोक्ता	१.२०
सत्त्वार्थं च परं	१.२	स्वयंकृतं परकृतं	१.२१
सर्वधर्मास्त्वया नाथ!	१.२४	हेतुतः संभवो येषां	१.४

## २. निरौपम्यस्तवः

अनाभोगेन ते लोके	२.२४	धर्मदृष्ट्या सुदृष्टोऽसि	२.१७
अनुत्तरा च ते नाथ!	२.२	धर्मधातोरसंभेदाद्	२.२१
अलक्षणं त्वया धीर	२.१६	धर्मधात्वविनिर्भेदाद्	२.६
अहो परमदुर्बोधां	२.३	न क्वचिद्राशितः	२.११
आकाशसमचित्तस्त्वं	२.८	न गतिर्नागतिः काचिद्	२.११
इति नानाविकल्पेषु	२.१०	न च नाम त्वया किञ्चिद्	२.२
इति सुगतमचिन्त्य	२.२५	न च रूपेण दृष्टेन	२.१७
इन्द्रायुधमिवाकाशे	२.१८	न तेऽस्ति मन्यना नाथ	२.२४
एकत्वान्यत्वरहितं	२.१३	न तेऽस्ति सक्तिः स्कन्धेषु	२.८
कर्मावरणदोषश्च	२.२०	न त्वयोत्पादितः कश्चिद्	२.४
कुशलमिह भवन्तु	२.२५	न बोद्धा न च बोद्धव्य	२.३
कृत्स्नश्च वैनैयजनो	२.७	न संसारापकर्षेण	२.५
क्लेशप्रकृतितश्चैव	२.१५	नामयो नाशुचिः काये	२.१९
च्युतिजन्माभिसंबोधि	२.२३	नित्यो ध्रुवः शिवः काय	२.२२
जन्मधर्मशरीराभ्यां	२.१२	निरौपम्य! नमस्तुभ्यं	२.१
त्वया लोकानुकम्पायै	२.२०	नोदाहृतं त्वया किञ्चिद्	२.७
त्वया लोकानुवृत्त्यर्थं	२.१९	यस्त्वं दृष्टिविपन्नस्य	२.१
त्वं विवेदैकरसतां	२.६	यानत्रितयमाख्यातं	२.२१
दुःखार्तेषु च सत्त्वेषु	२.९	लक्षणोज्ज्वलगात्रश्च	२.१६



लोकधातुष्वसंख्येषु	२.२३	सत्त्वसंज्ञा च ते नाथ	२.९
वासनामूलपर्यन्ताः	२.१५	समतादर्शनेनैव	२.४
विनेयजनहेतोश्च	२.२२	सर्वत्रानुगतश्चासि	२.१२
शास्वतोच्छेदरहितं	२.१४	संक्रान्तिनाशापगतं	२.१३
शान्तिस्तेऽधिगता	२.५	संसारमवबुद्धस्त्वं	२.१४
शौषिर्यं नास्ति ते काये	२.१८	सुखदुःखात्मनैरात्म्य	२.१०

### ३. अचिन्त्यस्तवः

अजाते न स्वभावोऽस्ति	३.१०	उत्पत्तिर्यस्य नैवास्ति	३.२९
अज्ञानेनावृतो येन	३.२१	उत्पन्नश्च स्थितो नष्टः	३.२५
अतस्तत्कृतकं सर्वं	३.७	उत्पन्नं च तथा विश्वं	३.३०
अथवा तत्क्रियाकर्ता	३.३४	उत्पन्नोऽपि न चोत्पन्नो	३.३०
अनालयमथाव्यक्त	३.३८	एकत्वादि तथानेक	३.१४
अनुत्पन्नाश्च तत्त्वेन	३.१७	एतत्तत्परमं तत्त्वं	३.५२
अन्तवान्नान्तवांश्चापि	३.४९	कल्पनाऽप्यसती प्रोक्ता	३.३६
अभिधानात्पृथग्भूत०	३.३५	कल्पनामात्रमित्यस्मात्	३.३६
अभीष्टमीजे त्रैलोक्ये	३.५३	कस्य नाशादतीतं	३.८
अमेयैश्चाप्रमेयाणां	३.३१	कारकोऽपि कृतोऽन्येन	३.३४
अस्तित्वे सति नास्तित्वं	३.१३	कृतकं वस्तु नो जातं	३.८
अस्तीति कल्पिते भावो	३.४६	को नाशः संभवो दृष्टो	३.२६
अस्तीति शाश्वती दृष्टि	३.२२	चतुष्कोटिविनिर्मुक्ता	३.२३
आत्मनश्च परेषां च	३.४२	जडत्वमप्रमाणत्व	३.२०
आदावेव शमं याताः	३.१७	जातं तथैव नो जात	३.२८
आपेक्षिकी तयोः सिद्धिः	३.११	जातास्तत्त्वविदो बाला	३.१९
इति मायादिदृष्टान्तैः	३.५१	ज्ञाने सति यथा ज्ञेयं	३.५०
इति स्तुत्वा जगन्नाथ	३.५९	तत्तत्त्वं परमार्थोऽपि	३.४१
इन्द्रियैरुपलब्धं यत्	३.१९	तत्त्वज्ञानेन नोच्छेदो	३.४७

तथाविधश्च सद्धर्म	३.४०	प्रज्ञापारमिताम्बोधे	३.५८
तदाकाश प्रतीकाशं	३.३९	प्रतीत्यजानां भावानां	३.१
तद्वत्प्रत्ययजं विश्वं	३.६	प्रत्ययेभ्यः समुत्पन्न	३.३
तद्वत् सर्वं जगत्	३.४८	फेनबुद्बुदमायाभ्र	३.१८
तं नमामि सदा बुद्ध	३.१	बुद्धानां सत्त्वधातोश्च	३.४२
तस्मात् प्रतीत्यजा भावा	३.४३	भावग्रहगृहीतानां	३.५२
ते च सत्त्वाश्च नो जाता	३.३२	भावाग्रहग्रहावेशः	३.१६
तेनान्तद्वयनिर्मुक्तो	३.२२	भावऽभावद्वयातीत	३.३७
देशयामास सद्धर्म	३.५१	भावेभ्यः शून्यता नान्या	३.४३
द्रव्यमुत्पद्यते यस्य	३.४९	भूतं तदविसंवादि	३.४१
धर्मयाज्ञिक! तेनैव	३.५३	भूतं तद्वस्तु नोद्भूतं	३.२४
धर्मयौतकमाख्यातं	३.५६	मायाकारकृतं यद्वद्	३.३३
न कैश्चिन्मोचितः कश्चिद्	३.३२	मायागजप्रकाशत्वाद्	३.२९
न च ज्ञानं न च ज्ञेयं	३.३७	मायामरीचिगन्धर्व	३.५
न चाकाशप्रतीकाशं	३.३९	मायामरीचिवच्चापि	३.४
न चोत्पन्नः स्थितो नष्टः	३.२५	मुक्तो बद्धस्तथाऽज्ञानी	३.२८
न सन्नासन्न सदसन्	३.९	मृगतृष्णाजलं यद्वत्	३.४८
न स्वभावोऽस्ति भावानां	३.१६	यत्रोभयमनुत्पन्नमिति	३.५०
नाममात्रं जगत् सर्वं	३.३५	यथा त्वया महायाने	३.२
नास्तित्वे सति चास्तित्वं	३.१३	यदवासं मया पुण्यं	३.५९
नास्ति वैकल्पितो भावः	३.४५	यदा नापेक्ष्यते किञ्चित्	३.१२
नास्तीति कृतकोच्छेदा	३.४६	यदा नापेक्ष्यते दीर्घं	३.१२
निःस्वभावास्त्वया धीमन्!	३.१८	यदोभयमनुत्पन्न	३.५०
नीतार्थमिति चोद्दिष्टं	३.५६	यद्यजाताः सह स्वप्नैः	३.५
नेयार्था सा मता नाथ!	३.५७	यद्वत् प्रतीत्यजाच्छब्दात्	३.४
नैरात्म्यसिंहनादोऽय	३.५४	यन्न चैकं न चानेकं	३.३८
नैःस्वभाव्यमहानादो	३.५५	यन्नोदेति न च व्येति	३.३९
पर इत्युच्यते योऽयं	३.१५	यः प्रतीत्यसमुत्पादः	३.४०
परतन्त्र इति प्रोक्तः	३.४४	या तूत्पादननिरोधादि	३.५७

रागादिकं तथा दुःखं	३.२७	संभवः सर्वभावानां	३.२६
रिक्तमुष्टि प्रतीकाश	३.७	संभारपूरणान्मुक्तिः	३.२७
लोकनार्थैर्हि सत्त्वानां	३.३१	स्वत एव हि यो नास्ति	३.१५
लोकस्तेन यथाभूत	३.२१	स्वत्वे सति परत्वं	३.११
वस्तुग्राहभयोच्छेदी	३.५४	स्वप्नेन्द्रकोद्भूतं	३.२४
वस्तु शून्यं जगत्सर्व	३.३३	स्वभावः प्रकृतिस्तत्त्वं	३.४५
वस्तुशून्यं जगत्सर्व	३.४७	सम्भवः सर्वभावानां	३.२६
विज्ञानस्याप्यविज्ञेया	३.२३	स्वभावाभावसिद्धयैव	३.१०
विदितं संदेशितं	३.२	स्वभावेन न तज्जात	३.३
विपरीतपरिज्ञान	३.२०	स्वस्मान्न जायते भावः	३.९
शून्यताधर्मगम्भीरा	३.५५	हेतुतः सम्भवो दृष्टो	३.२६
स पुण्यगुणरत्नाढ्य	३.५८	हेतुप्रत्ययसंभूतां	३.६
संक्लेशो व्यवदानं च	३.१४	हेतुप्रत्ययसंभूता	३.४४

#### ४. परमार्थस्तवः

अनुत्पन्नस्वभावेन	४.३	न नित्यो नाप्यनित्यस्त्व	४.४
अप्रमाणगतिं प्राप्तो	४.६	न पीतो कृष्णः शुक्लो वा	४.५
अस्थितः सर्वधर्मेषु	४.८	न भावो नाप्यभावोऽसि	४.४
एवं स्तुते स्तुतो भूया	४.९	न महान् नापि ह्रस्वोऽसि	४.६
कथं स्तोष्यामि ते नाथ	४.१	न संसारे न निर्वाणे	४.७
कस्त्वां शक्नोति संस्तोतु	४.१०	न रक्तो हरितमाञ्जिष्ठो	४.५
तथापि यादृशो वाऽसि	४.२	परां गम्भीरतां प्राप्तो	४.८
तेन पुण्येन लोकोऽयं	४.११	यस्य नान्तो न मध्यं वा	४.१०
न गतं नागतं स्तुत्वा	४.११	लोकप्रज्ञप्तिमागम्य	४.२
न गतं नागतं स्तुत्वा	४.११	लोकोपमामतिक्रान्तं	४.१
न गतिर्नागतिर्नाथ!	४.३	शून्येषु सर्वधर्मेषु	४.९
न दूरे नापि चासन्ने	४.७		



लक्ष्मीधरः कांचनपर्वताभस्त्रिलोकनाथस्त्रिमलप्रहीणः ।  
बुद्धो विबुद्धाम्बुजपत्रनेत्रस्तन्मंगलं भवतु शान्तिकरं तवाद्य ॥

ཐུན་སུམ་ཚོགས་པ་མངའ་བ་གསལ་གྱི་རི་བོ་འདྲ། །  
འཇིག་རྟེན་གསུམ་གྱི་མགོན་པོ་འཇིག་གསུམ་སྤངས་པ། །  
སངས་རྒྱལ་པ་ལྷ་འདབ་མ་རྒྱལ་འདྲེ་སྐྱོན་མངའ་བ། །  
དེ་ནི་དེ་རིང་ཁྱོད་ལ་ཞི་བྱེད་བགྲིས་ཤོག། །

तेनोपदिष्टः प्रवरस्त्वकम्प्यः ख्यातस्त्रिलोके नरदेवपूज्यः ।  
धर्मोत्तमः शान्तिकरः प्रजानां तन्मंगलं भवतु शान्तिकरं तवाद्य ॥

དེ་ཡིས་ཉེ་བར་བསྐྱན་པའི་མཚོག་རབ་མི་གཡོ་བ། །  
འཇིག་རྟེན་གསུམ་ན་གྲགས་ཤིང་ལྷ་དང་མིས་མཚོད་པ། །  
ཚོས་གྱི་དམ་པ་སྐྱེ་དགུ་རྣམས་ལ་ཞི་བྱེད་པ། །  
དེ་ནི་དེ་རིང་ཁྱོད་ལ་ཞི་བྱེད་བགྲིས་ཤོག། །

सद्धर्मयुक्तः श्रुतिमंगलाढ्यः संघो नृदेवासुरदक्षिणीयः ।  
श्रीह्रीनिवासः प्रवरो गणानां तन्मंगलं भवतु शान्तिकरं तवाद्य ॥

དགེ་འདུན་དམ་པའི་ཚོས་ལྷན་ཐོས་པའི་བགྲིས་སྤྱག། །  
མི་དང་ལྷ་དང་ལྷ་མ་ཡིན་གྱི་མཚོད་པའི་གནས། །  
ཚོགས་གྱི་མཚོག་རབ་འོ་ཆ་ཤེས་དང་དཔལ་གྱི་གཞི། །  
དེ་ནི་དེ་རིང་ཁྱོད་ལ་ཞི་བྱེད་བགྲིས་ཤོག། །

( क्रियासमुच्चय, पृ० १७१ )  
(བྱ་བ་བསྐྱུས་པ། ལྷུང་། བྱ་ ༡༢༢)

(ख) पंचमं परिशिष्टम्

### श्लोकसूची ( भोटपाठः )

(१) འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པར་བསྐྱོད་པ།      लोकातीतस्तवः

ཙ་གཞུང་། कारिका	ཆིགས་བཅད་ཨང་རིམ། श्लोक सं०	ཤོག་གངས། पृष्ठ सं०
ཀྱན་རྟོག་ཐམས་ཅད་...	༣༣	༡༥
ཁྱེད་ཀྱིས་ཅུང་ཞིག་...	༣༤	༡༦
གང་དག་རྒྱ་ལས་...	༥	༣
དངོས་དང་འཇིག་པ་...	༡༥	༡༠
དངོས་པོ་ཡོད་པ་...	༡༣	༩
གཅིག་ཉིད་ཡིན་སྲིད་...	༡༦	༡༡
རྟག་ལ་འཁོར་བ་...	༣༠	༡༣
རྟོན་ཅིང་འབྲེལ་བར་...	༣༣	༡༥
བསྐྱོད་པའི་སྐྱོད་ཁྱེད་...	༣༤	༡༤
དེ་སྲིད་ཁྱེད་ཀྱིས་...	༡༩	༡༣
སྐྱག་བཟུལ་རང་གིས་...	༣༡	༡༣

ॐ गुरु । कारिका	कैरासः पठनः अन्तः ३५ श्लोक सं०	पञ्च पञ्च पृष्ठ सं०
अध्यासः पञ्च पञ्च	३५	१०
धुः पञ्च पञ्च	३	३
वेमः पञ्च पञ्च	३८	१५
धुः पञ्च पञ्च	९	५
धुः पञ्च पञ्च	५	५
अध्यासः पञ्च पञ्च	५	८
धुः पञ्च पञ्च	३	३
वेमः पञ्च पञ्च	१	१
धुः पञ्च पञ्च	१०	५
धुः पञ्च पञ्च	५	८
धुः पञ्च पञ्च	१३	५
धुः पञ्च पञ्च	११	१०
धुः पञ्च पञ्च	३०	१०
धुः पञ्च पञ्च	१५	१३
धुः पञ्च पञ्च	१८	९
धुः पञ्च पञ्च	१०	११
धुः पञ्च पञ्च	१०	१०



(३) दधे भेद पद वक्ष्येत्

निरौपम्यस्तवः

कारिका	श्लोक सं०	पृष्ठ सं०
कुं वल्लभा		
कारिका		
गुणं गुणैः सु...	१३	३५
गुणं गुणैः सु...	१४	३०
गुणं गुणैः सु...	१५	३०
गुणं गुणैः सु...	१६	३१
गुणं गुणैः सु...	१७	३०
गुणं गुणैः सु...	१८	३३
गुणं गुणैः सु...	१९	३१
गुणं गुणैः सु...	२०	३१
गुणं गुणैः सु...	२१	३३
गुणं गुणैः सु...	२२	३३
गुणं गुणैः सु...	२३	३३
गुणं गुणैः सु...	२४	३५
गुणं गुणैः सु...	२५	३५
गुणं गुणैः सु...	२६	३५
गुणं गुणैः सु...	२७	३५
गुणं गुणैः सु...	२८	३५
गुणं गुणैः सु...	२९	३५
गुणं गुणैः सु...	३०	३५
गुणं गुणैः सु...	३१	३५
गुणं गुणैः सु...	३२	३५
गुणं गुणैः सु...	३३	३५
गुणं गुणैः सु...	३४	३५
गुणं गुणैः सु...	३५	३५

उ. म. १। कारिका	ऊँ म. व. उ. द. १. २। श्लोक सं०	म. म. १। पृष्ठ सं०
ऊँ म. उ. द. व. उ. द. १।	३३	३३
ऊँ म. द. उ. द. १।	१८	३७
द. म. उ. द. व. उ. द. १।	३५	३८
द. म. द. उ. द. १।	३	३०
व. म. उ. द. व. उ. द. १।	१०	३८
द. म. उ. द. व. उ. द. १।	१७	३५
व. म. उ. द. व. उ. द. १।	७	३३
व. म. उ. द. व. उ. द. १।	१७	३९
व. म. उ. द. व. उ. द. १।	३०	३१

(३) व. म. उ. द. व. उ. द. १। अचिन्त्यस्तवः

ऊँ म. उ. द. व. उ. द. १।	३५	५१
ऊँ म. उ. द. व. उ. द. १।	३	३५
ऊँ म. उ. द. व. उ. द. १।	३०	५८
व. म. उ. द. व. उ. द. १।	३१	८९
व. म. उ. द. व. उ. द. १।	८९	७७
व. म. उ. द. व. उ. द. १।	१३	८३

उ.पाठः। कारिका	ऊँपा.सू.सं.० श्लोक सं०	मंजु.पाठः। पृष्ठ सं०
पा.के.पु.स.प.रि...	५	८१
पा.वि.पा.द.स.प.रि...	१	३०
पा.पा.सं.सं.द.सं...	५०	१०
पा.पा.सं.सं.सं...	३९	५९
पा.पा.सं.सं.सं...	३५	५९
पा.पा.सं.सं.सं...	३९	५८
सं.द.सं.सं.सं...	८८	८८
सं.सं.द.सं.सं...	५	३९
दं.सं.सं.द.सं...	८५	८३
दं.सं.सं.द.सं...	५३	८०
दं.सं.द.सं.सं...	३०	५५
दं.सं.सं.सं.सं...	१८	८८
दं.सं.सं.सं.सं...	८३	८३
दं.सं.पा.सं.सं...	१५	८५
दं.सं.सं.सं.सं...	५८	८९
पा.सं.सं.सं.सं...	१८	८८
सं.सं.सं.सं.सं...	३	३५



उ. म. ७८।

कारिका

कैवर्षः वत्सलः २३।

श्लोक सं०

पद्मः वत्सलः

पृष्ठ सं०

दे. म. ७८।

७

८०

दे. म. ७८।

३७

५३

दे. म. ७८।

८

३५

दे. म. ७८।

३३

५७

दे. म. ७८।

८५

७५

दे. म. ७८।

१३

८८

दे. म. ७८।

३१

५५

दे. म. ७८।

५५

७७

दे. म. ७८।

८७

७८

दे. म. ७८।

३३

५५

दे. म. ७८।

५१

७७

दे. म. ७८।

५७

७३

दे. म. ७८।

८०

७०

दे. म. ७८।

८१

७१

दे. म. ७८।

३७

५७

दे. म. ७८।

३५

५३

दे. म. ७८।

३७

५३

कारिका	श्लोक सं०	पृष्ठ सं०
उक्तं चकार।		
देवः कः कः कः...	५३	७५
देवः कः कः कः...	३३	५०
यद्विदः सः विदः कः...	१७	८७
विदः दः सः सः...	३५	५७
विदः पः सः दः...	७	८०
विदः पः पः सः...	३८	५६
विदः सः सः सः...	१५	८७
दः सः पः कः सः...	१९	८५
दः सः पः कः सः...	३०	८५
सः सः सः पः...	१०	८३
सः सः सः सः...	३८	५१
सः दः सः सः...	८७	७८
सः सः सः पः...	३३	८९
सः सः सः सः...	११	८३
सः सः सः सः...	९	८१
सः सः सः सः...	५०	७७
सः सः सः सः...	५५	७१

उ'म'बु'द'।

ऊँ'म'स'व'उ'द'ज'द'रे'म'

पै'म'स'द'स'

कारिका

श्लोक सं०

पृष्ठ सं०

स'द'स'सु'स'व'सु'न'प'...

५७

१०

स'द'स'सु'स'क्ष'म'स'द'...

८३

७३

(८) दै'न'द'म'प'र'व'ञ्छे'द'प' परमार्थस्तवः

सु'द'द'ल'ई'म'प'...

१०

१५

सु'व'म'द'उ'द'...

१

१३

सु'व'म'द'प'रि'...

३

१८

द'द'स'म'द'म'ल'म'स'...

८

१८

ऊँ'न'प'म'ल'म'स'...

७

१५

ऊँ'स'क्ष'म'स'गु'न'ल'...

५

१७

दे'ल'न'क'य'द'...

३

१३

दे'ल'रि'व'ञ्छे'द'प'स'...

१२

११

द'म'र'द'द'ल'द'द'...

५

१५

द'द'म'न'क'उ'व'...

१०

१७

म'म'म'स'द'द'सु'न'प'...

११

१५

स'द'म'क्ष'म'स'





